उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी

वैदिक सृष्टि विज्ञान में प्रमाणपत्र

CVC-20

प्राच्य एवं पाश्चात्य मत में ब्रह्माण्डविज्ञान

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139

Toll Free : **1800 180 4025**

Operator : **05946-286000**

Admissions : **05946-286002**

Book Distribution Unit : **05946-286001**

Exam Section : **05946-286022**

Fax : **05946-264232**

Website : ***http://uou.ac.in***

अध्ययन मण्डल

कुलपति (अध्यक्ष)
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
प्रो0 देवीप्रसाद त्रिपाठी, कुलपति
उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार
प्रो0 विनय कुमार पाण्डेय
अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी
प्रो0 रामराज उपाध्याय
अध्यक्ष, पौरोहित्य विभाग, श्री ला.बा.शा.क्रे.स.वि.वि. नई दिल्ली
प्रो0 एच0 पी0 शुक्ल (संयोजक)
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी (असि0 प्रोफे0)
पाठ्यक्रम समन्वयक, ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 प्रभाकर पुरोहित
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ 0 प्रभाकर पुरोहित
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

सम्पादक	**सह सम्पादन**
डॉ 0 प्रभाकर पुरोहित असिस्टेन्ट प्रोफेसर, ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**डॉ 0 नीरज कुमार जोशी** असिस्टेन्ट प्रोफेसर,संस्कृत विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
इकाई लेखन	**खण्ड एवं इकाई संख्या**
डॉ0 अशोक थपलियाल, एसोसिएट प्रोफेसर वास्तु विभागाध्यक्ष ,श्री लाल बहादुर शास्त्री केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	**प्रथम एवं द्वितीय खण्ड**
डॉ0 प्रभाकर पुरोहित असिस्टेन्ट प्रोफेसर, ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**तृतीय खण्ड**

प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

कॉपीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

पुस्तक का शीर्षक -प्राच्य एवं पाश्चात्य मत में ब्रह्माण्डविज्ञान

मुद्रक : **प्रकाशन वर्ष : 2023**

यह पुस्तक छात्र हित में शीघ्रता के कारण, प्रकाशित की गयी है । संशोधित व परिवर्द्धित संस्करण का प्रकाशन पाठ्यक्रम के पूर्ण लेखन व सम्पादन के पश्चात् किया जायेगा । इसका उपयोग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखितअनुमति के बिना अन्यत्र किसी भी रूप में नहीं किया जा सकता।

अनुक्रम

खण्ड 1.ब्रह्माण्ड की अवधारणा	**पृष्ठ संख्या**	**1- *4***
इकाई *01*- ब्रह्माण्डोद्भव		*5-25*
इकाई *02*- विश्वकर्मा द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति		*26-43*
इकाई *03*- विराट् पुरुष द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति		*44-65*
इकाई *04* - ब्रह्मा द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति		*66-82*
इकाई *05* - प्रजापति द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति		*83-100*
खण्ड *2.* सृष्टि एवं ब्रह्माण्ड के आधुनिक अवधारणा		***101***
ईकाई*1* – स्थिर दशा सिद्धान्त		*102-121*
ईकाई – 2 . विस्फोट सिद्धान्त		*122-145*
ईकाई *3*– स्पन्दनशील सिद्धान्त		*146-167*
ईकाई *4*– प्राचीन एव आधुनिक सिद्धान्तों की तुलना		*168-191*
खण्ड *3.*ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्य		***192***
इकाई-1 आकाशगंगा		*193-198*
इकाई-2 निहारिका		*199-204*
इकाई-3 तारापुंज एवं तारें		*205-214*
इकाई-4 सौर परिवार		*215-242*
इकाई-5 पृथ्वी		*243-246*

वैदिक सृष्टि विज्ञान में प्रमाणपत्र

द्वितीयपत्र *CVC-102*

खण्ड 1.ब्रह्माण्ड की अवधारणा

ईकाई -1 ब्रह्माण्डोद्भव

पाठ संरचना

1.1 प्रस्तावना

*1.*2 उद्देश्य

*1.*3 परिभाषा

*1.*4 प्राचीन मत में ब्रह्माण्ड

*1.*4.1 नासदीय सूक्त

*1.*4.2 ब्रह्माण्डोत्पत्ति के भारतीय सिद्धान्त

*1.*4.2.1 विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि

*1.*4.2.2 ब्रह्मा द्वारा सृष्टि

*1.*4.2.3 विराटपुरुष द्वारा सृष्टि

*1.*4.2.4 प्रजापति द्वारा सृष्टि

1.5 आधुनिक मत में ब्रह्माण्ड

*1.*5.1 स्थिरदशा सिद्धान्त

*1.*5.2 विस्फोट सिद्धान्त

*1.*5.3 स्पन्दनशील सिद्धान्त

1.6 सारांश

1.7 कठिन शब्द

1.7.1 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.7.2 व्याख्यात्मक प्रश्न

1.8 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थसूची

1.1 प्रस्तावना

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति कब और कैसे हुई, इसका उत्तर स्पष्ट शब्दों में कोई नहीं दे सकता। जिज्ञासुओं ने इस प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए कई प्रयत्न किए हैं। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल पर्यन्त इस जिज्ञासा की पूर्ति हेतु मनुष्य आकाश में स्थित खगोलीय पिण्डों को निहारता आया है। प्रस्तुतप्रमाणों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि हमारे पूर्वज भी ब्रह्मांड के प्रति उतने ही जिज्ञासु थे, जितने आज हम हैं। सभ्यता के प्रारंभ से ही मनुष्य दिन में आँखों को चकाचौंध कर देने वाले सूर्य और रात में निरभ्र आकाश को अपनी मुलायम चांदनी से सुशोभित कर देने वाले चन्द्रमा तथा उसके साथ-साथ आकाश में स्थित असंख्य टिमटिमाते तारों एवं अन्य खगोलीय घटनाओं को देखकर रोमांचित होता रहा है। प्राचीन काल से ही मनुष्य ने सूर्योदय से सूर्यास्त तक, चन्द्रमा की घटती-बढ़ती कलाओं और ऋतु परिवर्तन जैसी प्राकृतिक घटनाओं के माध्यम से समय की गणना करने का प्रयास किया। इन आकाशीय घटनाक्रमों ने मनुष्य के सामाजिक और धार्मिक जीवन को भी पर्याप्त मात्रा में प्रभावित किया। भारतीय वैदिक विज्ञान में ब्रह्मांड की व्याख्या के तथ्य इस धारणा पर आधारित थे कि सारी भौतिक और प्राकृतिक क्रियाएं पंचमहाभूतों पर ही निर्भर हैं। इसी सिद्धान्त की पुष्टि हमें सर्वप्रथम तैत्तिरीयोपनिषद् में प्राप्त होती है। तैत्तिरीयोपनिषद् में पञ्चमहाभूतों की क्रमशः उत्पत्ति को वर्णित किया गया है, जिसका विस्तृत अध्ययन आप प्रस्तुत पाठ में करेंगे।

भारतीय ग्रन्थों में ब्रह्माण्ड की महत्ता सर्वाधिक शक्तिसम्पन्न एवं सबसे विस्तृत विषय के रूप में बताई गई है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के विषय में वेदों से लेकर पुराणों तक, सभी ग्रन्थों में इसका वर्णन हमें मिलता है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति ही सृष्टि की उत्पत्ति का बीज है, इस प्रकार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को ही सृष्टि की उत्पत्ति भी कहा जाता है। ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्त सर्वप्रथम वैदिक साहित्य में हमें प्राप्त होते हैं, ऋग्वेद में नासदीयसूक्त, पुरुषसूक्त आदि ब्रह्माण्डोत्पत्ति के महत्वपूर्ण सूक्त हैं, जिनमें सृष्टिवर्णन विस्तार से किया गया है। आधुनिक विज्ञान भी इन्हीं सिद्धान्तों को आधार मानकर लगातार अनुसंधान कर रहा है। प्राचीन भारतीय तथा पाश्चात्य आधुनिक विज्ञान ब्रह्माण्डोत्पत्ति के संबन्ध में, कुछ वैज्ञानिक अनुभवों के आधार पर, कुछ सिद्धान्तों का वर्णन करते हैं। इस इकाई में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के उन्हीं प्राचीन तथा आधुनिक सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है। हम प्रस्तुतअध्याय में ब्रह्माण्ड एवं उसकी परिभाषा तथा उसकी

उत्पत्ति के प्राचीन और आधुनिक सिद्धान्तों के विषय में अध्ययन करेंगे। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति किस प्रकार हुई यह अभी तक भी एक रहस्य बना हुआ है, फिर भी विद्वानों ने इसे समझने का प्रयास अवश्य किया है। भारतीय तथा आधुनिक दोनों ही इस विषय पर अलग-अलग विचारों को प्रस्तुत करते हैं, परन्तु इस विषय पर विद्वानों में मतवैभिन्य मिलता है। इस अध्याय में हम प्राचीन और आधुनिक दोनों विचारों के आधार पर ब्रह्माण्डोद्भव के कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का अध्ययन करेंगे।

1.2 अध्ययन का उद्देश्य

- प्रस्तुत अध्ययन से हम ब्रह्माण्ड की परिभाषा व अर्थ को जान सकेंगे।
- ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के विषय मेंप्रसिद्ध नासदीय सूक्त के सिद्धान्त को समझ सकेंगे।
- प्राचीन भारतीय ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्तों को पढेंगे।
- आधुनिकब्रह्माण्डोत्पत्ति के प्रमुख सिद्धान्तों का अध्ययन करेंगे।
- प्राचीन भारतीय तथा आधुनिकब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्तों को विस्तार समझ सकेंगे।

1.3 ब्रह्माण्ड की परिभाषा तथा अर्थ

"यस्मिन् भाण्डे ग्रहनक्षत्रताराऽकाशगङ्गोल्का-धूमकेतुदैत्यमानवदेवादयः समस्ताः जीवादयो भूर्भुवादिचतुर्दशलोकाश्च समन्विताः सन्ति तदेव ब्रह्माण्डम्" भुवनकोशविमर्श की इस परिभाषा के अनुसार जहाँग्रह, नक्षत्र, तारे, आकाशगङ्गा, उल्काएं, धूमकेतु, दैत्य, मानव, देवता आदि समस्त जीवादियों की सृष्टियां तथा भूर्भुवादि चतुर्दशलोकविद्यमान हैं वह ब्रह्माण्ड कहलाता है। चतुर्दश लोकों मेंभू-भुव-स्व-मह-जन-तप-सत्य ये सात ऊर्ध्वलोक तथा अतल-वितल-सुतल-तलातल-रसातल-महातल-पाताल ये सात अधोलोक कहलाते हैं। वाचस्पत्यम् में ब्रह्माण्ड की परिभाषा और अर्थ कुछ इस प्रकार दिया गया है –

तदण्डमभवद्धैमं सहस्रांशुसमप्रभम्।

तस्मिन् यज्ञे स्वयं ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः।।

अर्थात् वह अण्ड जिसमें सहस्रों ज्योतिपुञ्ज विद्यमान हैं, इस अण्ड में सृष्टियज्ञ करने वाले सभी लोकों के पितामह ब्रह्मा हैं। वे ही सभी प्रकार की सृष्टियां रचते हैं। अतः जिस अण्ड में ब्रह्मा समस्त प्रकार की सृष्टियों का सृजन करते हैं, उस अण्ड को ब्रह्माण्ड कहते हैं। आधुनिक पाश्चात्य जगत में ब्रह्माण्ड को यूनीवर्स (*Universe*)कहा जाता है। आधुनिक विद्वानों के अनुसार –**"ब्रह्माण्ड समय और अन्तरिक्ष की अन्तर्वस्तु को कहते हैं। ब्रह्माण्ड में सभी ग्रह, तारे, मन्दाकिनी, खगोलीय पिण्ड, अपरमाणविक कण, सम्पूर्ण पदार्थ और ऊर्जा सम्मिलित है। अवलोकन योग्य ब्रह्माण्ड का व्यास वर्तमान में लगभग 91.1 अरब प्रकाश वर्ष है, पूरे ब्रह्माण्ड का व्यास अभी अज्ञात है, और हो सकता है कि यह अनन्त हो"।**

समस्त प्रकार का दृश्य एवं अदृश्य जगत ब्रह्माण्ड से ही उत्पन्न होता है, तथा ब्रह्माण्ड में ही समाहित हो जाता है। ब्रह्माण्ड को भारतीय ज्ञान परम्परा में परब्रह्म परमात्मा की प्रथम संरचना कहा गया है। ब्रह्माण्डोत्पत्ति का सिद्धान्त ही भारतीय ज्ञान परम्परा में सृष्टिविज्ञान का सूत्रपात करता है। इस प्रकार उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि ब्रह्माण्ड वह सत्ता है जो समस्त सृष्टि का मूल है और समग्र सृष्टि इसी ब्रह्माण्ड के भीतर समाहित भी है। तैत्तिरीयोपनिषद् की परिभाषा से भी यही स्पष्ट होता है। उसके अनुसार आकाश सर्वव्यापक तथा सर्वशक्तिमान् सत्ता है, आकाश के भीतर वायुतत्त्व उत्पन्न होता है, वायु के अन्दर अग्नितत्त्व, अग्नि के भीतर जलतत्त्व तथा जल के अन्दर पृथ्वीतत्त्व उत्पन्न होता है। इन पांच तत्त्वों कों दशाङ्गुलन्याय द्वारा समझते हैं, तो पृथ्वी से दश गुणा अधिक जल है, जल से दशगुणा अधिक अग्नि, अग्निसे दशगुणा अधिक वायु तथा वायु से दशगुणा अधिक आकाश की सत्ता है। ये पांचों तत्त्व क्रमशः इसी ब्रह्माण्ड के अंग हैं और इन्हीं की क्रमशः उत्पत्ति भारतीय ज्ञान-विज्ञान वाङ्मय में सृष्टि कहलाती है।

1.4 प्राचीन मत में ब्रह्माण्ड

वस्तुतःप्रारम्भिक सभ्यताओं ने अपनी कोरी आँखों से आकाश का जितना भी अवलोकन किया है, वह सब पृथ्वी, आकाश और ब्रह्माण्ड संबंधी उर्वर कल्पना शक्ति और सत्य के बारे में उनकी जिज्ञासा का ही परिणाम था। प्राचीन विश्व के अलग-अलग कोनों में ब्रह्मांड विषयक अलग-अलग विचारधाराएं प्रचलित थीं। भारत का प्राचीन ज्ञान-विज्ञान वेद नाम से प्रसिद्ध है, अतः वैदिक साहित्य में ब्रह्मांड की उत्पत्ति तथा

संचालन जिन नियमों से माना जाता है, ऋग्वेद में उसे ऋत् की संज्ञा दी गयी। ऋग्वेद में ब्रह्माण्डोत्पत्ति का वर्णन मिलता है –

ऋतञ्च सत्यञ्चभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्याजायत ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।

ऋग्वेद के दशम मण्डल का सृष्टिविषयक यह मन्त्र बताता है कि ईश्वर की इच्छा से सर्वप्रथम प्रज्वलित तप से ऋत और सत्य उत्पन्न हुए। इसके बाद रात तथा दिन उत्पन्न हुए, उसके पश्चात् जलपूर्ण सागर उत्पन्न हुए, जलपूर्ण सागर से संवत्सर उत्पन्न हुए, इसके बाद ईश्वर ने क्रमशः सूर्य और चन्द्रमा को बनाया इसके बाद द्युलोक पृथिवीलोक तथा अन्तरिक्षलोक को बनाया।

तैत्तिरीयोपनिषद् में सृष्टिविषयक वर्णन कुछ इस प्रकार मिलता है –

एतस्मादात्मन आकाश सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी। पृथिव्या ओषधयः। ओषधेभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः।

सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ। पश्चात् आकाश से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी, पृथिवी से औषधियां, औषधियों से अन्न, अन्न से पुरुष उत्पन्न हुआ। यही क्रम प्रायः संस्कृतसाहित्य के अन्य वैज्ञानिक तथा दार्शनिक ग्रन्थों में भी मिलता है। पृथ्वी-जल-तेज-वायु-आकाश ये पञ्चमहाभूत सृष्ट्युत्पत्ति का मूल माने गए हैं। सत्त्व, रज और तम इन तीन गुणों की साम्यावस्था का नाम प्रकृति है। इन तीन गुणों के आपसी सम्मेलन से प्रकृति में विकार उत्पन्न होता है, यही विकार सृष्टि कहलाती है। ये सर्वप्रथम पञ्चमहाभूतों में परिणत होकर समग्र सृष्टि का सृजन करते हैं। यही पञ्चमहाभूत सम्पूर्ण भारतीय दार्शनिक परम्परा में सृष्टि प्रक्रिया के प्रमुख सिद्धान्त भी हैं। सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्वमीमांसा तथा वेदान्त ये छः वैदिक (आस्तिक) और बौद्ध, जैन, चार्वाक् आदि अवैदिक (नास्तिक) दर्शन, सभी इन पञ्चमहाभूतों पर विचार अवश्य ही करते हैं। वैदिक ब्रह्माण्डोत्पत्ति सिद्धान्त का विस्तृत वर्णन वेदान्त दर्शन में सृष्टि के सात आवरणों के माध्यम से मिलता है, जिसे दशाङ्गुलन्याय नाम से भी जाना जाता है। इसके अनुसार पृथ्वी से दशगुना जल, जल से दशगुना अग्नि, अग्नि से दशगुना वायु, वायु से दशगुना आकाश, आकाश से दशगुना अहंकार, अहंकार से दशगुना महत्तत्त्व,

महत्तत्त्व से दशगुना मूलप्रकृति और यह मूलप्रकृति भगवान के एक पाद में है। उपर्युक्त परिकल्पनाओं के अतिरिक्त भी वैदिक साहित्य में अन्य सिद्धान्त प्रमुखता से मिलते हैं। पुरुष सूक्त तथा नासदीय सूक्त ये दोनों प्रसिद्ध वैदिक सूक्त हैं, तथा ये ब्रह्माण्डोत्पत्ति सिद्धान्त को विस्तार से परिभाषित करते हैं। नासदीय सूक्त सृष्टि से पूर्व के पक्षों पर ध्यानाकर्षित करता है तथा यह सूक्त वैदिक चिन्तन की उस पराकाष्ठा को दर्शाता है जिसमें सृष्टि के कारण विद्यमान हैं।

1.4.1 नासदीय सूक्त

नासदासीन्नो सदासात्तदानीं नासीद्रजो नोव्योमा परोयत्।

किमावरीवः कुहकस्य शर्मन्नम्भः किमासीद् गहनं गभीरम् ॥१॥

उस समय अर्थात् सृष्टि की उत्पत्ति से पहले प्रलय की दशा में न सत् था न असत् था। उस समय न लोक थे और न अन्तरिक्ष था। और न ढकने योग्य पदार्थ था कहीं भी न कोई प्राणी था और न ही कोई सुख पहुंचाने वाला भोग था। उस समय गहन गम्भीर जल भी नहीं था।

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अह्न आसीत्प्रकेतः।

अनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न पर किंचनास ॥२॥

उस प्रलयकालिक समय में मृत्यु नहीं थी, और अमृत अर्थात् मृत्यु का अभाव भी नहीं था। न रात्रिथी और न दिन का ज्ञान था। उस समय वह ब्रह्मतत्त्व ही केवल प्राण युक्त, क्रिया से शून्य और माया के साथ जुड़ा हुआ एक रूप में विद्यमान था। उस माया सहित ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था और उस से परे भी कुछ नहीं था।

तम आसीत्तमसा गूढमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदं।

तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिमनाजायतैकं॥३॥

सृष्टिके उत्पन्नहोनेसे पहले अर्थात् प्रलय अवस्था में यह जगत् अन्धकार से आच्छादित था और यह जगत तमसरूप मूल कारण में विद्यमान था। यह सम्पूर्णजगत् जल रूप में अज्ञात था। अर्थात् उस समय कार्य और कारण दोनों मिले हुए थे और यह सम्पूर्ण जगतअभाव रूप अज्ञान से आच्छादित था। तब कारण के साथ कार्य एकरूप होकर यह जगत् ईश्वर के संकल्प और तप की महिमा से उत्पन्न हुआ।

कामस्तदग्रे समवर्ततााधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्।

सतो बन्धुमसति निरविन्दन्हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ॥४॥

परमेश्वर के मन में सर्वप्रथम काम उत्पन्न हुआ अर्थात् सृष्टि की उत्पत्ति की इच्छा हुई, जो परमेश्वर के मन मे सबसे पहला बीज रूप कारण बनी।भौतिक रूप से विद्यमान जगतके बन्धन-कामरूप कारण को क्रान्तदर्शी ऋषियो ने अपने ज्ञान द्वारा भावनामय स्थिति में विलक्षण सत् और असत्के रूप में खोजा।

तिरश्चीनो विततेरश्मिरेषामधः स्विदासी३दुपरि स्विदासी३त्।
रेतोधा आसन्महिमान आसन्त्स्वधा अवस्तात्प्रयतिः परस्तात् ॥५॥

पूर्वोक्त मन्त्रों में वर्णित **नासदासीत् कामस्तदग्रे मनसारेतः** में अविद्या, काम-संकल्प और सृष्टि बीज-कारण में सूर्य-किरणों के समान बहुत व्यापकता विद्यमान थी। आकाशादि की सृष्टि करने वाले परमात्मा के तेज की किरणें सबसे पहले तिरछी थी, नीचे की और विद्यमान थी या ऊपर थी? इस विषय में वह सर्वत्र समान भाव से उत्पन्न था। इस प्रकार इस उत्पन्न जगत् में कुछ पदार्थ बीज रूप कर्म को धारण करने वाले जीव रूप में थे और कुछ तत्त्व आकाशादि महान रूप में प्रकृति रूप थे। उस समय भोग्य पदार्थ निम्नतर थे तथा भोक्ता पदार्थ उत्कृष्टता से परिपूर्ण थे।

को अद्धा वेद क इह प्र वोचत्कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः।
अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथ को वेद यत आबभूव ॥६॥

कौन इस बात को वास्तविक रूप से जानता है और कौन इस लोक में सृष्टि के उत्पन्न होने के विवरण को बता सकता है कि यह विविध प्रकार की सृष्टि किस उपादान कारण से और किस निमित्त कारण से सब ओर उत्पन्न हुई? देवता भी इस विविध प्रकार की सृष्टि उत्पन्न होने से बाद के हैं अतः ये देवगण भी अपने से पहले की बात के विषय में नहीं बता सकते। इसलिए कौन जानता है किकिस कारण यह सारा संसार उत्पन्न हुआ?

इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वा दधे यदि वा न।
यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्त्सो अंग वेद यदि वा न वेद ॥७॥

यह विविध प्रकार की सृष्टि जिस के उपादान और निमित्त कारण से उत्पन्न हुयी इस का मुख्य कारण है, ईश्वर के द्वारा इसे धारण करना। इस सृष्टि का जो स्वामी ईश्वर है, वह अपने प्रकाश या आनंद स्वरूप में प्रतिष्ठित है। वह आनंद स्वरूप परमात्मा भी इस विषय को अर्थात् सृष्टि की उत्पत्ति आदि विषयों को जानता है भी अथवा नहीं?उसके अतिरिक्त (इस सृष्टि उत्पत्ति तत्व को) कोई नहीं जान सकता है।

इस प्रकार नासदीयसूक्त सृष्ट्युत्पत्ति पर गहन चिन्तन प्रस्तुत करता है। इस सूक्त का कथन ऋषियों की दृष्टि से सृष्टि के कारण, व्यापकता और गम्भीरता पर प्रकाश डालता है।

1.4.2. ब्रह्माण्डोत्पत्ति के भारतीय सिद्धान्त

वैदिक तथा पौराणिक वाङ्मय के अध्ययन के आधार पर स्पष्ट होता है कि भारतीय साहित्य वाङ्मय में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्त पर्याप्त मात्रा में विद्यमान हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के जो प्रमाण प्रायः प्राप्त होते हैं, उन सभी प्रमाणों के विमर्श के आधार पर ब्रह्माण्ड एवं उसकी उत्पत्ति को मुख्य चार सिद्धान्तों के द्वारा प्रतिपादित किया जा सकता है। "भुवनकोशविमर्श" नामक पुस्तक में प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी जी ने ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में इन सिद्धान्तों को इस प्रकार वर्गीकृत किया है –

1. ब्रह्मा द्वारा सृष्टि
2. विराट्पुरुष द्वारा सृष्टि
3. विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि
4. प्रजापति द्वारा सृष्टि

1.4.2.1 ब्रह्मा द्वारा सृष्टि

नासदीयसूक्त में वर्णन मिलता है कि सृष्टि से पूर्व कुछ भी नहीं था। पश्चात् स्वयमेव शुद्धचैतन्य परब्रह्म की सत्ता उत्पन्न हुई। इसी परब्रह्म ने संकल्पमात्र से सृष्टि की रचना की। सृष्टिरचना में सर्वप्रथम सत्य की उत्पत्ति हुई तत्पश्चात् क्रमशः आकाश-वायु-अग्नि-जल-पृथ्वी उत्पन्न हुए। ब्रह्मा का वर्णन श्रीमद्भागवतमहापुराण में भी प्राप्त होता है। श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवान विष्णु के मन में सृष्टि की जिज्ञासा उत्पन्न हुई तत्पश्चात् भगवान विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। इसी ब्रह्मा ने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की। ब्रह्माण्डपुराण के अनुसार ब्रह्मा ने सर्वप्रथम हिरण्याण्ड को उत्पन्न किया, इस हिरण्याण्ड का आवरण जल था। जल का तेज, तेज का वायु, वायु का आकाश क्रमशः आवरण थे, इन पञ्चमहाभूतों का आवरण महत्तत्व था तथा महत्तत्त्व अव्यक्त से आवृत्त था। कुछ इसी प्रकार का वर्णन तैत्तिरीयोपनिषद् में भी मिलता है। पौराणिक

साहित्य देखने पर हमें प्राप्त होता है कि ब्रह्मा इस सम्पूर्ण सृष्टि का कर्ता है। पौराणिक साहित्य में ब्रह्मा-विष्णु-महेश इन त्रिदेवों की कल्पना इसी सन्दर्भ में की गई है। त्रिदेवकल्पना में सत्व-रज-तम इन तीन गुणों के अनुरूप ब्रह्मा रजोगुणयुक्त होकर विश्व का सृजन करता है, विष्णु सत्त्वगुणसम्पन्न होकर होकर सृष्टि का पोषण करते हैं तथा शिव तमोगुणयुक्त स्वरूप धारण कर सृष्टि का नाश करते हैं। यहां ब्रह्मा को सृष्टि का कर्ता, विष्णु को पालनकर्ता तथा शिव को संहारकर्ता के रूप में रखा गया है। पौराणिक साहित्य के अनुसार प्रायः ब्रह्मा ही सृष्टिकर्ता हैं, उन्हीं से यह सृष्टि उत्पन्न हुई है।

1.4.2.2 विराट्पुरुष द्वारा सृष्टि

संस्कृत साहित्य परम्परा में विराट्पुरुष का वर्णन अनेक स्थानों पर मिलता है। सर्वप्रथम ऋग्वेद के पुरुषसूक्त में विराटपुरुष का वर्णन मिलता है –**"पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्"**। इस प्रकार ऋग्वेद में विराटपुरुष के सर्वकालत्व तथा सर्वव्यापकत्व का वर्णन मिलता है। विराट्पुरुष का वर्णन श्रीमद्भगवद्गीता के एकादश अध्याय में भी प्राप्त होता है। इसी विराट्पुरुष से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ। इसी ब्रह्माण्ड में भूर्भुवादि चतुर्दशलोक, उन लोकों में अनेकों सौर-परिवार, उन सौर परिवारों में अनेकों ग्रह-उपग्रह, उनमें अनेकों सृष्टियां तथा उनमें अनेक जीव और अजीव सहित समस्त चराचर जगत की रचना हुई। वैदिक साहित्य में विराट्पुरुष को सहस्रशीर्ष पुरुष के नाम से जाना जाता है अर्थात् सहस्रों सिरों वाला पुरुष। विराट्पुरुष के सिर, पैर, भुजाए आदि अंग सहस्रों की संख्या में हैं। इसी विराट् पुरुष से समस्त सृष्टि उत्पन्न होती है तथा इसी में समाहित हो जाती है। यह विराट्पुरुष सर्वव्यापक है और तीनों कालों का नियन्ता भी है। ऋग्वेद का पुरुषसूक्त इसी विराट् पुरुष का विस्तार से वर्णन करता है, यह विराट् पुरुष एक से अनेक के रूप में सृष्टि विस्तार करता है। पुरुषसूक्त के अनुसार समस्त द्यौ, आकाश, दिशाएं, जीव जगत् इसी विराट्पुरुष द्वारा उत्पन्न हैं।

1.4.2.3 विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि

"विश्वेषु कर्म व्यापारो यस्य स विश्वकर्मा" अर्थात् विश्व का सृजन करना जिसका कार्य है वही विश्वकर्मा है। विश्वकर्मा को पौराणिक साहित्य में सृजनकर्ता कहा गया है। विश्वकर्मा का अर्थ ही विश्व का कर्ता होता है। वैदिक साहित्य में स्पष्ट रूप से उल्लेख मिलता है कि यह सम्पूर्ण सृष्टि परमेश्वर द्वारा निर्मित हुई है। इसी परमेश्वर के गुणों

की संज्ञा देवता नाम से प्रसिद्ध है। ये देवता ही परमेश्वर की आज्ञा से सृष्टि करते हैं। विश्वकर्मा, सविता, इन्द्र, विष्णु, वरुण आदि देवता परमेश्वर की आज्ञा से विभिन्न कार्यों का संपादन करते हैं। इन्हीं देवताओं में से एक विश्वकर्मा भी हैं।

अथर्ववेद का उपवेद स्थापत्यवेद है। स्थापत्य साहित्य में विश्वकर्मा प्रमुख आचार्य के रूप में भारतीय ज्ञानाकाश में सूर्य की भांति विद्यमान हैं। स्थापत्यशास्त्र के अनुसार विश्वकर्मा ही सृष्टि के निर्माता हैं, इस सम्पूर्ण चराचर जगत की उत्पत्ति विश्वकर्मा द्वारा हुई है। स्थापत्यशास्त्र वर्तमान में वास्तुशास्त्र के नाम से भी जाना जाता है। अपराजितपृच्छा, समराङ्गणसूत्रधार आदि वास्तुशास्त्रीय प्रमुख ग्रन्थों में विश्वकर्मा को ही सृष्टिनिर्माता के रूप में रखा गया है। वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में विश्वकर्मा की चर्चा विस्तार से की गई है परन्तु इस विचार का बीज मुख्य रूप से वैदिक साहित्य में ही हमें दृष्टिगोचर होता है।

1.4.2.4 प्रजापति द्वारा सृष्टि

प्रजा के पति अर्थात् प्रजा के स्वामी को प्रजापति कहा गया। सर्वप्रथम ऋग्वेद में प्रजापति का वर्णन प्राप्त होता है - **"हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्"**अर्थात् परमात्मा से सर्वप्रथम प्रजापति उत्पन्न हुए और वे उत्पन्न होते ही सभी लोकों के स्वामी बन गए। यही प्रजापति वैदिक श्रुतियों में हिरण्यगर्भ नाम से भी प्रसिद्ध हुए। पौराणिक साहित्य में ब्रह्मा को आदि प्रजापति माना गया है। तत्पश्चात् उन्होंने अन्य प्रजापतियों को उत्पन्न किया। आगे चलकर ये प्रजापति ही विभिन्न प्रकार की सृष्टियों का सृजन करते हैं। महाभारत के मोक्षधर्म में इक्कीस प्रजापतियों का वर्णन मिलता है। ये निम्न हैं –

ब्रह्मास्थाणुर्मनुर्दक्षो भृगुर्धर्मस्तथा यमः।

मरीचिरङ्गिरात्रिश्च पुलस्त्यं पुलहः क्रतुः।।

वसिष्ठः परमेष्ठी च विवस्वान् सोम एव च।

कर्दमश्चापि यः प्रोक्तः क्रोधोऽर्वाक् क्रीत एव च।।

एकविंशतिरुत्पन्ना ते प्रजापतयः स्मृताः।।

हरिवंशपुराण में तेरह प्रजापतियों का वर्णन प्राप्त होता है, इसके अनुसार पितामह ब्रह्मा ने सर्वप्रथम लोकों के कर्ता प्रजापतियों का सृजन किया तत्पश्चात् इन प्रजापतियों ने लोकों की रक्षा की और नई सृष्टि उत्पन्न की।

अभ्यास प्रश्न

प्र. 1. ब्रह्माण्ड की परिभाषा बताइये?

प्र. 2. चतुर्दश लोकों के नाम बताइये?

प्र. 3. आधुनिक मत में ब्रह्माण्ड की परिभाषा क्या है?

प्र. 4. दशाङ्गुलन्याय को स्पष्ट कीजिए।

प्र. 5. तैत्तिरीयोपनिषद् में वर्णित सृष्टिविषयक वर्णन बताइये?

प्र. 6. नासदीय सूक्त किस वेद में वर्णित है?

प्र. 7. सृष्टिविषयक भारतीय चार सिद्धान्तों को बताइये।

प्र. 8. ब्रह्मा कहाँ उत्पन्न हुए?

प्र. 9. अथर्ववेद का उपवेद कौन सा है?

प्र. 10. स्थापत्यशास्त्र के अनुसार सृष्टिकर्ता कौन है?

प्र. 11. त्रिदेव कौन-कौन हैं?

प्र. 12.त्रिदेवों के कार्यों को बताइये?

प्र. 13. विराट्पुरुष का वर्णन ऋग्वेद के किस सूक्त में किया गया है?

प्र. 14. प्रजापति शब्द का क्या अर्थ होता है?

प्र. 15. महाभारत में कितने प्रजापतियों का वर्णन मिलता है?

1.5 आधुनिक मत में ब्रह्माण्ड

ग्रहों, तारों, आकाशगंगाओं, जीव-जगत, पदार्थ और ऊर्जा के अन्य सभी रूप ब्रह्माण्ड में समाहित हैं। सर्वप्रथम आधुनिक खगोलशास्त्र के मुख्य सिद्धान्त दो प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिकों प्लेटो तथा अरस्तू ने प्रस्तुत किए। ब्रह्माण्ड के संदर्भ में प्राचीन काल

में भूकेन्द्रिक ब्रह्माण्ड सिद्धान्त प्रसिद्ध रहा है। इसी सिद्धान्त के आधार पर दूसरी शताब्दी में टॉलमी द्वारा विस्तार से भू-केन्द्रिक सिद्धान्त प्रस्तुत किया था। भारतवर्ष के महान वैज्ञानिक आर्यभट्ट ने पृथ्वी को ही ब्रह्माण्ड का केन्द्र माना, परन्तु उन्होंने ब्रह्माण्ड को स्थिर मानकर कहा कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है। उनका यह सिद्धान्त खगोल जगत में "भू-भ्रमण सिद्धान्त" नाम से प्रसिद्ध है।

सौरकेन्द्रिक ग्रहपरिभ्रमण सिद्धान्त यूरोप के वैज्ञानिक निकोलस कोपरनिकस ने प्रस्तुत किया। यह भू-केन्द्रिक सिद्धान्त के विपरीत सूर्य केन्द्रिक सिद्धान्त था। सूर्य-केन्द्रिक सिद्धान्त के अनुसार सूर्य सौरपरिवार के केन्द्र में है। पृथ्वी तथा अन्य ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। कोपरनिकस के सिद्धान्त का भी यूरोप में पर्याप्त विरोध हुआ। इसके बाद दुनियाँ के अलग-अलग कोनों में खगोल विज्ञान में अनेकों खोजें हुई। जर्मनी के जोहांस केपलर ने ग्रहों की गतियों का स्पष्टीकरण दिया तथा इटली के वैज्ञानिक गैलीलियो ने दूरबीन की खोज की तथा अनेकों खोजें हुई, जो आज भी निरन्तर जारी हैं। सम्प्रति वैज्ञानिक अभिजित नक्षत्र (वेगा) के निकट ब्रह्माण्ड का केन्द्र मानते हैं। ब्रह्माण्ड को समझने के लिए प्रमुख रूप से निम्न आधुनिक सिद्धान्तों का अध्ययन करना आवश्यक है।

1. स्थिरदशा सिद्धान्त
2. विस्फोट सिद्धान्त
3. स्पन्दनशील सिद्धान्त

1.5.1 स्थिरदशा सिद्धान्त

स्थिरदशा अर्थात् जब ब्रह्माण्ड में न सिकुड़न दिखाई पड़ती है और न ही विस्तार दिखाई पड़ता है। व्यवहारिक रूप में यही दिखाई भी पड़ता है, इस प्रकार जो भी आकाश को देखेगा वह यही समझेगा कि यह स्थिर है। उस स्थिति में ब्रह्माण्ड को स्थिर कह सकते हैं।अल्बर्ट आइन्स्टाइन को इस सिद्धान्त का जनक माना जाता है। उनका मानना था कि ब्रह्माण्ड स्थिर है और सदैव स्थिर दशा में ही रहता है और यह ब्रह्माण्ड करोड़ों वर्षों से स्थिर है। आइन्स्टाइन के इस सिद्धान्त को बीसवीं सदी के ब्रह्माण्ड विज्ञानी फ्रेड हॉयल ने अंग्रेज गणितज्ञ हरमान बांडी और अमेरिकी वैज्ञानिक थोमस गोल्ड के साथ संयुक्त रूप से मिलकर स्पष्ट किया। यह सिद्धान्त स्थिरदशा सिद्धान्त तथा स्थायी दशा

सिद्धान्त के नाम से भी विख्यात है। इसके अनुसार न तो ब्रह्माण्ड का आदि है और न ही इसका कभी अन्त होगा। यह सदैव ही स्थिर दशा में विद्यमान रहा है और रहेगा भी। यह समयानुसार अपरिवर्तनशील है, यद्यपि इस सिद्धान्त में प्रसरणशीलता समाहित है, परन्तु फिर भी ब्रह्माण्ड के घनत्व को स्थिर रखने के लिए पदार्थ इसमें स्वतः रूप से उत्पन्न और परिवर्तित होते रहते हैं।

1.5.2 विस्फोट सिद्धान्त

आधुनिक सिद्धान्तों में सर्वाधिक मान्य और प्रख्यात यह सिद्धान्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को विस्फोट द्वारा सिद्ध करता है। विस्फोट सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड में सर्वप्रथम विस्फोट हुआ। उस विस्फोट से ही ब्रह्माण्ड में सृष्टि उत्पन्न हुई। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन हब्बल ने किया। उनका मानना था कि ब्रह्माण्ड फैल रहा है तथा उन्होंने यह तर्क दिया कि ब्रह्माण्ड में आकाशगंगाएं लगातार एक दूसरे से दूर जा रही हैं। अतः अतीत में किसी समय ये आकाशगंगाएं अवश्य ही एक साथ रही होंगी। उनका मानना था कि दस से पंद्रह अरब वर्ष पूर्व ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण द्रव्यराशि एक स्थान पर एकत्रित थी, उस समय ब्रह्माण्ड का घनत्व असीमित था तथा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अति सूक्ष्म बिन्दु में समाहित था। किसी अज्ञात कारण से इसी सूक्ष्म बिन्दु में विस्फोट हुआ और उस विस्फोट से द्रव्य इधर-उधर छिटक गया। इसी स्थिति में अकारण ही दिक्-काल की भी उत्पत्ति हुई। इस घटना को खगोलविदों ने ब्रह्माण्डीय विस्फोट का नाम दिया है। एक अंग्रेज विज्ञानी सर फ्रेड हॉयल ने इस सिद्धान्त की आलोचना करते समय मजाक में "बिग-बैंग" ये शब्द का प्रयोग किया था, इसीलिए इस सिद्धान्त को बिग-बैंग सिद्धान्त भी कहा जाता है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के सिद्धान्तों में विस्फोट सिद्धान्त सर्वाधिक मान्यता प्राप्त सिद्धान्त है। एक ओर जहां स्थिरदशा सिद्धान्त में पदार्थो का सृजन निरन्तर प्रक्रिया है, वहीं विस्फोट सिद्धान्त के अनुसार पदार्थों का सृजन अकस्मात् हुआ।

1.5.3 स्पन्दनशील सिद्धान्त

स्पन्दनशील का अर्थ सिकुड़ने और फैलने की नियमित प्रक्रिया से है। इसके अनुसार ब्रह्माण्ड फैलता रहता है तथा सिकुड़ता रहता है। इस सिद्धान्त को दोलायमान सिद्धान्त भी कहते हैं। इसी फैलने और सिकुड़ने की अवस्था को स्पन्दनशील कहते हैं।

यह फैलने और सिकुड़ने की लगातार स्थिति बनी रहती है। वर्तमान में हमारा ब्रह्माण्ड फैल रहा है, परन्तु एक सीमित अवस्था में फैलने के बाद इसमें सिकुड़न आ जाएगी। इसी सिद्धान्त को स्पन्दनशील सिद्धान्त कहा जाता है। दूरबीन की खोज के बाद के अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ कि हमारी आकाशगंगा के अतिरिक्त ब्रह्माण्ड में और भी आकाशगंगाएं हैं। ये आकाशगंगाएं बड़ी तेजी से एक दूसरे से दूर जाती हुई दिखाई पड़ती हैं, अतः ब्रह्माण्ड का फैलाव निरन्तर हो रहा है। आइन्स्टाइन ने ब्रह्माण्ड की सापेक्षता का जो सिद्धान्त प्रस्तुत किया उसके अनुसार भी ब्रह्माण्ड सिकुड़ेगा और फैलेगा भी, यह स्थिर नहीं है। अलक्जेंडर फ्रीडमैन ने वर्ष 1922 में अपने सैद्धान्तिक खोजों के आधार पर यह स्पष्ट किया कि ब्रह्माण्ड स्थिर नहीं है अपितु यह गतिशील है।

इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड के सिकुड़न और प्रसरण की प्रक्रिया करोड़ो वर्षों के अन्तराल में होती है। डॉ. एलन संडेज को इस सिद्धान्त का प्रवर्तक माना जाता है। उनका मानना है कि आज से 120 करोड़ वर्ष पहले एक बिस्फोट हुआ तभी से यह ब्रह्माण्ड फैलता जा रहा है। 290 करोड़ वर्ष बाद गुरुत्वाकर्षण बल के कारण इसका विस्तार रुक जाएगा और इसके बाद इसमें संकुचन की प्रक्रिया शुरू हो जाएगी। यह ब्रह्माण्ड संकुचित होते-होते अनन्त रूप से सिकुड़ते हुए एक अतिसूक्ष्म बिन्दुमय आकार धारण कर लेगा, उसके बाद अत्यन्त गुरुत्वाकर्षण के कारण ही इसमें पुनः विस्फोट होगा और इसमें पुनः फैलाव प्रारम्भ हो जाएगा। यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहेगी, इसी सिद्धान्त को स्पन्दनशील सिद्धान्त कहा जाता है।

अभ्यास प्रश्न

प्र. 16. आधुनिक खगोलशास्त्र में प्रमुख यूनानी दार्शनिकों के नाम बताइये।

प्र. 17. आर्यभट्ट का प्रसिद्ध सिद्धान्त कौन सा है?

प्र. 18. अरस्तू ने कौन सा सिद्धान्त प्रस्तुत किया?

प्र. 19. सूर्य केन्द्रिक सिद्धान्त किसने प्रस्तुत किया?

प्र. 20. दूरबीन की खोज किसने की?

प्र. 21. ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के तीन प्रमुख सिद्धान्त कौन से हैं?

प्र. 22. स्थिर दशा सिद्धान्त का अर्थ क्या है?

प्र. 23. स्थिरदशा सिद्धान्त का जनक कौन है?

प्र. 24. विस्फोट सिद्धान्त का क्या अर्थ है?

प्र. 25. विस्फोट सिद्धान्त का प्रतिपादन किसने किया?

प्र. 26. विस्फोट सिद्धान्त का प्रसिद्ध नाम क्या है?

प्र. 27. स्पन्दनशील सिद्धान्त का क्या अर्थ है?

प्र. 28. स्पन्दनशील सिद्धान्त का जनक कौन है?

1.6 सारांश

यदि ब्रह्माण्ड है तो इसका कोई रचयिता भी होगा, साकल्पनाशीलजन विचारकरतेहैं। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के प्रति जितनी जिज्ञासा वर्तमान में है, उतनी ही वैदिक काल में भी रही है। वैदिक साहित्य के आधार पर स्पष्ट होता हैं कि वैदिक काल में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्तों पर व्यापक रूप से चर्चा एवं विमर्श हुआ था। इसका प्रमाण वैदिक ऋचाओं में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्त हैं। भारतीय वाङ्मय के आधार पर ब्रह्माण्डोपत्ति के प्रमुख चार सिद्धान्त हमें प्राप्त होते हैं। जिनमें विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि, ब्रह्मा द्वारा सृष्टि, प्रजापति द्वारा सृष्टि तथा विराट् पुरुष द्वारा सृष्टि का वर्णन हमें मिलता है। आधुनिक विज्ञान भी ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में विस्तार से बात करता है। वर्तमान में आधुनिक खगोलविदों द्वारा तीन प्रमुख सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया गया है। ये विस्फोट सिद्धान्त, स्थिरदशा सिद्धान्त तथा स्पन्दनशील सिद्धान्त हैं। इन आधुनिक सिद्धान्तों के आधार पर भी हमारे पास बहुत से प्रश्नों का उत्तर नहीं प्राप्त होता, अतः हमारा आधुनिक विज्ञान अभी ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्तों से संतुष्ट नहीं है। इससे यह सिद्ध होता है कि ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बारे में कोई भी सिद्धान्त सम्पूर्ण नहीं है। वस्तुतः वैज्ञानिकों का मानना है कि हम ब्रह्माण्ड के बारे में केवल 4% ही जानते हैं, बाकी का 96% ब्रह्माण्ड आज भी हमारे लिए रहस्य बना हुआ है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के विषय में कोई भी सिद्धान्त पूर्ण नहीं है, इसमें निरन्तर शोध की आवश्यकता बनी रहती हैं, अतः ब्रह्माण्डोत्पत्ति के कारणों पर आधुनिक वैज्ञानिक नित नये शोधकार्य कर रहे हैं।

1.7 कठिन शब्दार्थ

खगोलीय पिण्ड	- आकाश में दिख रहे तारे, ग्रह आदि पिण्ड
जिज्ञासु	- जानने की इच्छा से युक्त
असंख्य	- अनन्त संख्या वाले, जिनको गिना न जा सके
शक्तिसम्पन्न	- शक्ति से युक्त
प्राकृतिक	- प्रकृति से संबन्धित
मतवैभिन्य	- मान्यताओं में विविधता
पाश्चात्य	- पश्चिम के, बाद के
ब्रह्माण्डोत्पत्ति	- ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति
प्रारम्भिक	- शुरुआती
अवलोकन	- देखना
जिज्ञासा	- जानने की इच्छा
सृष्टिविषयक	- सृष्टि से संबन्धित
ऊर्ध्वलोक	- ऊपर के लोक
अधोलोक	- नीचे के लोक
अदृश्य	- नहीं दिखने वाला
जलपूर्ण	- जल से भरे हुए
अभावात्मक	- जिसका अभाव हो
आवरण	- ढकना
संज्ञा	- उपाधि
अभाव	- न होना
आच्छादित	- ढका हुआ
प्रज्वलित	- जलते हुए

व्यापकता - अस्तित्त्व का व्याप्त होना

वैदिक - वेदों से संबन्धित

स्थापत्यवेद - स्थापना से संबन्धित वेद

चराचर - स्थिर तथा अस्थिर

वास्तुशास्त्रीय - वास्तुशास्त्र से संबन्धित

पौराणिक - पुराणों से संबन्धित

पराकाष्ठा - उच्चतम श्रेणी

त्रिदेव - तीन देव

शुद्धचैतन्य - शुद्ध और चेतन अवस्था में

पालनकर्ता - पालन करने वाला

उत्पत्तिकर्ता - उत्पन्न करने वाला

संहारकर्ता - संहार करने वाला

विद्यमान - उपस्थित होना

सृजन करना - उत्पन्न करना, रचना करना

खगोलशास्त्र - आकाशीय पिण्डों का शास्त्र

भू-केन्द्रिक - पृथ्वी को केन्द्र में रखकर मानना

सूर्य-केन्द्रिक - सूर्य को केन्द्र में रखकर मानना

विपरीत - उल्टा

भू-भ्रमण - भूमि का घूमना

दूरबीन - एक यन्त्र जिससे दूर स्थित पदार्थ को देखा जा सकता है

स्थिर दशा - एक स्थिति में स्थिर रहना

अपरिवर्तनशील - जिसमें परिवर्तन न हो

चतुर्दशलोक - चौदह लोक

प्रसरणशीलता - गति का होना, प्रसार होना

अतीत - भूतकाल, बीता हुआ समय

प्रसरणशीलता - फैलने की निरन्तरता

सर्वाधिक - सबसे अधिक

सूक्ष्म - अत्यधिक छोटा

दिक्-काल - दिशा और काल

अकस्मात् - अचानक

निरन्तर - लगातार

रचयिता - रचने वाला

नित नवीन - निरन्तर नए-नए

1.7.1 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग्रह, नक्षत्र, तारे, आकाशगङ्गा, उल्काएं, धूमकेतु, दैत्य, मानव, देवता आदि समस्त जीव तथा भूर्भुवादि चतुर्दशलोक जहां विद्यमान हैं वह ब्रह्माण्ड कहलाता है।
2. भू-भुव-स्व-मह-जन-तप-सत्य ये सात ऊर्ध्वलोक तथा अतल-वितल-सुतल-तलातल-रसातल-महातल-पाताल ये सात अधोलोक कहलाते हैं
3. ब्रह्माण्ड समय और अन्तरिक्ष की अन्तर्वस्तु को कहते हैं। ब्रह्माण्ड में सभी ग्रह, तारे, मन्दाकिनी, खगोलीय पिण्ड, अपरमाणविक कण, सम्पूर्ण पदार्थ और ऊर्जा सम्मिलित है। अवलोकन योग्य ब्रह्माण्ड का व्यास वर्तमान में लगभग 91.1 अरब प्रकाश वर्ष है, पूरे ब्रह्माण्ड का व्यास अभी अज्ञात है, और हो सकता है कि यह अनन्त हो।
4. पृथ्वी से दश गुणा अधिक जल है, जल से दशगुणा अधिक अग्नि, अग्नि से दशगुणा अधिक वायु तथा वायु से दशगुणा अधिक आकाश की सत्ता है,

आकाश से दशगुणा अहंकार, अहंकार से दशगुणा महत्तत्व तथा महत्तत्व से दशगुणा अधिक मूल प्रकृति की सत्ता है।

5. तैत्तिरीयोपनिषद के अनुसार सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ। पश्चात् आकाश से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी, पृथिवी से औषधियां, औषधियों से अन्न, अन्न से पुरुष उत्पन्न हुआ।
6. नासदीय सूक्त ऋग्वेद के दशम मण्डल में स्थित है।
7. सृष्टिविषयक चार भारतीय सिद्धान्त - विश्वकर्मा द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति, ब्रह्माद्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति, प्रजापति द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति, विराटपुरुष द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति।
8. ब्रह्मा भगवान विष्णु के नाभिकमल से उत्पन्न हुए।
9. अथर्ववेद का उपवेद स्थापत्यवेद है।
10. स्थापत्यशास्त्र के अनुसार विश्वकर्मा सृष्टि के निर्माता हैं।
11. ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव त्रिदेव कहलाते हैं।
12. ब्रह्मा को सृष्टि का उत्पत्तिकर्ता, विष्णु को पालनकर्ता तथा शिव को संहारकर्ता कहा गया है।
13. विराट पुरुष का वर्णन ऋग्वेद के परुष सूक्त में मिलता है।
14. प्रजा के पति अर्थात् प्रजा के स्वामी को प्रजापति कहा गया।
15. महाभारत में इक्कीस प्रकार के प्रजापतियों का वर्णन मिलता है।
16. दो प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक प्लेटो तथा अरस्तू हैं।
17. आर्यभट्ट का प्रसिद्ध सिद्धान्त भू-भ्रमण सिद्धान्त कहलाता है।
18. अरस्तू ने भू-केन्द्रिक सिद्धान्त प्रस्तुत किया। अरस्तू के अनुसार ब्रह्माण्ड का केन्द्र पृथ्वी है, तथा समस्त तारे ग्रह नक्षत्र आदि इसी पृथ्वी के चारों ओर घूमते हैं।
19. सूर्य केन्द्रिक सिद्धान्त निकोलस कोपरनिकस ने प्रस्तुत किया। इसके अनुसार सूर्य सौरपरिवार का केन्द्र है।
20. दूरबीन की खोज गैलीलियो ने की।
21. ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के आधुनिक सिद्धान्त स्थिरदशा सिद्धान्त, विस्फोट सिद्धान्त और स्पन्दनशील सिद्धान्त प्रमुख हैं।
22. स्थिरदशा सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड स्थिर है, और यह अपरिवर्तनशील है, पदार्थ इसमें स्वतः उत्पन्न होते हैं तथा परिवर्तित होते रहते हैं।

23. स्थिरदशा सिद्धान्त का जनक अल्बर्ट ऑइन्सटाइन को माना जाता है। फ्रेडहायल ने इस सिद्धान्त को प्रस्तुत किया था।
24. विस्फोट सिद्धान्त का अर्थ है कि ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति सर्वप्रथम ब्रह्माण्ड में विस्फोट द्वारा हुई है।
25. विस्फोट सिद्धान्त का प्रतिपादन हब्बल ने किया।
26. विस्फोट सिद्धान्त का प्रसिद्ध नाम "बिग-बैंग" सिद्धान्त है।
27. स्पन्दनशील सिद्धान्त का अर्थ है कि यह ब्रह्माण्ड फैलता है, तथा सिकुड़ता रहता है।
28. स्पन्दनशील सिद्धान्त का जनक डॉ. एजल संडेज को माना जाता है।

1.7.2 व्याख्यात्मक प्रश्न

प्र. 1. प्राचीन मत में ब्रह्माण्ड की परिभाषा तथा विषयों का विस्तार से वर्णन कीजिए।

प्र. 2. नासदीय सूक्त का वर्णन कीजिए।

प्र. 3. ब्रह्माण्डोत्पत्ति के वैदिक सिद्धान्तों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

प्र. 4. ब्रह्माण्डोत्पत्ति के आधुनिक सिद्धान्तों का वर्णन विस्तार से कीजिए।

1.8 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2016
2. खगोलीय पिण्डों का परिक्रमण, कोपर्निकस, व्याख्या, तिवारी, श्रवणकुमार एवं पाण्डेय रमाकान्त, वाराणसी, हिन्दी प्रकाशन समिति, सन् 1972
3. गोलपरिभाषा, झा, सीताराम, दरभङ्गा, बिहार, श्रीसीताराम पुस्तकालय, संवत् 2027
4. भुवनकोश विमर्श, प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स दिल्ली, वर्ष 2004
5. यजुर्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2015
6. राजवल्लभवास्तुशास्त्रम्, डॉ श्रीकृष्ण जुगनू, परिमल प्रकाशन, वर्ष 2005
7. श्रीमद्भागवतपुराणम्, वेदव्यास,गोरखपुर, गीताप्रेस, संवत् 2059
8. श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2048
9. वास्तुशास्त्रविमर्श, शोधपत्रिका, श्री ला.ब.शा.रा.सं.विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

ईकाई – 2 विश्वकर्मा द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति

पाठ संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 वैदिक वाङ्मय में विश्वकर्मा

2.4 पौराणिक तथा संस्कृत वाङ्मय में विश्वकर्मा

2.5 वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में विश्वकर्मा

2.6 सारांश

2.7 कठिन शब्द

2.7.1 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.7.2 व्याख्यात्मक प्रश्न

2.8 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थसूची

2.1 प्रस्तावना

ब्रह्माण्डोत्पत्ति किस प्रकार हुई तथा इसका रचयिता कौन है? इस प्रश्न के उत्तर की जिज्ञासा ने वैज्ञानिकों और दार्शनिकों को अपनी ओर आकर्षित किया है। भारतीय ज्ञान परम्परा से लेकर आधुनिक वैज्ञानिकों तक सभी विचारक तथा चिन्तक इस विषय पर लगातार अनुसन्धान कर रहे हैं। इन अनुसंधानों के आधार पर विद्वानों ने सृष्टिविज्ञान के विषय में कुछ सिद्धान्त भी प्रस्तुत किए हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा की बात करें तो यहां समस्त ज्ञान-विज्ञान का मूल स्रोत वेद हैं। वेदों में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषयों की विस्तार से चर्चा हुई है। यही चर्चाएं आगे पौराणिक साहित्य में तथा अन्य संस्कृत साहित्य के ग्रन्थों में विस्तार से मिलती हैं। इन सभी के अध्ययन के बाद भारतीय परम्परा में सृष्टिविज्ञान से सम्बन्धित प्रमुख चार सर्वमान्य सिद्धान्त हैं। उनमें ब्रह्मा, विराटपुरुष, प्रजापति तथा विश्वकर्मा इन चारों द्वारा ब्रह्माण्ड तथा इस सम्पूर्ण सृष्टि की रचना मानी गई है। इनमें विश्वकर्मा द्वारा ब्रह्ममाण्डोत्पत्ति का सिद्धान्त महत्वपूर्ण है। इसके अनुसार समस्त प्रकार की सृष्टि विश्वकर्मा ने की है। विश्वकर्मा का अर्थ ही विश्व की रचना करने वाला है, अतः विश्वरचयिता ब्रह्मा को इस सृष्टि का रचनाकार माना गया है। वाचस्पत्यम् में विश्वकर्मा का अर्थ इस प्रकार दिया गया है –

"विश्वेषु कर्म व्यापारो यस्य स विश्वकर्मा"

अर्थात् विश्व का सृजन करना जिसका कार्य है वही विश्वकर्मा है। विश्वकर्मा को पौराणिक साहित्य में सृजनकर्ता कहा गया है,इस प्रकार विश्व का कर्ता तथा रचयिता विश्वकर्मा है। वैदिक साहित्य के एक अन्य सिद्धान्त के अनुसार स्पष्ट रूप से उल्लेख मिलता है कि यह सम्पूर्ण सृष्टि परमेश्वर द्वारा निर्मित हुई है। इसी परमेश्वर के गुणों की संज्ञा देवता नाम से प्रसिद्ध है। ये देवता ही परमेश्वर की आज्ञा से सृष्टि करते हैं। इन्हीं देवताओं में से एक विश्वकर्मा भी हैं, जो विश्व के रचनाकार के रूप में जगत्प्रसिद्ध हैं। इन देवताओं में विश्वकर्मा विशिष्ट प्रकार के देवता हैं। विश्वकर्मा, सविता, इन्द्र, विष्णु, वरुण आदि सभी देवता परमेश्वर की आज्ञा से विभिन्न प्रकार के कार्यों का संपादन करते हैं।

अथर्ववेद का उपवेद स्थापत्यवेद है। स्थापत्य साहित्य परम्परा में विश्वकर्मा प्रमुख आचार्य के रूप में भारतीय ज्ञानाकाश में सूर्य की भांति विद्यमान हैं। स्थापत्यशास्त्र के अनुसार भी विश्वकर्मा ही सृष्टि के निर्माता हैं। इस सम्पूर्ण चराचर जगत की उत्पत्ति

विश्वकर्मा द्वारा हुई है, स्थापत्यशास्त्र वर्तमान में वास्तुशास्त्र के नाम से भी जाना जाता है। अपराजितपृच्छा, समराङ्गणसूत्रधार, राजवल्लभवास्तुशास्त्र आदि वास्तुशास्त्रीय प्रमुख ग्रन्थों में विश्वकर्मा को ही सृष्टिनिर्माता माना गया है। वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में विश्वकर्मा की चर्चा विस्तार से की गई है, परन्तु इस विचार का बीज मुख्य रूप से वैदिक साहित्य में ही हमें दृष्टिगोचर होता है। प्रस्तुत अध्याय में हम विश्वकर्मा तथा उसके द्वारा रचित सृष्टि के सिद्धान्त का अध्ययन करेंगें।

2.2 अध्ययन का उद्देश्य

- प्रस्तुत अध्याय में हम विश्वकर्मा के विषय में पढेंगे।
- सृष्टिरचना के विषय में हम विश्वकर्मा द्वारा रचित सृष्टि का अध्ययन करेंगे।
- वैदिक वाङ्मय में विश्वकर्मा के स्वरूप का अध्ययन करेंगे।
- पुराणों में विश्वकर्मा के स्वरूप का अध्ययन करेंगे।
- संस्कृत साहित्य में वर्णित सृष्टिरचना के सिद्धान्तो को समझेंगे।
- स्थापत्यशास्त्र तथा विश्वकर्मा के सम्बन्ध का अध्ययन करेंगे।

2.3 वैदिक वाङ्मय में विश्वकर्मा

आप जानते ही हैं कि समस्त भारतीय ज्ञान-विज्ञान का स्रोत वेद हैं, अतः विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि के सिद्धान्त भी वेदों में ही बीजरूप में स्थित है। ऋग्वेद के दशम मण्डल में *81*वें तथा 82वें सूक्त के देवता विश्वकर्मा हैं, इन दोनों सूक्तों में सात–सात ऋचाओं में विश्वकर्मा द्वारा रचित सृष्टि का वर्णन किया गया है। यथा –

किं स्विदासीदधिष्ठानारम्भणं कतमत्स्वित्कथासीत्।

यतो भूमिं जनयन्विश्वकर्मा वि द्यामौर्णोन्महिना विश्वचक्षाः।।

यहां जिज्ञासा की गई है कि सृष्टि बनाते समय विश्वकर्मा का आधार क्या था? उन्होंने सृष्टि का आरम्भ कहाँ और किस प्रकार किया? विश्व को देखने वाले विश्वकर्मा

ने किस स्थान पर स्थित होकर धरती के बाद आकाश को बनाया? इसके बाद आगे ऋषि कहता है कि –

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्।

सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः।।

अर्थात् विश्वकर्मा की आंखें, मुख, बाहु, चरण सभी ओर फैले हुए हैं, उस देव ने अकेले ही बाहुओं और चरणों से भांति-भांति की गति करके द्यौ और भूमि को बनाया। इसी प्रकार की और भी जिज्ञासाएं इस सूक्त में की गई हैं। जैसे –

किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः।

मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तद्यदध्यतिष्ठद्भुवनानि धारयन्।।

अर्थात् वह कौन सा वन है? वह कौन सा वृक्ष है? जिसने द्यावापृथिवी को निष्पादित किया। ईश्वर भुवनों को धारण करके किस पर स्थित होता है? इन सभी के उत्तर में इस सूक्त में विश्वकर्मा को ही सर्वशक्तिमान् बताया गया है, कि वही विश्वकर्मा ही सम्पूर्ण सृष्टि का संचालक है। अगले सूक्त में कहा गया है कि –

चक्षुषः पिता मनसा हि धीरो घृतमेने अजनन्नम्नमाने।

यदेदन्ता अददृहन्त पूर्व आदिद् द्यावापृथिवी अप्रथेताम्।।

शरीर को उत्पन्न करने वाले, स्वयं को अद्वितीय समझने वाले एवं धीर विश्वकर्मा ने सर्वप्रथम जल में द्यावापृथिवी का निर्माण किया, विश्वकर्मा ने द्यावापृथिवी के प्राचीन एवं अन्तिम भागों को दृढ़ करके प्रसिद्ध किया।

इस प्रकार विश्वकर्मा की सृष्टि में सर्वप्रथम जल की उत्पत्ति मानी गई है। इसी जल में अनेकों प्रकार की सृष्टियों का वर्णन मिलता है, हमारी पृथिवी भी जल से ही उत्पन्न मानी गई है। दार्शनिक सिद्धान्तों तथा वेदों में वर्णित सृष्टि के अन्य सिद्धान्तों के अनुसार सर्वप्रथम आकाश तत्त्व की उत्पत्ति मानी गई है, परन्तु विश्वकर्मा सूक्त में सर्वप्रथम जल की उत्पत्ति तथा उसके पश्चात् पृथिवी को उत्पन्न माना गया है। इसका प्रमुख कारण यह है कि विश्वकर्मा सृष्टि के रचयिता हैं, और स्थपति हैं, समस्त प्रकार की स्थापनाएं विश्वकर्मा ने ही की हैं। ये सभी स्थापनाएं पृथिवीतत्त्व तथा जलतत्त्व के

समीप हैं, अतः विश्वकर्मा की सृष्टि को ऋषियों ने वेदों में भौतिक सृष्टि के रूप में वर्णित किया है।

विश्वकर्मा विमना आद्विहाया धाता विधाता परमोत संदृक्।

तेषामिष्टानि समिधा मदन्ति यत्रा सप्तऋषीन्पर एकमाहुः।।

अर्थात् विशाल मन वाले विश्वकर्मा स्वयं महान हैं, वे सृष्टि का निर्माण करने वाले सृष्टिकर्ता श्रेष्ठ हैं एवं सब कुछ देखने वाले हैं। विद्वान् लोग कहते हैं कि सप्तऋषियों से भी ऊँचे स्थानों को वे अकेले ही देखते हैं, उन सप्तऋषियों की अभिलाषाएं हव्यान्न से पूर्ण होती हैं। विश्वकर्मा सृष्टि के रचनाकार हैं, यह पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है, परन्तु विश्वकर्मा को यहां सब कुछ देखने वाले परमात्मा के रूप में भी वर्णित किया गया है, अतः विश्वकर्मा ही सृष्टि के संचालक भी हैं। इस ऋचा में विश्वकर्मा का स्थान सप्तऋषियों से भी ऊंचा माना गया है, इसीलिए विश्वकर्मा को महान बताया गया है।

यो नः पिता जनिता यो विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।

यो देवानां नामधा एक एव तं सम्प्रश्नं भुवना यन्त्यन्या।।

जो विश्वकर्मा हमारे पालन करने वाले, उत्पन्न करने वाले व विश्व के उत्पादक हैं तथा देवों के तेज एवं सभी भुवनों को जानते हैं, जो एकमात्र देवों का नाम रखने वाले हैं, सभी प्राणी उन्हीं के विषय में जानना चाहते हैं।

इस प्रकार विश्व को रचने वाले रचनाकार भी विश्वकर्मा ही हैं, तथा विश्वकर्मा ही इस सृष्टि का पालन करने वाले भी हैं। त्रिदेवसिद्धान्त में ब्रह्मा को रचनाकार तथा विष्णु को पालनकर्ता के रूप में प्रस्तुत किया गया है, परन्तु यहां विश्वकर्मा दोनों ही भूमिकाओं में हैं।

त अजायन्त द्रविणं समस्मा ऋषयः पूर्वे जरितारो न भूना।

असूर्ते सूर्ते रजसि निषत्ते ये भूतानि समकृण्वन्निमानि।।

अर्थात् जिन ऋषियों ने स्थावर एवं जङ्गमरूप विश्व का निर्माण हो जाने पर सभी प्राणियों को बनाया, उन्हीं ऋषियों ने प्राचीन स्तोताओं के समान धन व्यय करके यज्ञ किया।

इस प्रकार इस ऋचा मे सप्तऋषियों को स्थावर-जङ्गम रूपी विश्व के निर्माण में सहायक माना है, वे भी किसी की प्रेरणा से ही इस कार्य में प्रवृत्त हुए हैं। अतः वे सभी ऋषिगण उस परमात्मा का यजन करते हैं।

परो दिवा पर एना पृथिव्या परो देवेभिरसुरैर्यदस्ति।

कं स्विद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवाः समपश्यन्त विश्वे।।

वह ईश्वर द्युलोक, धरती, देवों तथा असुरों से महान है। जल ने वह कौन सा गर्भ धारण किया था, जहां सभी देवों ने स्वयं को परस्पर मिला हुआ देखा।

अर्थात् ईश्वर ही सर्वशक्तिमान् है, जो सबका परमात्मा है। देव, असुर, लोक, ब्रह्माणड, चराचर सृष्टि सभी से महान वह ईश्वर सर्वशक्तिमान् है। यहां जल के गर्भधारण के वर्णन से विश्वकर्मा की उत्पत्ति का वर्णन मिलता है, इसके अनुसार सभी देवता सम्मिलित होकर जल के गर्भधारण के लिए कारणरूप में विद्यमान थे, उन सभी देवताओं ने स्वयं को इस सृष्टियज्ञ में सम्मिलित होते हुए देखा। अतः सभी देवताओं की शक्ति से जल ने गर्भधारण किया।

तमिद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवाः समगच्छन्त विश्वे।

अजस्य नाभावध्येकमर्पितं यस्मिन्विश्वानि भुवनानि तस्थुः।।

जल ने विश्वकर्मा को गर्भ में धारण किया था, वहीं सभी देव एक-दूसरे से मिले हुए थे, उस जन्मरहित की नाभि में ब्रह्माण्ड स्थित है, उसी में सारा संसार स्थित है।

यहाँ विश्वकर्मा की उत्पत्ति को जल के गर्भधारण से लिया गया है। समस्त प्रकार की सृष्टियों का निर्माता विश्वकर्मा उस गर्भ में स्थित हुआ। सभी प्रकार के देव उस गर्भ के उत्पत्ति काल में मिले हुए थे, अर्थात् वे सभी भी इस उत्पत्ति सम्मिलित और सहायक थे। उसी गर्भस्थ विश्वकर्मा की नाभि में ही समस्त चराचर ब्रह्माण्ड स्थित है। इस प्रकार आगे वर्णन किया गया है –

न तं विदाथ य इमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव।

नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थशासश्चरन्ति।।

जिस विश्वकर्मा ने सभी प्राणियों को उत्पन्न किया, उसे तुम नहीं जानते। तुम्हारा हृदय उसे जानने की योग्यता नहीं रखता। लोग अज्ञानरूपी पालने से ढककर अलग-अलग प्रकार की बातें करते हैं। वे भोजन करते हुए भांति-भांति की स्तुतियां करते हैं, और स्वर्ग में जाने का प्रयत्न करते हैं।

अर्थात् सभी प्राणियों के उत्पत्तिकर्ता विश्वकर्मा को सामान्य मनुष्य नहीं जान सकता। जो स्वर्ग की इच्छा रखने वाले हैं तथा एव विशेष प्रकार के उद्देश्य की प्राप्ति में लगे हुए हैं, वे सभी विश्वकर्मा को जानने योग्य नहीं हैं। इस प्रकार विश्वकर्मा को नेति-नेति कहकर अनन्त शक्तिसम्पन्न स्वरूप में वर्णित किया गया है। विश्वकर्मा का वर्णन इसी प्रकार यजुर्वेद में भी मिलता है –

विश्वकर्मन् हविषा वर्धनेन त्रातामिन्द्रमकृणोरवध्यम्।

तस्मै विशः समनमन्त पूर्वीरयमुग्रो विहव्यो यथासत्।।

अर्थात् हे विश्वकर्मा आप विश्व के रचयिता हैं। आपने ही हवियों से इन्द्र की बढोतरी की। आपने इन्द्रदेव को संसार का रक्षक बनाया। आपने ही इन्द्र को अवध्य बनाया। वह इन्द्र अपूर्व, उग्र और सर्वसमर्थ हैं।

यजुर्वेद में विश्वकर्मा को ही सर्वशक्तिमान् तथा देवताओं को कार्यविभाजन करने वाला तथा शक्तियां प्रदान करने वाला वर्णित किया गया है।

इस प्रकार वैदिक वाङ्मय के अध्ययन से पता चलता है कि विश्वकर्मा ही समस्त सृष्टि के निर्माता हैं। वे ही संचालक हैं तथा नियन्ता भी वही हैं। उनकी उत्पत्ति में सभी प्रकार की शक्तियाँ एकत्रित हुई, जिसके परिणामस्वरूप जल ने गर्भधारण किया और उस गर्भ से ही विश्वकर्मा उत्पन्न हुए। उत्पत्ति के पश्चात् उन्होंने ही तीनों लोकों की स्थापना की तथा सभी देवताओं को शक्तियाँ प्रदान की, जिससे वे सृष्टि के संचालन में अपनी-अपनी भूमिका का निर्वहण कर सकें।

अभ्यास प्रश्न

प्र.1. समस्त ज्ञान-विज्ञान का स्रोत क्या है?

प्र.2. विश्वकर्मा का अर्थ क्या है?

प्र.3. वाचस्पत्यम् के अनुसार विश्वकर्मा का अर्थ बताइये।

प्र.4. परमेश्वर के गुणों की संज्ञा क्या किस नाम से प्रसिद्ध है?

प्र.5. ऋग्वेद के किस मण्डल में विश्वकर्मा सूक्त वर्णित है।

प्र.6. विश्वकर्मा ने सर्वप्रथम जल में किसे उत्पन्न किया?

प्र.7. सप्तऋषियों से भी ऊँचा स्थान किसका है?

प्र.8. सृष्टि का संचालक कौन है?

प्र.9. सृष्टिरचना में सप्तऋषियों की क्या भूमिका है?

प्र.10. विश्वकर्मा की उत्पत्ति किससे हुई?

प्र.11. विश्वकर्मा की नाभि में क्या स्थित है?

प्र.12. इन्द्र को रक्षक तथा अवध्य किसने बनाया?

2.4 पौराणिक तथा संस्कृत वाङ्मय में विश्वकर्मा

विश्वकर्मा को पुराणों में विश्व का रचनाकर्ता के रूप में परिभाषित किया गया है। विश्व में सभी प्रकार की स्थापनाएं विश्वकर्मा द्वारा ही की गई हैं। कहीं-कहीं विश्वकर्मा को देवस्थपति नाम से भी संबोधित किया गया है। जो मान्यता विश्वकर्मा को स्थपति के रूप में वर्तमान में प्राप्त है, वह मान्यता विश्वकर्मा को वैदिक-काल तथा पौराणिक काल में ही प्राप्त हो चुकी थी। ब्राह्मणग्रन्थों, गृह्यसूत्रों तथा पुराणों के अध्ययन के आधार पर विश्वकर्मा समस्त जगत् की स्थापना करने वाले स्थपति के रूप में प्रतिष्ठित हैं। विश्वकर्मा के प्रति विद्वानों की प्रबल मान्यता है कि वे सर्वद्रष्टा, सर्वस्रष्टा तथा सर्वज्ञाता हैं। सृष्टि की उत्पत्ति, धारण और विलय के संचालक भी विश्वकर्मा ही हैं।

महाभारत के खिल भाग सहित सभी पुराणों में विश्वकर्मा को प्रभात पुत्र माना गया है, यही प्रभातपुत्र आदि-विश्वकर्मा भी माने गए हैं। स्कंद पुराण के प्रभात खण्ड में विश्वकर्मा का जो वर्णन मिलता है, प्रायः किंचित पाठ भेद से सभी पुराणों में यही निम्न श्लोक मिलता है -

बृहस्पते भगिनी भुवना ब्रह्मवादिनी।
प्रभासस्य तस्य भार्या वसूनामष्टमस्य च।
विश्वकर्मा सुतस्तस्यशिल्पकर्ता प्रजापतिः॥

अर्थात् महर्षि अंगिरा के ज्येष्ठ पुत्र बृहस्पति की बहन भुवना जो ब्रह्मविद्या जानने वाली थी, वह भुवनाआठवें वसु महर्षि प्रभास की पत्नी बनी और उससे सम्पूर्ण शिल्प विद्या के ज्ञाता प्रजापति विश्वकर्मा का जन्म हुआ। पुराणों में कहीं कहीं भुवना का वर्णन योगसिद्धा, वरस्त्री के नाम सेभी मिलता है।शिल्पशास्त्र का कर्ता वह भगवान विश्वकर्मा देवताओं का आचार्य है।सम्पूर्ण सिद्धियों का जनक है।वह प्रभास ऋषि का पुत्र है और बृहस्पति का भानजा हैं, अंगिरा का दौहितृ (दोहिता) है। अंगिरा कुल से विश्वकर्मा का सम्बन्ध प्रायः सभी विद्वान स्वीकार करते हैं। जिस तरह भारत मे विश्वकर्मा को शिल्पशास्त्र का प्रवर्तकदेवता माना जाता है तथा सभी कारीगर, शिल्पकार और वास्तुकार उनकी पूजा करते हैं, कुछ उसी तरह चीन में 'लु पान' को शिल्पियों का देवता माना जाता है।प्राचीन ग्रन्थों के मनन-अनुशीलन से विदित होता है कि जहाँ ब्रह्मा, विष्णु और शिव की वन्दनाअर्चना होती है, वहीं भगवान विश्वकर्मा का भी स्मरण अवश्य ही किया गया है।

हम अपने प्राचीन ग्रन्थों, उपनिषदों एवं पुराण आदि का अवलोकन करें तो प्राप्त होता है कि आदि काल से ही विश्वकर्मा अपने विशिष्ट ज्ञान एवं विज्ञान के कारण न केवल मानवों द्वारा अपितु देवगणों द्वारा भी पूजे जाते रहे हैं। भगवान विश्वकर्मा के आविष्कार एवं निर्माण कार्यों के सन्दर्भ में वर्णन मिलता है कि इन्द्रपुरी, यमपुरी, सुदामापुरी, शिवमण्डलपुरी, वरुणपुरी, कुबेरपुरी, द्वारिकापुरीआदि का निर्माण इनके द्वारा ही किया गया। पुष्पक विमान का निर्माण तथा सभी देवताओं के भवन और उनके दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुएं भी विश्वकर्मा द्वारा ही बनाई गई हैं।महाभारत में वर्णित कर्ण का कुण्डल, भगवान विष्णु का सुदर्शन चक्र, भगवान शंकर का त्रिशूल और यमराज का कालदण्ड इत्यादि वस्तुओं का निर्माण भगवान विश्वकर्मा ने ही किया है।

शिल्प व स्थापत्य के शास्त्रों में विश्वकर्मा स्थापत्यशास्त्र के प्रवर्तक माने गए हैं। शिल्प तथा स्थापत्य के महान देवता के साथ ही विश्वकर्मा शिल्पशास्त्रियों के भी देव हैं। उनके इसी यशपूर्ति के लिए स्वामी कलहस्ति मुनि ने विश्वकर्मपुराण की रचना की। इसकी मूल पाण्डुलिपि जर्मनी की ओरिएण्टल लाइब्रेरी में विद्यमान है। यह ग्रन्थ सर्वप्रथम एक शताब्दी पूर्व संस्कृत से कन्नड़ भाषा में छपकर तैयार हुआ, इसके बाद इसका देवनागरी प्रकाशन भी हुआ है। इस पुराण के आधार पर विश्वकर्मा को ब्रह्मा का

पुत्र बताया गया है। इसके अनुसार ब्रह्मा के चार मुखों से चार पुत्र उत्पन्न हुए, इनमें पूर्व मुख से विश्वकर्मा, दक्षिणी मुख से मय, उत्तरी मुख से त्वष्टा, तथा पश्चिमी मुख से मनु उत्पन्न हुए।मतान्तर सेभगवान विश्वकर्मा ने ब्रह्मा की उत्पत्ति करके उन्हे प्राणीमात्र के सृजन करने का वरदान दिया और उनके द्वारा *84* लाख योनियों को उत्पन्न किया। श्री हरि विष्णु की उत्पत्ति कर उन्हे जगत् में उत्पन्न सभी प्राणियों की रक्षा और भरण-पोषण का कार्य सौंपा। प्रजा का ठीक सुचारु रूप से पालन और संचालन करने के लिये एक अत्यंत शक्तिशाली सुदर्शन चक्रभी उन्हें प्रदान किया। संसार के प्रलय के लिये शिवकी उत्पत्ति की। उन्हें डमरु, कमण्डल, त्रिशूल आदि दिए। उनके ललाट पर प्रलयकारी तीसरा नेत्र दिया और उन्हे प्रलय की शक्तिभी प्रदान की। पुराणों और प्राचीनग्रन्थों में विश्वकर्मा के पाँच स्वरूपों और अवतारों का वर्णन प्राप्त होता है। ये निम्न हैं –

- विराट विश्वकर्मा – सृष्टिके रचयिता
- धर्मवंशी विश्वकर्मा – महान शिल्पविज्ञान के प्रवर्तक प्रभास पुत्र
- अंगिरावंशी विश्वकर्मा –आदिविज्ञान विधाता, वसु पुत्र
- सुधन्वा विश्वकर्मा – वैदिक ऋषि
- भृंगुवंशी विश्वकर्मा - उत्कृष्ट शिल्प विज्ञानाचार्य (शुक्राचार्य के पौत्र)

शिल्प तथा स्थापत्य के महान देवता विश्वकर्मा का वर्णन प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में देवस्थपति के रूप में प्राप्त होता है। मत्स्यपुराण में वर्णित वास्तुशास्त्र के अष्टादश प्रवर्तकों में विश्वकर्मा का नाम है। वामनपुराण, स्कन्दपुराण, विष्णुपुराण आदि में पुराणों में भी विश्वकर्मा रचित अद्भुत शिल्पों की चर्चा प्राप्त होती है। वाल्मीकिरामायण में विश्वकर्मा रचित लंकापुरी का मनोहारि वर्णन प्राप्त होता है। महाभारत के भी अनेक स्थलों में विश्वकर्मा रचित नगरादि का वर्णन प्राप्त होता है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.13. विश्वकर्मा को पुराणों में किस प्रकार परिभाषित किया गया है?

प्र.14. देवस्थपति कौन हैं?

प्र.15. पुराणों के अनुसार विश्वकर्मा किस वसु के पुत्र हैं?

प्र.16. विश्वकर्मा की माता का क्या नाम है?

प्र.17. विश्वकर्मा द्वारा बनाये गए प्रमुख पुरियाँ कौन कौन सी हैं?

प्र.18. विश्वकर्मपुराण की रचना किसने की?

प्र.19. विश्वकर्मा के कितने मुख हैं?

प्र.20. विश्वकर्मा ने शिव को क्या प्रदान किया?

प्र.21. विश्वकर्मा ने विष्णु को क्या प्रदान किया?

प्र.22. पुराणों में विश्वकर्मा के कितने अवतारों का वर्णन मिलता है?

2.5 वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में विश्वकर्मा

जैसा कि आप जानते हैं कि विश्वकर्मा स्थापत्यशास्त्र के प्रवर्तक के रूप में सर्वमान्य हैं। स्थापत्य शास्त्र को ही वर्तमान में वास्तुशास्त्र के नाम से जाना जाता है। यही वास्तुशास्त्र वैदिक साहित्य में स्थापत्यशास्त्र नाम से वर्णित है। वास्तुशास्त्र के प्रमुख ग्रन्थों में विश्वकर्मा को विश्वस्रष्टा के रूप में बताया गया है। कुछ ग्रन्थों के आधार पर विश्वकर्मा देवताओं के स्थपति अर्थात् वास्तुकर्ता हैं। देवताओं के महलों, नगरों तथा अन्य वस्तुओं की रचनाएं तथा स्थापनाएं विश्वकर्मा द्वारा ही की गई। प्रासादमण्डन नामक ग्रन्थ में सूत्रधार मण्डन ने विश्वकर्मा को सृष्ट्याद्य सूत्रधार कहा है, इसके अनुसार विश्वकर्मा सृष्टि के आदि सूत्रधार हैं। यथा –

सृष्ट्याद्य सूत्रधारस्य प्रासादा विश्वकर्मणा।

प्रासादमण्डनं ब्रूते सूत्रधारस्तु मण्डनः।।

अर्थात् इस संसार के आद्य सूत्रधार भगवान् विश्वकर्मा के कृपा प्रसाद स्वरूप मैं सूत्रधार मण्डन इस प्रासादमण्डन ग्रन्थ की रचना करता हूं। अतः विश्वकर्मा समस्त सृष्टि के योजनाकार के रूप में प्रसिद्ध हुए। इसी प्रकार राजवल्लभवास्तुशास्त्र में विश्वकर्मा के स्वरूप का वर्णन किया गया है। वहां भी विश्वकर्मा को तीनों लोकों का रचयिता तथा संचालक ही माना गया है-

कम्बासूत्राम्बुपात्रं वहतिकरतले पुस्तकं ज्ञानसूत्रं

हंसारूढस्त्रिनेत्रः शुभमुकुटशिरः सर्वतोवृद्धकायः।

त्रैलोक्यं येन सृष्टं सकलसुरगृहं राजहर्म्यादिहर्म्यं

देवोऽसौ सूत्रधारो जगदखिलहितः पातु नो विश्वकर्मा।।

राजवल्लभवास्तुशास्त्र में विश्वकर्मा के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा गया है कि जिनके एक हाथ में कंबा, गज, दूसरे में सूत्र, तीसरे में कमण्डल तथा चौथे में पुस्तक है। जिनके सिर पर शुभ मुकुट, जो त्रिनेत्रधारी और हंस पर सवार हैं, ऐसे भगवान विश्वकर्मा ने तीनों ही लोकों की रचना की है, और जन सामान्य के लिए गृहों का निर्माण किया है, वे सदैव हमारे रक्षक सिद्ध हों। इस श्लोक में विश्वकर्मा को वृद्धकाय पुरुष के रूप में प्रस्तुत किया गया है, यह उनके ज्ञान का प्रतीक है। क्षीरार्णव में भी भगवान विश्वकर्मा को समस्त चराचर जगत तथा समस्त त्रैलोक्य का रचयिता माना गया है, जैसे –

येनेदं सप्तलोकांस्त्रैलोक्यं सचराचरम्।

तस्मै ईशाय नित्याय नमः श्री विश्वकर्मणे।।

अव्यक्तं व्यक्तता नित्यं येन विश्वचराचरम्।

तस्मै ईशाय नित्याय नमः श्रीविश्वकर्मणे।।

अर्थात् जिस विश्वकर्मा ने समस्त प्रकार की सृष्टियां की हैं तथा तीनों लोको में एवं सप्तलोकों में जो कुछ भी चराचर सृष्टि है, उन सभी के रचयिता भगवान् विश्वकर्मा को नमस्कार है। इन लोकों में जो कुछ भी अव्यक्त और व्यक्त रूप से चराचर है, उसकी रचना करने वाले नित्य ईश्वर श्रीविश्वकर्मा को मेरा नमस्कार है। समराङ्गणसूत्रधार नामक प्रसिद्ध वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थ में विश्वकर्मा के चार मानसपुत्रों का वर्णन इस प्रकार मिलता है –

अथ पृष्ठे हिमगिरेः शशाङ्कशुचिरोचिषि।

विस्तीर्णासनमासीनं सर्वज्ञमथ संस्मृताः।

आययुर्विश्वकर्माणं चत्वारो मानसाः सुताः।।

जयो विजयसिद्धार्थौ चतुर्थश्चापराजितः।

तमुपगम्य शिरसा नेमुः प्राञ्जलयो मुनिम्।।

अर्थात् सिद्धों एवं देवाङ्गनाओं से भुक्त, मणिमय तथा मनोरम गुफाओं वाले व चन्द्रमा की स्वच्छ कुमुदिनी से मण्डित हिम शिखर पर विस्तीर्ण आसन पर बैठे हुए सर्वज्ञ भगवान् विश्वकर्मा के पास उनके चारों मानसपुत्र जय, विजय, सिद्धार्थ तथा अपराजित उनके स्मरण करने पर उपस्थित हुए और उन्होंने भगवान विश्वकर्मा को नमस्कार किया। इसके बाद अपने पुत्रों को विश्वकर्मा कहते हैं –

रम्याणि नगरोद्यानसभास्थानान्यथो मया।

सुरासुरोरगादीनां निर्मितान्यात्मबुद्धितः।।

गत्वोर्वीं वैन्यनृपतेर्वत्साः प्रियचिकीर्षया।

नगरग्रामखेटादीन् करिष्यामि पृथक्-पृथक्।।

विश्वकर्मा कहते हैं कि मैंने अपनी बुद्धि से अभी तक तीनों लोकों में सुरों, असुरों एवं नागों के मनोहर नगर, उद्यान तथा सभास्थान आदि की स्थापना की है। अब मैं भूतल पर मृत्युलोक में जाकर नगर-ग्राम-खेट आदि को अलग-अलग बनाऊँगा।

इस प्रकार वास्तुशास्त्र के प्रथम स्थपति के रूप में विश्वकर्मा प्रसिद्ध हैं। वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्य भी विश्वकर्मा ही हैं। एक अन्य विचार के अनुसार भारतीय वास्तुशास्त्र की दो परम्पराएं हैं, एक उत्तर भारतीय तथा दूसरी दक्षिण भारतीय। इन दोनों के प्रवर्तक आचार्य विश्वकर्मा तथा मय कहलाए गए हैं। उत्तर भारतीय वास्तुकला को देवशिल्प तथा दक्षिण भारतीय वास्तुकला को असुरशिल्प भी कहा जाता है। अनेकों वर्णनों के अनुसार विश्वकर्मा को देवशिल्पी कहा गया है। परन्तु वैदिक वाङ्मय में ऐसा विभाजन नहीं मिलता, उसके अनुसार स्थापत्य के आचार्य विश्वकर्मा हैं और संसार की स्थापना का कार्य भी विश्वकर्मा ने ही किया है। अतः दानवराज आचार्य मय भी स्वयं को दानवों का विश्वकर्मा कह कर गौरवान्वित अनुभव करते हैं-

अहं हि विश्वकर्मा दानवानां महाकविः।।

अभ्यास प्रश्न

प्र.23. अथर्ववेद का उपवेद क्या है?

प्र.24. स्थापत्यशास्त्र को वर्तमान में क्या कहते हैं?

प्र.25. वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में विश्वकर्मा को क्या माना गया है?

प्र.26. प्रासादमण्डन के अनुसार सृष्ट्याद्य सूत्रधार कौन है?

प्र.27. समराङ्णसूत्रधार के अनुसार विश्वकर्मा के कितने मानसपुत्र हैं?

प्र.28 विश्वकर्मा के चार मानस पुत्रों के नाम बताइये।

प्र.29. वास्तुशास्त्र की कितनी परम्पराएं हैं?

प्र.30. उत्तर भारतीय तथा दक्षिण भारतीय परम्पराओं को क्या कहा जाता है?

2.6 सारांश

भारतीय ब्रह्माण्ड विज्ञान में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्तों में प्रमुख विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि की रचना है। वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक संस्कृत साहित्य तक सभी ग्रन्थों में विश्वकर्मा को सृष्टि के विधाता के रूप में परिभाषित किया गया है। ऋग्वेद की एक ऋचा के अनुसार सृष्टिकर्ता तथा सृष्टिसंचालक दोनों ही विश्वकर्मा हैं। पौराणिक साहित्य के आधार पर हमें विश्वकर्मा के पांच अवतारों का वर्णन प्राप्त होता है। इसके पश्चात् वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों में भी विश्वकर्मा समग्र सृष्टि के रचयिता रूप में ही स्वीकार किए गए हैं। इस प्रकार विश्वकर्मा समग्र सृष्टि के रचनाकार हैं। सभी प्रकार की वास्तु रचनाएं एवं स्थापनाएं भी विश्वकर्मा द्वारा ही की गई हैं।

2.7 कठिन शब्दार्थ

ब्रह्माण्डोत्पत्ति	- ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति
रचयिता	- रचना करने वाला
विचारक	- विचार करने वाले
सृष्टिविज्ञान	- रचना का विज्ञान
सर्वमान्य	- सभी द्वारा स्वीकृत
विश्वरचयिता	- विश्व की रचना करने वाला

सृजन - उत्पत्ति

पौराणिक - पुराणों से संबन्धित

जगत्प्रसिद्ध - संसार में प्रसिद्ध

स्थापत्य - स्थापना से संबन्धित

चराचर - चर और अचर, जीव और निर्जीव

ऋचा - मंत्र

जिज्ञासा - जानने की इच्छा

सर्वशक्तिमान् - सबसे अधिक शक्तिशाली

संचालक - चलाने वाला

अभिलाषाएं - इच्छाएं

पालक - पालन करने वाला

त्रिदेवसिद्धान्त - तीन देवों का सिद्धान्त

गर्भधारण - गर्भ को धारण करना

अवध्य - जिसका वध न हो सके

सर्वसमर्थ - सभी कार्यों को करने में समर्थ

कार्यविभाजन - कार्य का बंटवारा

नियन्ता - नियन्त्रित करने वाला

निर्वहण - निभाना

देवस्थपति - देवताओं का स्थपति

प्रबल - गहरी, अधिक बलशाली

सर्वद्रष्टा - तीनों कालों को देखने वाला

सर्वस्रष्टा - सभी की उत्पत्ति करने वाला

सर्वज्ञाता	- सब कुछ जानने वाला
विलय	- लय, नष्ट होना, समाप्त होना
आदि-विश्वकर्मा	- पहला विश्वकर्मा
किंचित्	- कुछ, थोड़ा
अनुशीलन	- अध्ययन
अवलोकन	- देखना
आविष्कार	- खोज
स्थापत्यशास्त्र	- स्थापना का शास्त्र
सृष्ट्याद्य	- सृष्टि का पहला
त्रिनेत्रधारी	- तीन आंखों को धारण करने वाला
वृद्धकाय	- वृद्ध शरीर वाला
त्रैलोक्य	- तीनों लोक
देवाङ्गनाएं	- देवों की पत्नियां
सुर	- देवता
असुर	- राक्षस

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. समस्त ज्ञान विज्ञान के स्रोत वेद हैं।
2. विश्वकर्मा का अर्थ है - विश्व का रचनाकार।
3. विश्वेषु कर्म व्यापारो यस्य स विश्वकर्मा।
4. परमेश्वर के गुणों की संज्ञा देवता नाम से प्रसिद्ध है।
5. ऋग्वेद के दशम मण्डल में 81वें तथा 82वें सूक्त के देवता विश्वकर्मा हैं।
6. विश्वकर्मा ने सर्वप्रथम द्यावापृथिवी को उत्पन्न किया।
7. सप्तऋषियों से भी ऊंचा स्थान विश्वकर्मा का है।

8. सृष्टि के संचालक विश्वकर्मा हैं।

9. सप्तऋषियों को स्थावर-जङ्गम रूपी विश्व के निर्माण में सहायक माना है।

10. विश्वकर्मा की उत्पत्ति जल के गर्भधारण से हुई।

11. विश्वकर्मा की नाभि में ब्रह्माण्ड तथा सारा जगत स्थित है।

12. इन्द्र को रक्षक विश्वकर्मा ने बनाया तथा उसे अवध्य भी बनाया।

13. विश्वकर्मा को पुराणों में विश्व का रचनाकर्ता के रूप में परिभाषित किया गया है।

14. देवस्थपति विश्वकर्मा हैं।

15. पुराणों के अनुसार विश्वकर्मा प्रभास के पुत्र हैं।

16. विश्वकर्मा की माता का नाम भुवना है।

17. इन्द्रपुरी, यमपुरी, सुदामापुरी, शिवमण्डलपुरी, वरुणपुरी, कुबेरपुरी, द्वारिकापुरी आदि का निर्माण इनके द्वारा ही किया गया।

18. विश्वकर्मपुराण की रचना स्वामी कलहस्ति मुनि ने की।

19. विश्वकर्मा के चार मुख हैं।

20. संसार के प्रलय के लिये शिव की उत्पत्ति की, उन्हे डमरु, कमण्डल, त्रिशुल आदि दिए, उनके ललाट पर प्रलयकारी तीसरा नेत्र दिया और उन्हे प्रलय की शक्तिभी प्रदान की।

21. विश्वकर्मा ने विष्णु की उत्पत्ति कर उन्हे जगत् में उत्पन्न सभी प्राणियों की रक्षा और भगण-पोषण का कार्य सौंपा। प्रजा का ठीक सुचारु रूप से पालन और संचालन करने के लिये एक अत्यंत शक्तिशाली सुदर्शन चक्र भी उन्हें प्रदान किया।

22. पुराणों में विश्वकर्मा के पांच अवतारों का वर्णन मिलता है।

23. अथर्ववेद का उपवेद स्थापत्यवेद है।

24. स्थापत्यवेद को वर्तमान में वास्तुशास्त्र कहते हैं।

25. वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में विश्वकर्मा को वास्तुशास्त्र का प्रवर्तक माना गया है।

26. प्रासादमण्डन के अनुसार सृष्ट्याद्य सूत्रधार विश्वकर्मा हैं।

27. समराङ्गणसूत्रधार के अनुसार विश्वकर्मा के चार मानसपुत्र हैं।

28. विश्वकर्मा के चार मानसपुत्र जय, विजय, सिद्धार्थ तथा अपराजित हैं।

29. वास्तुशास्त्र की दो परम्पराएं हैं, उत्तरभारतीय तथा दक्षिण भारतीय परम्परा।

30. उत्तर भारतीय वास्तुकला को देवशिल्प तथा दक्षिण भारतीय वास्तुकला को असुरशिल्प भी कहा जाता है।

व्याख्यात्मक प्रश्न

प्र.1. वैदिक वाङ्मय के अनुसार विश्वकर्मा का वर्णन कीजिए?

प्र.2. पौराणिक वाङ्मय में विश्वकर्मा का वर्णन किस प्रकार किय गया है? वर्णन करें।

प्र.3. स्थापत्यशास्त्र तथा विश्वकर्मा विषय पर निबन्ध लिखिये।

प्र.4. विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि की समीक्षा करें।

2.8 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थ सूची

10. ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2016

11. खगोलीय पिण्डों का परिक्रमण, कोपर्निकस, व्याख्या, तिवारी, श्रवणकुमार एवं पाण्डेय रमाकान्त, वाराणसी, हिन्दी प्रकाशन समिति, सन् 1972

12. गोलपरिभाषा, झा, सीताराम, दरभङ्गा, बिहार, श्रीसीताराम पुस्तकालय, संवत् 2027

13. भुवनकोश विमर्श, प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स दिल्ली, वर्ष 2004

14. यजुर्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2015

15. श्रीमद्भागवतपुराणम्, वेदव्यास,गोरखपुर, गीताप्रेस, संवत् 2059

16. श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2048

17. समराङ्गणसूत्रधार, भोजराज, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी 2011

18. वास्तुशास्त्रविमर्श, शोधपत्रिका, श्री ला.ब.शा.रा.सं.विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

ईकाई -3 विराट् पुरुष द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति

पाठ संरचना

*3.1*प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 वैदिक साहित्य में विराट्पुरुष

3.4 पुरुषसूक्त

3.5 पौराणिक साहित्य में विराट्पुरुष

3.6 श्रीमद्भगवद्गीता में विराट्पुरुष

3.7 विराट्पुरुष द्वारा सृष्टि

3.8 सारांश

3.9 कठिन शब्द

3.9.1 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.9.2 व्याख्यात्मक प्रश्न

3.10 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थसूची

3.1 प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान परम्परा में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के अनेकों संदर्भ वैदिक, पौराणिक तथा संस्कृत साहित्य में हमें मिल जाते हैं। उन सभी प्रमाणों के आधार पर ब्रह्माण्डोत्पत्ति को हम चार सिद्धान्तों में बांटकर देखते हैं। माना जाता है कि इस समस्त सृष्टि का कोई एक रचयिता भी अवश्य ही होगा, इस कल्पना की सार्थकता ब्रह्मा द्वारा सृष्टि, प्रजापति द्वारा सृष्टि, विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि तथा विराट्पुरुष द्वारा सृष्टि के सिद्धान्तों द्वारा जानी और समझी जाती है। इन सभी सिद्धान्तों में विराट्पुरुष द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का सिद्धान्त बहुत ही महत्वपूर्ण है। विराट्पुरुष को आदिपुरुष भी कहा जाता है। माना जाता है कि सर्वप्रथम विराट्पुरुष ही समग्र सृष्टि का नियन्ता है। सभी प्रकार की सृष्टियाँ इसी विराट्पुरुष से उत्पन्न होती हैं तथा विराट्पुरुष द्वारा ही संचालित होती हैं।

संस्कृत साहित्य परम्परा में विराट्पुरुष का वर्णन अनेक स्थानों पर मिलता है। सर्वप्रथम ऋग्वेद के पुरुषसूक्त में विराट्पुरुष का वर्णन मिलता है – **"पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्"**। इस प्रकार ऋग्वेद में विराट्पुरुष के सर्वकालत्व तथा सर्वव्यापकत्व का वर्णन मिलता है। इसी प्रकार से विराट्पुरुष का वर्णन श्रीमद्भगवद्गीता में भी प्राप्त होता है। कुरुक्षेत्र के समराङ्गण में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को विराट्पुरुष के दर्शन करवाए थे। पौराणिक साहित्य में भी इसी विराट्पुरुष का विस्तार से वर्णन मिलता है। वैदिक एवं पौराणिक सन्दर्भों सेमाना जाता है कि इसी विराट्पुरुष से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ। इसी ब्रह्माण्ड में भूर्भुवादि चतुर्दशलोक, उन लोकों में अनेकों सौर-परिवार, उन सौर परिवारों में अनेकों ग्रह-उपग्रह, उनमें अनेकों सृष्टियां तथा उनमें अनेक प्राणी तथा जीव और अजीव सहित समस्त चराचर जगत की रचना हुई। वैदिक साहित्य में विराट्पुरुष को सहस्रशीर्ष पुरुष के नाम से जाना जाता है। यह सहस्त्रों सिरों वाला तथा सहस्रों हस्तादि अंगों वाला विराट्पुरुष सम्पूर्ण सृष्टि का प्रतीक है, इसी विराट् पुरुष से समस्त सृष्टि उत्पन्न होती है तथा इसी में समाहित हो जाती है। यह विराट् पुरुष एक से अनेक के रूप में विस्तार करता है। वैदिक तथा पौराणिक संन्दर्भों के आधार पर हम कह सकते कि समस्त द्यौ, आकाश, दिशाएं, जीव जगत् इसी विराट्पुरुष द्वारा उत्पन्न हैं। वे नष्ट भी अवश्य होते हैं, अतः विनाश के बाद ये सभी इसी में समाहित हो जाते हैं। प्रस्तुत इकाई में हम विराट्पुरुष की परिकल्पना का अध्ययन कर ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्तों को समझने का प्रयास करेंगे।

3.2 अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से हम निम्न विषयों को जान सकेंगे –

- सृष्टि की परिकल्पना में वैदिक चिन्तन को समझ सकेंगे।
- विराट्पुरुष का वैदिक वर्णन पढेंगे तथा पुरुषसूक्त का अध्ययन करेंगे।
- हम विराट्पुरुष के सर्वव्यापकत्त्व के विषय में भारतीय वाङ्मय के सन्दर्भों का अध्ययन करेंगे।
- हमें वैदिक साहित्य, पौराणिक साहित्य तथा अन्य संस्कृत साहित्यों में वर्णित विराट्पुरुष द्वारा की गई सृष्टि का ज्ञान होगा।

3.3 वैदिक साहित्य में विराट्पुरुष

ऋग्वेद में विराट्पुरुष का विस्तृत वर्णन मिलता है। किस प्रकार विराट्पुरुष उत्पन्न हुआ? उसका स्वरूप कैसा है तथा किस प्रकार उस विराट्पुरुष द्वारा समस्त प्रकार की सृष्टियां हुई? ये सब ऋग्वेद के दशम मण्डल के 90वें सूक्त में वर्णित किया गया है। इस सूक्त को पुरुषसूक्त कहते हैं, पुरुष से अर्थ यहां विराट्पुरुष ही है। ऋग्वेद के पुरुषसूक्त में विराट्पुरुष का वर्णन 16 ऋचाओं में किया गया है, जिसके माध्यम से विराट्पुरुष को सर्वशक्तिमान् तथा सभी प्रकार की सृष्टियों का कर्तारूप भी स्वीकार किया गया है। वेदव्यास ने महाभारत में इस पुरुषसूक्त की श्रुतियों का सारांश रूप में वर्णन किया है। शौनक, आपस्तम्भ आदि ऋषियों ने भी पुरुषसूक्त का वर्णन किया है। पुरुषसूक्त में आदिपुरुष के बारे में कहागया है कि यही आदिपुरुष समग्र सृष्टि का मूल है। श्रीमद्भागवत तथा विष्णुपुराण मेंइस विराट्पुरुष का रूप नारायण है। इनका वीरपुरुष के रूप में वर्णन किया है। पुरुषसूक्त में सृष्टि का मूलकारक नारायण को ही कहागया है, वह नारायण सर्वत्र व्याप्त किया हुआ है। वह सबसे अतीत है ।

3.4 पुरुषसूक्त

सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।

स भूमिं सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम्॥1॥

विराट्पुरुष के हजारों सिर, हजार आंखें और हजार चरण हैं। वह धरती को चारों ओर से घेरकर उससे दशाङ्गुल अधिक स्थित है।

विराट्पुरुष के व्यापकत्व का वर्णन इस ऋचा में हमें मिलता है। हजारों सिरों वाला, हजारों आंखों, चरणों, हाथों आदि अंगों वाला पुरुष विस्तृत और विशालस्वरूपधारी है, वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने भीतर समाहित किए हुए है। इस ऋचा में दशाङ्गुल अधिक का अर्थ **"दशाङ्गुलन्याय"** के माध्यम से स्पष्ट होता है। इसके अनुसार पृथ्वी से दशगुना बड़ा जल, जल से दशगुना अग्नि, अग्नि से दशगुना वायु, वायु से दशगुना आकाश, आकाश से दशगुना अहंकार, अहंकार से दशगुना महत्तत्त्व, महत्तत्त्व से दशगुना मूलप्रकृति तथा मूलप्रकृति से दशगुना विराट्पुरुष का स्वरूप है।

पुरुष एवेदम् यत् भूतम् यच्च भाव्यम्।

उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति॥2॥

जो कुछ भी हो चुका अथवा होने वाला है, वह सब विराट्पुरुष ही जानता है।वह अमृत का स्वामी है, क्योंकि वह कारण अवस्था छोड़कर जगत् अवस्था को धारण करता है। इस प्रकार प्राणी उसको भोगते हैं।

ऋचा में विराट्पुरुष के सर्वकालत्व को परिकल्पित किया गया है। इसके अनुसार भूत, वर्तमान तथा भविष्य का नियन्ता भी यही विराट्पुरुष है क्योंकि जो हुआ है, वह विराट्पुरुष का ही स्वरूप है, जो है वह भी विराट्पुरुष ही है और जो होगा वह भी विराट्पुरुष ही होगा। विराट्पुरुष को यहाँ अमृत का स्वामी भी कहा गया है, अर्थात् यह विराट्पुरुष अमृतस्वरूप है, सर्वशक्तिमान् है तथा अमर है और यह कारणरूप न होकर कार्यरूप भी है।

एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः।

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि॥3॥

यह सारा ब्रह्मांड विराट्पुरुष की महिमा है। वे स्वयं इससे बड़े हैं। सभी प्राणी उनके चौथाई अंश हैं। इनके तीन मरणरहित अंश दिव्यलोक में रहते हैं।

इस प्रकार विराट्पुरुष सभी प्रकार की सृष्टियों का स्वरूप है, सभी प्रकार की सृष्टियाँ इसी विराट्पुरुष में उत्पन्न होती हैं तथा नष्ट होती हैं। विराट्पुरुष का स्वरूप

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड से भी बड़ा है। ब्रह्माण्डादि सृष्टियाँ तथा सभी प्राणी जो भी दृश्यमान् जगत् में विद्यमान दिखते हैं, वे सब व्यक्त है एवं विराट्पुरुष का चतुर्थांश भाग हैं, और इनके शेष तीन भाग अव्यक्तस्वरूप में दिव्यलोक में रहते हैं।

त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोस्येहा भवत्पुनः।

ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि॥4॥

तीन चरणों वाले विराट्पुरुष ऊपर उठे। उनका केवल एक चरण यहां स्थित रहा। इसके पश्चात् वे भोजन करने वाली (भोग्य) एवं भोजन न करने वाली (अभोग्य) वस्तुओं के रूप में व्याप्त हुए।

इस ऋचा का विस्तार हमें पुराणों में मिलता है। पौराणिक साहित्य में वामनावतार का वर्णन सम्भवतः इसी ऋचा से प्रेरित है। वामनावतार भगवान ने विराट्स्वरूप धारण कर तीन पग भूमिदान माँगा। राजा बलि द्वारा तीन पग भूमिदान के संकल्प का बाद वामनावतार भगवान ने विराट् रूप धारण कर समस्त पृथ्वी को एक चरण में नाप लिया। ऋचा में भी एक चरण की चर्चा की गई है। भोज्याभोज्य पदार्थों के रूप में भी विराट्पुरुष का वर्णन किया गया है। इसके अनुसार सभी प्रकार का दृश्यादृश्य जगत् इसी विराट्पुरुष का स्वरूप है।

ततो विराडजायत विराजो अधिपूरुषः।

सजातो अत्यरिच्यत पश्चात् भूमिमथो पुरः॥5॥

उस आदिपुरुष से ब्रह्माण्डरूपी विराट् उत्पन्न हुआ। ब्रह्माण्डरूपी विराट् से अनेक पुरुष उत्पन्न हुए। उत्पन्न होने के पश्चात् वह ब्रह्माण्ड से बड़ा हुआ। इसके बाद उसने भूमि बनाई और भूमि से जीवों का शरीर बनाया।

सर्वप्रथम आदिपुरुष से ब्रह्माण्ड का आविर्भाव हुआ, इसी परिकल्पना के आधार पर पुराणों में भगवान् से सृष्ट्युत्पत्ति का वर्णन प्राप्त होता है। इस ब्रह्माण्ड में अनेकों सृष्टियां उत्पन्न हुई, उन्हीं सृष्टियों से अनेकों उपसृष्टियां भी उत्पन्न हुई जिसमें भूमि और फिर भूमि से जरायुज, अण्डज, श्वेदज एवं उद्भिज ये चार प्रकार के शरीरों की उत्पत्ति हुई। ये सभी उत्पत्तियां और सृष्टियां-उपसृष्टियां विराट्पुरुष के अन्दर ही समाहित रही, यह विराट्पुरुष इन सभी सृष्टियों से भी बहुत बड़ा था।

यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तो अस्या सीदाज्यम् ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः॥6॥

जब देवों ने पुरुषरूप हवि से काल्पनिक यज्ञ को विस्तार दिया। उस समय वसंत ऋतु को घी, ग्रीष्म को काष्ठ तथा शरद् ऋतु को हवि बनाया।

भारतीय तन्त्रविज्ञान के अनुसार प्रत्येक कार्य की एक योजना होती है, उस योजना के अन्तर्गत ही उस कार्य का प्रतिपादन किया जाता है। वैदिक वाङ्मय में विशेष प्रकार के कार्यों को यज्ञ कहा गया। यज्ञकार्य में आज्य (घी),समिधा (लकडी) एवं हवि (जौ, तिलादि हविष्य पदार्थ) इन तीनों की आवश्यकता होती है। इसी आधार पर ऋषियों ने कल्पना की कि जब सृष्टियज्ञ हुआ, विराट्पुरुष की उत्पत्ति हुई, और सृष्टि का विस्तार प्रारम्भ हुआ, तब उस यज्ञ में देवताओं ने वसंतऋतु को घी, ग्रीष्म ऋतु का समिधा तथा शरद् ऋतु को हविरूप में प्रकल्पित किया। अर्थात् एक वर्ष में तीन ऋतुओं को मुख्यतः प्रतिष्ठापित किया।

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः।

तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये॥7॥

सारी सृष्टि से पहले उत्पन्न पुरुष को यज्ञसाधन के रूप में बलिपशु बनाकर देवों ने काल्पनिक यज्ञ किया। इस साधन में देवों, साध्यों और ऋषियों ने यज्ञ किया।

इस सृष्टियज्ञ में सर्वप्रथम उत्पन्न विराट्पुरुष की यज्ञबलि हेतु कल्पना की। अर्थात् देवादि ने विराट् पुरुषरूपी सृष्टि के भोग्यपदार्थों का दोहन कर सृष्टि को विस्तार दिया। इसीलिए यज्ञ का आयोजक तथा कर्ता देवताओं, सिद्धों तथा ऋषियों को कहा गया है।

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतःसंभृतं पृषदाज्यम्।

पशूस्तांश्चक्रे वायव्या नारण्या ग्रामयश्च ये॥8॥

जिस काल्पनिक यज्ञ में उस सर्वात्मक पुरुष का हवन किया जाता है, उससे दही से मिला हुआ घी उत्पन्न हुआ। उसी से वायुदेव संबन्धित जंगली और ग्रामीण पशु भी उत्पन्न हुए। इस सृष्टि यज्ञ में विराट्पुरुषरूपी भोग्यपदार्थों के मूलतत्त्व से दधियुक्त घृत अर्थात् रसतत्त्वयुक्त वृक्षों के जंगल उत्पन्न हुए तथा उनमें रहने वाले वायुतत्त्वप्रधान पशुओं-पक्षियों तथा अन्य जीवों की उत्पत्ति हुई।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत॥9॥

उस सर्वात्मक पुरुष के काल्पनिक होम वाले यज्ञ से ऋक् और साम उत्पन्न हुए, उसी से छंद उत्पन्न हुए और यजुः की उत्पत्ति हुई।

इसी विराट्पुरुषमय यज्ञ से वेद उत्पन्न हुए तथा ऋचाएं भी उत्पन्न हुई। अतः ज्ञान की उत्पत्ति भी इसी यज्ञ के माध्यम से हुई। जिससे सृष्टि संचालन के नियम सुस्थिर हुए।

तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः।

गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः॥10॥

उसी यज्ञ से घोड़े उत्पन्न हुए, जिनके मुंह में ऊपर-नीचे दोनों ओर दांत थे, उसी से गाएं, बकरियां और भेड़ें उत्पन्न हुई।

सभी प्रकार के पशु इसी सृष्टियज्ञ से उत्पन्न हुए, जिनसे भेड़ें, गौ, घोड़े, बकरियां आदि प्राणी प्रमुख हैं। जो मनुष्यों के कार्यों में सहायक हैं साथ ही पर्यावरण को सन्तुलित करने में भी महत्वपूर्ण हैं।

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।

मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते॥11॥

प्रजापति के प्राणरूप देवों ने जब विराट्पुरुष को संकल्प से उत्पन्न किया, तब उन्हें कितने प्रकार से उत्पन्न किया? उनके मुख, भुजाएं, जंघा और चरण कौन कहलाते हैं?

प्रजापति ब्रह्मा ने अपने संकल्पशक्ति से जिन देवताओं को उत्पन्न किया था और उन्हें सृष्टिरचना का कार्य सौंपा था, वे सभी देवता इस सृष्टियज्ञ में सम्मिलित हुए और उन्होंने सर्वप्रथम विराट्पुरुष का दोहन कर सृष्टि का संकल्प लिया। मन्त्रद्रष्टा ऋषि उस विराट्पुरुष की कल्पना में उसके मुखों, भुजाओं, चरणों आदि के प्रति जिज्ञासा प्रस्तुत कर रहे हैं।

ब्राह्मणोऽस्य मुखामासीद्बाहू राजन्यः कृतः।

ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥12॥

ब्राह्मण इनका मुख हुआ। क्षत्रिय को भुजाएं बनाया गया। इनकी दोनों जंघाओं से वैश्य तथा चरणों से शूद्र हुए।

ब्राह्मणादि चारों वर्णों की सृष्टि विराट्पुरुष द्वारा ही हुई है। इनमें ब्राह्मण को विराट्पुरुष का मुख तथा उसके आस-पास का भाग माना गया है। क्षत्रिय को भुजाओं तथा उसके आस-पास का स्थान, वैश्य को जंघाओं के आस-पास तथा शूद्रवर्ण को चरणों के आस-पास का क्षेत्र माना गया है। इस परिकल्पना में विराट्पुरुष के पूर्णत्व के लिए चारों वर्णों की आवश्यकता बताई गई है। समग्र सृष्टि चारों वर्णों में विभाजित है और ये वर्ण गुण-कर्म के अनुसार परिकल्पित हैं, जैसा कि भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है – चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।

मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥13॥

पुरुष के मन से चन्द्रमा, आंखों से सूर्य, मुख से इन्द्र व अग्नि तथा प्राण से वायु उत्पन्न हुए।

यहाँ उस विराट्पुरुष के मन को चंचलता का प्रतीक ग्रह चन्द्रमा के रूप में परिकल्पित किया गया है। तेजस्वरूप होने के कारण दोनों आंखों को सूर्य, भक्षण तथा पाचन मुख्य कार्य होने के कारण मुख से इन्द्र व अग्नि, वायु के प्राण तत्त्व होने के कारण ही प्राण से वायु की कल्पना की गई है।

नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन्॥14॥

पुरुष की नाभि से अन्तरिक्ष, शीश से द्युलोक, चरणों से भूमि व कान से दिशाएं और लोक उत्पन्न हुए।

उस विराट्पुरुष की नाभि से अन्तरिक्ष की उत्पत्ति तथा स्थिति की कल्पना की गई है। ऊर्ध्व होने के कारण सिर से द्युलोक की परिकल्पना, चरणों से पृथ्वी तथा कानों से दिशाएं व लोकों की परिकल्पना मानी गई है।

सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।

देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम्॥15॥

देवों ने जिस समय काल्पनिक यक्ष का विस्तार करते हुए विराट्पुरुष को बलिपशु के रूप में बांधा, उस समय यज्ञ की सात परिधियां और इक्कीस समिधाएं बनाई गई।

सृष्टि के विस्तार के समय जब यह काल्पनिक यज्ञ किया जा रहा था तब उस यज्ञ की सात परिधियां बनाई गई थी। उन सात परिधियों में सृष्टि के सात आवरण कल्पित किए गए हैं। ये परिधियां पृथ्वी-जल-तेज-वायु-आकाश-अहंकार-महत्तत्त्व हैं, ये क्रमशः एक दूसरे से दशगुणा अधिक हैं। 21 समिधाएं सम्भवतः 21 मूलतत्त्वों को इंगित करती हैं, जिनसे सृष्टि का निर्माण हुआ। सम्भवतः आत्मा, बुद्धि, मन, पञ्च तन्मात्रा (शब्द, स्पर्श, रूप, रस व गन्ध), पञ्च ज्ञानेन्द्रिय (नेत्र, कर्ण, नासिका, जिह्वा एवं त्वक्), पञ्च कर्मेन्द्रिय (मुख, हाथ, पैर, गुदा व जननेन्द्रिय) तथा तीन गुण (सत्व, रजस् व तमस्) 21 तत्त्व हैं।

यज्ञेन यज्ञमयजंत देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

ते ह नाकं महिमानः सचंत यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥16॥

देवों ने मानसिक यज्ञ के द्वारा भौतिक यज्ञ विस्तृत किया, उससे सभी विकारों को धारण करने वाले धर्म सबसे पहले उत्पन्न हुए। जिस स्वर्ग में प्राचीन साध्य एवं देव हैं, उसे उपासक महापुरुष प्राप्त करते हैं।

काल्पनिक यज्ञ के बाद देवताओं ने भौतिक यज्ञ का विस्तार किया जिसमें सृष्टि के विभिन्न प्रकार के विकारों की बात कही गई है। उसमें सर्वप्रथम धर्म की संरचना, उसके उपरान्त सभी स्वर्गादि लोकों कई उत्पत्ति, उन लोकों में विभिन्न प्रकार की सृष्टियां उत्पन्न हुई।

अभ्यास प्रश्न

प्र. 1. विराट्पुरुष का वर्णन ऋग्वेद के किस सूक्त में मिलता है?

प्र. 2. पुरुषसूक्त में कितनी ऋचाएं हैं?

प्र. 3. सहस्रशीर्षा का अर्थ बताइये।

प्र. 4. पुरुषसूक्त के अनुसार समस्त प्रकार की सृष्टियां कहाँ उत्पन्न होती हैं, तथा कहाँ नष्ट होती हैं?

प्र. 5. पुराणों में विराट्पुरुष का स्वरूप किसने धारण किया? और तीन पग भूमि किसने मांगी?

प्र. 6. काल्पनिक यज्ञ में वसंत, ग्रीष्म तथा शरद् ऋतु को क्या माना गया?

प्र. 7. पुरुषसूक्त के अनुसार वेद कैसे उत्पन्न हुए?

प्र. 8. विराट्पुरुष के मुख, भुजाएं, जंघा और चरण कौन कहलाते हैं?

प्र. 9. चारों वर्ण किस प्रकार विभाजित किए गए हैं?

प्र. 10. विराट्पुरुष के मन तथा मुख से कौन उत्पन्न हुए?

प्र. 11. विराट्पुरुष की नाभि से क्या उत्पन्न हुआ?

प्र. 12. विराट्पुरुष के कानों से क्या उत्पन्न हुआ?

प्र. 13. काल्पनिक यज्ञ की कितनी परिधियां बनाई गई? तथा कितनी समिधाएं बनाई गई?

प्र. 14. काल्पनिक यज्ञ के बाद कौन सा यज्ञ किया गया?

प्र. 15. भौतिक यज्ञ में सर्वप्रथम किसकी रचना की गई?

3.5 पौराणिक साहित्य में विराट्पुरुष

विराट्पुरुष का वर्णन प्रायः सभी पुराणों में मिलता है, ये वर्णन सभी पुराणों में प्रायः एक जैसा ही है। इन वर्णनों में विराट्पुरुष को सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक पुरुष के रूप में व्याख्यायित किया गया है। वह विराट्पुरुष समस्त सृष्टि को अपने अन्दर समेटे हुए है। सभी प्रकार की सृष्टि, उत्पत्ति तथा लय का कारण रूप तथातीनों कालों का संचालक भी विराट्पुरुष ही है। श्रीमद्भागवतमहापुराण और विष्णुपुराण में विराट्पुरुष का वर्णन विस्तार से प्राप्त होता है। सांख्यशास्त्र में जिस सृष्टि के स्वरूप का विस्तार किया गया है, वह भी भागवतमहापुराण के विराट्पुरुष के वर्णन के अनुसार ही वर्णित है। प्रकृति के तीनों गुणों द्वारा परस्पर संयोग से विकृति तथा उसके उपरान्त महत्तत्त्व में अहंकार और अहंकार के पश्चात् क्रमशः एकादश इन्द्रियों की सृष्टि तथा पञ्चमहाभूतों की उत्पत्ति का वर्णन श्रीमद्भागवतमहापुराण के तृतीय स्कन्ध के पांचवें तथा छठे अध्यायों में विस्तार से प्राप्त होता है।

3.6 श्रीमद्भगवद्गीता में विराट्पुरुष

महाभारत के युद्ध में अर्जुन अपने बन्धु बान्धवों को युद्ध क्षेत्र में देखकर विचलित हो गया था, उसके हाथों से गाण्डीव छूट रहा था। वह भविष्य में होने वाले इस युद्ध के विध्वंसक परिणाम का दोषी भी स्वयं को ही मान रहा था, वह युद्ध करने और न करने की शंकाओं से घिरा हुआ था, इसीलिए अर्जुन को सत्य और धर्म का ज्ञान देने के लिए भगवान श्रीकृष्ण ने गीता का उपदेश दिया। अर्जुन ने विराट्दर्शन की इच्छा प्रकट की और भगवान ने दिव्यदृष्टि देकर उसे दर्शन दिए। श्रीमद्भगवद्गीता के 11 वें अध्याय में विराट्पुरुष दर्शन का वर्णन मिलता है। श्रीकृष्ण कहते हैं –

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः।

नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च।।

पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा।

बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत।।

श्रीभगवान् बोले – हे पार्थ! अब तू मेरे सैकड़ो हजारों नाना प्रकार के और नाना वर्ण तथा आकृति वाले अलौकिक रूपों को देख। हे भरवंशी अर्जुन! तू मुझमें द्वादश आदित्यों को, आठ वसुओं को, एकादश रुद्रों को, दोनों अश्विनीकुमारों को और उनचास मरुद्गणों को देख तथा और भी जो तूने पहले नहीं देखा हो वह सब देख। इस प्रकार भगवान ने अर्जुन को विराट्पुरुष के दर्शन दिए। विराट्पुरुष के स्वरूप के विषय में आगे गीता में कहा है –

अनेकवक्त्रनयनम् अनेकाद्भुतदर्शनम्।

अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम्।।

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम्।

सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम्।।

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।

यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः।।

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा।

अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा।।

विराट्पुरुष के स्वरूप में अनेक मुख और नेत्रों से युक्त, अनेक अद्भुत दर्शनोंवाले, बहुत से दिव्य भूषणों से युक्त और बहुत से दिव्य शस्त्रों को हाथों में उठाए हुए, दिव्य माला और वस्त्रों को धारण किए हुए और दिव्य गन्ध का सम्पूर्ण शरीर में लेप किए हुए, सभी प्रकार के आश्चर्यों से युक्त, सीमा रहित और सभी ओर मुख किए हुए विराट्स्वरूप परमदेव परमेश्वर को अर्जुन ने देखा। उस विराट्पुरुष का स्वरूप इतना तेजमय था कि आकाश में हजारों सूर्यों के एकसाथ उदित होने पर भी शायद ही इतना प्रकाश उत्पन्न हो सकता है। पाण्डुपुत्र अर्जुन ने उस समय अनेक प्रकारों से विभक्त अर्थात् पृथक्-पृथक् सम्पूर्ण जगत् को देवों के देव भगवान श्रीकृष्ण के उस शरीर में देखा।

इस प्रकार अर्जुन ने परमात्मा के विराट्स्वरूप का दर्शन किया। यह विराट्स्वरूप अनेकों अंगों से युक्त, अनन्त शक्तिसम्पन्न तथा अनन्त तेजमय था। आगे विश्वरूप दर्शन का अर्जुन इस प्रकार से वर्णन करता है, और कहता है –

पश्यामि देवांस्तव देव देहे सर्वांस्तथा भूतविशेषसङ्घान्।

ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषीश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान्।।

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम्।

नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूपम्।।

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम्।

पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ताद्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम्।।

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।

त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे।।

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम्।

पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम्।।

अर्जुन कहता है कि मैं आपके शरीर में सम्पूर्ण देवों को तथा अनेक भूतों (प्राणियों) के समुदायों को, कमल के आसन पर विराजित ब्रह्मा को, महादेव को और सम्पूर्ण ऋषियों को तथा दिव्य सर्पों को देखता हूं। आपको अनेक भुजा, पेट, मुख और नेत्रों से युक्त तथा सब ओर से अनन्त रूपों वाला देखता हूं। मैं न आपके अन्त को देखता हूं, न मध्य को और न ही आदि को। आपको मैं मुकुटयुक्त, गदायुक्त और चक्रयुक्त तथा सब ओर से प्रकाशमान तेजपुञ्ज, प्रज्ज्वलित अग्नि और सूर्य के सदृश ज्योतियुक्त, कठिनता से देखे जाने योग्य और सब ओर से अप्रमेय स्वरूप देखता हूं। आप ही जानने योग्य परम अक्षर अर्थात् परब्रह्म परमात्मा हैं, आप ही इस जगत के परम आश्रय हैं, आप ही अनादि धर्म के रक्षक हैं और आप ही अविनाशी सनातन पुरुष हैं। ऐसा मेरा मत है। आपको आदि, मध्य तथा अन्त से रहित, अनन्त सामर्थ्ययुक्त, अनन्त भुजावाले, चन्द्र-सूर्यरूप नेत्रों वाले, प्रज्वलित अग्निरूप मुखवाले और अपने तेज से इस जगत् को संतप्त करते हुए देखता हूं।

अर्जुन विराट्पुरुष के स्वरूप में ब्रह्मा, शिव, ऋषिगण, सर्पादि समस्त प्रकार की सृष्टियों को देखता है। विराट्पुरुष के बल, तेज तथा ज्ञानस्वरूप को देखता है, परन्तु वह अनन्त स्वरूपात्मक परमात्मा के आदि, मध्य तथा अन्त को नहीं देख पाता।विराट्पुरुष के शक्ति, सामर्थ्य और तेज की महत्ता के बाद अर्जुन विराट्पुरुष के सर्वव्यापकत्व का वर्णन करता है –

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः।

दृष्ट्वाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदं लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन्।।

अमी हि त्वां सुरसङ्घा विशन्ति केचिद्भीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति।

स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसङ्घाः स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः।।

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्या विश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च।

गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घा वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे।।

रूपं महत्ते बहुवक्त्रनेत्रं महाबाहो बहुबाहूरुपादम्।

बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथितास्तथाहम्।।

अर्जुन कहता है, स्वर्ग और पृथ्वी के बीच का यह सम्पूर्ण आकाश तथा सभी दिशाएं आपसे ही परिपूर्ण हैं, तथा आपके इस अलौकिक और भयंकर रूप को देखकर तीनों लोक व्यथित हो रहे हैं। देवताओं के समूह आप में ही प्रवेश करते हैं, और कुछ भयभीत होकर हाथ जोड़े आपके नाम और गुणों का उच्चारण करते हैं तथा महर्षि और सिद्धों के समुदाय जगत् के कल्याणार्थ उत्तम स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करते हैं। ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, आठ वसु, साध्यगण, विश्वेदेव, अश्विनीकुमार, मरुद्गण, पितरों के समुदाय, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस तथा सिद्धों के समुदाय सभी विस्मयपूर्वक आपको देखते हैं। आपके बहुत सारे मुखों व नेत्रों वाले, बहुत हाथों, जङ्घाओं, पैरों, उदरोंवाले अत्यन्त विकराल रूप को देखकर सभी लोग व्याकुल हो रहे हैं तथा मैं भी व्याकुल हो रहा हूं।

विराट्पुरुष में ही समग्र ब्रह्माण्ड का संचरण है, जो भी सृष्टि की गई है वह सभी विराट्पुरुष के अन्दर भी विराजमान है, क्योंकि इस सृष्टि के कर्ता भी वही हैं। आकाश और दिशाएं भी विराट्पुरुष के ही स्वरूप में विराजमान हैं। अतः जो कुछ भी है, वही विराट्पुरुष में ही है और जो होगा वह भी विराट्पुरुष में ही उत्पन्न होगा, जो नष्ट हो चुका है, वह भी विराट्पुरुष के ही अन्दर नष्ट हुआ। इस प्रकार सभी सृष्टियां विराट्पुरुष के भीतर ही समाहित हैं, इसीलिए देवता, ऋषि, मानव, सिद्ध आदि सभी जीव उनके आश्रय पर ही निहित हैं।

3.7 विराट्पुरुष की सृष्टि

विराट्पुरुष की सृष्टि का बीज वर्णन पुरुषसूक्त के माध्यम से हमें प्राप्त होता है। उसके उपरान्त पौराणिक साहित्य में, तन्त्र साहित्य में तथा अन्य संस्कृत साहित्य के ग्रन्थों में विराट्पुरुष का वर्णन प्रायः उसी वैदिक पुरुषसूक्त के विस्तार के रूप में हमें प्राप्त होता है। श्रीमद्भागवत महापुराण के तृतीय स्कन्ध के पांचवें अध्याय में सृष्टिवर्णन में विराट्पुरुष की उत्पत्ति का विस्तृत वर्णन किया गया है। श्रीमद्भागवत के अनुसार सर्वप्रथम परमात्मा ने सत्व, रजस् और तमस्इन तीन गुणों से युक्त पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पञ्चमहाभूतों को अपनी शक्ति से गतिशीलता प्रदान की। ये सभी मिलकर एक हिरण्यमय पिण्ड के रूप में समाहित हुए। यह पिण्ड हजारों वर्षों तक निर्जीव रूप में जल में पड़ा रहा। फिर भगवान ने उस पिण्डरूपी ब्रह्माण्ड को जीवित किया। उस अण्डे को फोड़कर उसमें से विराट्पुरुष की उत्पत्ति हुई, उस विराट्पुरुष के सिर, चरण, जंघाएं, नेत्र आदि अंग सहस्रों की संख्या में थे। उसी विराट्पुरुष के अंगों में

विद्वानों ने चतुर्दश लोकों और उन लोकों में रहने वाले पदार्थों की कल्पना की। उस विराट् पुरुष की कमर से नीचे के अंगों में अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, महातल व पाताल ये सात अधोलोक तथा ऊपर के अंगों में भू, भुवः,स्वः,महः, जनः, तपः एवं सत्यलोक इन सात लोकों की कल्पना की। इसी विराट्पुरुष के शरीर में इसका मुख ब्राह्मणवर्ण, भुजाएं क्षत्रियवर्ण, जंघाएं वैश्यवर्ण तथा पैर शूद्रवर्ण की कल्पना की।

इस विराट्पुरुष के मुख से वाणी और उसके अधिष्ठातृदेव अग्नि उत्पन्न हुए। मनुष्यों, पितरों, देवताओं के भोजन करने योग्य सभी प्रकार के अन्न और रस विराट्पुरुष की जिह्वा से उत्पन्न हुए। उनके नासाछिद्रों से प्राण, अपान, व्यान, उदान व समान ये पांचों प्राणवायु तथा घ्राणेन्द्रिय से अश्विनीकुमार तथा समस्त प्रकार की औषधियां उत्पन्न हुई। उनके नेत्रों से तेज तथा नेत्रगोलक से सूर्य उत्पन्न हुए। समस्त प्रकार की दिशाए तथा तीर्थस्थान विराट्पुरुष के कानों से उत्पन्न हुए। सभी प्रकार के यज्ञ, स्पर्श और वायु उनकी त्वचा से उत्पन्न हुए। विराट्पुरुष की दाढी-मूछों तथा नखों से मेघ, बिजली, शिलाखण्ड, लौहादि धातुएं तथा भुजाओं से संसार की रक्षा करने वाले लोकपाल उत्पन्न हुए। विराट्पुरुष का लिङ्ग जल, वीर्य, सृष्टि, मेघ और प्रजापतियों का उत्पत्ति स्थान है। उनकी पायु-इन्द्रिय से यम, मित्र, निर्ऋति, मृत्यु और नरक उत्पन्न हुए। उनकी पीठ से पराजय, अधर्म, अज्ञान तथा नाड़ियों से नदियां और हड्डियों से पर्वतों की उत्पत्ति हुई। मूल प्रकृति और सभी प्रकार के रस, समुद्र, समस्त प्राणियों की मृत्यु विराट्पुरुष के उदर में समायी हुई है। उनके हृदय से मन तथा चित्त से धर्म, सनकादि, शङ्कर, विज्ञान औऱ अन्तःकरण ये सब उत्पन्न हुए हैं। सभी प्रकार की सृष्टि देवता, मनुष्य, दैत्य, नाग, पक्षी, पशु, सरीसृप, वृक्ष, भूत-प्रेत, राक्षस आदि नाना प्रकार के जलचर, थलचर, नभचर, उभयचर जीव, तारे, आकाश, बादल वर्षा, ऋतुएं आदि सभी विराट्पुरुष से ही उत्पन्न हुए हैं। यह सम्पूर्ण जगत् जो कुछ भी है तथा जो भी होगा वह सब विराट्पुरुष का ही अंशमात्र है, यह विराट्पुरुष तीनों कालों का नियन्ता भी है। सूर्यसिद्धान्त के भूगोलाध्याय में भी प्रायः पुराणमतानुसार ही सृष्टि परिकल्पना मिलती है। वहाँ ब्रह्माण्ड से प्रथम व्यक्तीभूत अनिरुद्ध को माना गया है, जिसको हिरण्यगर्भ, आदित्य, सूर्य, भूतभावन, प्रकाशात्मा, कालात्मा आदि नामों से भी पुकारा गया है। यही वेदात्मा सूर्य श्रुत्युक्त विराट्पुरुष है। जो ब्रह्मा को उत्पन्न कर उसे वेद प्रदान कर सृष्ट्युत्पत्ति हेतु प्रेरित करता है।

अभ्यास प्रश्न

प्र. 16. पुराणों में विराट्पुरुष का वर्णन किस प्रकार किया गया है?

प्र. 17. विराट्पुरुष का वर्णन किस पुराण में विस्तार से मिलता है?

प्र. 18. श्रीमद्भागवत महापुराण के किस स्कन्ध में विराट्पुरुष का वर्णन मिलता है?

प्र. 19. महाभारत के युद्ध में कौन विचलित हो गया था तथाकृष्ण ने किसे गीता का ज्ञान दिया?

प्र. 20. श्रीमद्भगवद्गीता के किस अध्याय में विराट्पुरुष का वर्णन मिलता है?

प्र. 21. विराट्पुरुष में अर्जुन ने क्या देखा?

प्र. 22. अर्जुन ने विराट्पुरुष में किन देवों को देखा?

प्र. 23. देवताओं के समूह कहाँ प्रवेश करते हैं?

प्र. 24. रुद्रों की संख्या कितनी है?

प्र. 25. आदित्यों की संख्या कितनी है?

प्र. 26. वसुओं की संख्या कितनी है?

प्र. 27. तीनों कालों का नियन्ता कौन है?

प्र. 28. प्रकृति के तीन गुण कौन-कौन से हैं?

प्र. 29. पञ्चमहाभूत कौन-कौन हैं?

प्र. 30. सात अधोलोकों के नाम बताइये।

प्र. 31. सात ऊर्ध्वलोकों के नाम बताइये।

प्र. 32. पांच वायुओं के नाम बताइये।

3.8 सारांश

ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में विराट्पुरुष द्वारा समग्र सृष्टि की रचना हुई है, इस प्रकार का वर्णन वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक संस्कृत साहित्य तक सभी स्थानों

पर हमें प्राप्त होता है। सर्वप्रथम ऋग्वेद के पुरुषसूक्त में विराट्पुरुष की उत्पत्ति का प्रसंग हमें प्राप्त होता है, उसके उपरान्त पुराणों में तथा श्रीमद्भगवद्गीता में विराट्पुरुष के सर्वव्यापकत्व, सर्वकालत्व तथा सर्वशक्तिमान् स्वरूप का वर्णन विस्तार से प्राप्त होता है। इन सभी सन्दर्भों के आधार पर हम कह सकते हैं कि विराट्पुरुष मे ही सब कुछ विराजमान है, विराट्पुरुष अनन्तरूपात्मक है और समग्र सृष्टि का कर्ता, नियन्ता और संहारक भी है।

3.9 कठिन शब्दार्थ

वैदिक	- वेदों से सम्बन्धित
पौराणिक	- पुराणों से सम्बन्धित
ब्रह्माण्डोत्पत्ति	- ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति
आदिपुरुष	- पहला पुरुष
सर्वकालत्व	- तीनों कालों में व्याप्ति
सर्वव्यापकत्व	- सभी स्थानों पर व्याप्ति
समराङ्गण	- युद्ध का मैदान
चतुर्दशलोक	- चौदह लोक
सहस्रशीर्षा	- हजारों सिरों वाला
कर्तारूप	- करने वाला रूप
चरण	- पैर
नियन्ता	- नियन्त्रित करने वाला
दृश्यमान	- दिखने वाला, दृष्टिगोचर
वामनावतार	- भगवान विष्णु का वामन अवतार
भोज्याभोज्य	- खाने योग्य और नहीं खाने योग्य
दृश्यादृश्य	- दिखने वाला और नहीं दिखने वाला

आविर्भाव - उत्पत्ति

घृताहुति - घी की आहुति

ब्राह्मणादि - ब्राह्मण आदि

चंचल - एक स्थान पर अधिक समय तक स्थिर नहीं रहने वाला

शीश - सिर

ऊर्ध्व - ऊपर

परिधि - घेरा

मानसिक - मन से संबन्धित

लय - नाश, नष्ट होना

अलौकिक - इस लोक से बाहर

उदित - उगना

अनन्त - अन्त नहीं होने वाला

शक्तिसम्पन्न - शक्ति से युक्त

तेजमय - तेज से युक्त

आदि - प्रारम्भ

प्रज्वलित - जलते हुए

अप्रमेय - जिसे नहीं जाना जा सकता

अनादि - जिसका प्रारम्भ न हो

महत्ता - महानता

व्यथित - दुःखी

समग्र - सम्पूर्ण, सारा

गतिशीलता - गति की निरन्तरता

अधोलोक	- नीचे के लोक
ऊर्ध्वलोक	- ऊपर के लोक
घ्राणेन्द्रिय	- सूंघने वाली इन्द्रिय, नाक
नेत्रगोलक	- आंख की पुतली
शिलाखण्ड	- पत्थर का टुकड़ा
जलचर	- पानी में रहने वाले जीव
थलचर	- भूमि पर रहने वाले जीव
नभचर	- आसमान में रहने वाले जीव
नियन्ता	- नियन्त्रित करने वाला
अनन्तरूपात्मक	- अनेकों रूपों वाला
संहारक	- नष्ट करने वाला

3.9.1 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. विराट् पुरष का वर्णन ऋग्वेद के पुरुषरूक्त में मिलता है।
2. पुरुष सूक्त में 16 ऋचाएं हैं।
3. सहस्रशीर्षा का अर्थ है, हजारों सिरों वाला।
4. पुरुषसूक्त के अनुसार सभी प्रकार की सृष्टियां विराट्पुरुष में ही उत्पन्न होती हैं, तथा विराट्पुरुष में ही नष्ट भी होती हैं।
5. पुराणों में विराट्पुरुष का स्वरूप वामन ने धारण किया तथा तीन पग भूमि बाली से दान में मांगी।
6. काल्पनिक यज्ञ में वसंत ऋतु को घी, ग्रीष्म को काष्ठ तथा शरद् ऋतु को हवि बनाया।
7. पुरुषसूक्त के अनुसार वेद यज्ञ से उत्पन्न हुए।

8. विराट्पुरुष का मुख ब्राह्मण हुआ, क्षत्रिय को भुजाएं, इनकी दोनों जंघाएं वैश्य तथा चरण शूद्र हुए।

9. ब्राह्मणादि चारों वर्ण गुण-कर्म के अनुसार विभाजित किए गए हैं।

10. विराट्पुरुष के मन से चन्द्रमा तथा मुख से अग्नि उत्पन्न हुए।

11. विराट्पुरुष की नाभी से अन्तरिक्ष उत्पन्न हुआ।

12. विराट्पुरुष के कानों से दिशाएं तथा लोक उत्पन्न हुए।

13. काल्पनिक यज्ञ की सात परिधियां तथा इक्कीस समिधाएं बनाई गई।

14. काल्पनिक यज्ञ के बाद भौतिक यज्ञ किया गया।

15. भौतिक यज्ञ में सर्वप्रथम धर्म की रचना की गई।

16. पुराणों में विराट्पुरुष को सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक पुरुष के रूप में व्याख्यायित किया गया है।

17. विराट्पुरुष का वर्णन श्रीमद्भागवत महापुराण तथा विष्णुपुराण में विस्तार से किया गया है।

18. श्रीमद्भागवत महापुराण के तृतीय स्कन्ध के पांचवें तथा छठे अध्याय में विराट्पुरुष का वर्णन मिलता है।

19. महाभारत के युद्ध में अर्जुन विचलित हो गया था, तब श्रीकृष्ण ने उसे गीता का ज्ञान दिया।

20. श्रीमद्भगवद्गीता के 11वें अध्याय में विराट्पुरुष का वर्णन मिलता है।

21. विराट्पुरुष के स्वरूप में अनेक मुख और नेत्रों से युक्त, अनेक अद्भुत दर्शनोंवाले, बहुत से दिव्य भूषणों से युक्त और बहुत से दिव्य शस्त्रों को हाथों में उठाए हुए, दिव्य माला और वस्त्रों को धारण किए हुए और दिव्य गन्ध का सम्पूर्ण शरीर में लेप किए हुए, सभी प्रकार के आश्चर्यों से युक्त, सीमा रहित और सभी ओर मुख किए हुए विराट्स्वरूप परमदेव परमेश्वर को अर्जुन ने देखा।

22. अर्जुन ने विराट्पुरुष में सम्पूर्ण देवों को तथा अनेक भूतों के समुदायों को, कमल के आसन पर विराजित ब्रह्मा को, महादेव को और सम्पूर्ण ऋषियों को तथा दिव्य सर्पों को देखा।

23. देवताओं के समूह विराट्पुरुष में प्रवेश करते हैं।

24. रुद्रों की संख्या 11 है।

25. आदित्यों की संख्या 12 है।

26. वसुओं की संख्या आठ है।

27. तीनों कालों का नियन्ता विराट्पुरुष है।

28. प्रकृति के तीन गुण सत्व, रज तथा तम हैं।

29. पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश ये पञ्चमहाभूत हैं।

30. अतल-वितल-सुतल-तलातल-रसातल-महातल-पाताल ये सात अधोलोक हैं।

31. भू-भुवः-स्वः-मह-जन-तप-सत्यलोक ये सात ऊर्ध्वलोक हैं

32. प्राण-अपान-व्यान-उदान-समान ये पांचों वायुओं के नाम हैं।

3.9.2 व्याख्यात्मक प्रश्न

1. पुरुषसूक्त का वर्णन कीजिए।
2. श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित विराट् स्वरूप का वर्णन करें।
3. पुराणों के अनुसार विराट्पुरुष द्वारा सृष्टि की वर्णन करें।

3.10 सन्दर्भ /सहायक ग्रन्थ सूची

19. ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2016

20. खगोलीय पिण्डों का परिक्रमण, कोपर्निकस, व्याख्या, तिवारी, श्रवणकुमार एवं पाण्डेय रमाकान्त, वाराणसी, हिन्दी प्रकाशन समिति, सन् 1972

21. गोलपरिभाषा, झा, सीताराम, दरभङ्गा, बिहार, श्रीसीताराम पुस्तकालय, संवत् 2027

22. भुवनकोश विमर्श, प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स दिल्ली, वर्ष 2004

23. यजुर्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2015

24. श्रीमद्भागवतपुराणम्, वेदव्यास,गोरखपुर, गीताप्रेस, संवत् 2059

25. श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2048

26. वास्तुशास्त्रविमर्श, शोधपत्रिका, श्री ला.ब.शा.रा.सं.विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

ईकाई 4- ब्रह्मा द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति

पाठ संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 वैदिक साहित्य में ब्रह्मा

4.4 पौराणिक साहित्य में ब्रह्मा

4.4.1 ब्रह्मा द्वारा सृष्टि

4.4.2 ब्रह्मा एवं ब्रह्म

4.4.3 त्रिदेव कल्पना और ब्रह्मा

4.4.3 त्रिदेव का दार्शनिक स्वरूप

4.5 सारांश

4.6 कठिन शब्द

4.6.1 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.6.2 व्याख्यात्मक प्रश्न

4.7 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थसूची

4.1 प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा का मूल स्रोत वेद हैं। वेदों के विना भारतीय ज्ञान सम्पदा की चर्चा अपूर्ण है। अपने अस्तित्व के प्रति जिस समय मनुष्य की जिज्ञासा उत्पन्न हुई, उस समय जिज्ञासुओं ने इस बात का चिन्तन किया कि मैं कौन हूं? अपने और अपने अस्तित्व के प्रति यही जिज्ञासा मनुष्य को अध्यात्म तक ले गई। उसने जड़ – जीव जगत की उत्पत्ति का कारण जानना चाहा। इसी प्रकार ब्रह्माण्ड, जो कि सर्वशक्तिमान् और व्यापक सत्ता है, उसने उसकी उत्पत्ति को भी जानना चाहा। "यत्पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे" इस न्याय के अनुसार जो कुछ भी पिण्ड में है वह ब्रह्माण्ड में है। अतः पिण्ड का अध्ययन करने पर ब्रह्माण्ड का भी ज्ञान हो जाएगा, इस दृष्टि से मानव ने आत्मा से परमात्मा को जानने का प्रयास किया। यह सृष्टि किसने रची? कौन इसको संचालित करता है? कौन इसका संहारक है? आदि प्रश्नों के उत्तर स्वरूप ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को त्रिदेव द्वारा रचित, संचालित तथा विनष्ट माना गया। ब्रह्माण्ड और उसकी उत्पत्ति के अनेकों सिद्धान्त वैदिक साहित्य से लेकर पौराणिक साहित्य तक हमें विस्तृत मात्रा में प्राप्त होते हैं। इस आधार पर सृष्टि की उत्पत्ति के प्रमुख चार सिद्धान्त मिलते हैं, जिसमें विश्वकर्मा द्वारा, प्रजापति द्वारा, विराटपुरुष द्वारा तथा ब्रह्मा द्वारा सृष्टि रचना का वर्णन मिलता है। इन सिद्धान्तों में सर्वाधिक प्रसिद्ध और मान्य सिद्धान्त है, ब्रह्मा द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का सिद्धान्त। इस सिद्धान्त के अनुसार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का निर्माता तथा संचालक ब्रह्मा है तथा यह सम्पूर्ण जड़-चेतन जगत ब्रह्मा की शक्ति का ही परिणाम है। ब्रह्मा को पौराणिक साहित्य में सृष्टिकर्ता कहा जाता है। यह ब्रह्मा चतुर्मुख है और चारों वेदों का ज्ञाता भी है। इसका प्रत्येक मुख एक-एक वेद का प्रतीक है। नासदीयसूक्त में वर्णन मिलता है कि सृष्टि से पूर्व कुछ भी नहीं था। पश्चात् स्वयमेव शुद्धचैतन्य परब्रह्म की सत्ता उत्पन्न हुई। इसी परब्रह्म ने संकल्पमात्र से सृष्टि की रचना की। यही परब्रह्म आगे ब्रह्मा के रूप में परिभाषित किया गया।इस सृष्टिरचना में सर्वप्रथम सत्य की उत्पत्ति हुई, तत्पश्चात् क्रमशः आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी तत्व उत्पन्न हुए। ब्रह्मा का वर्णन श्रीमद्भागवतमहापुराण में विस्तार से प्राप्त होता है। श्रीमद्भागवत महापुराण के अनुसार भगवान विष्णु के मन में सृष्टि की जिज्ञासा उत्पन्न हुई। तत्पश्चात् विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। इसी ब्रह्मा ने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की। ब्रह्माण्डपुराण के अनुसार ब्रह्मा ने सर्वप्रथम हिरण्याण्ड को उत्पन्न किया।इस हिरण्याण्ड का आवरण

जल था। इसी प्रकार क्रमशः जल का आवरण तेज, तेज का वायु, वायु का आकाश क्रमशः आवरण थे। इन पञ्चमहाभूतों का आवरण महत्तत्व था तथा महत्तत्त्व अव्यक्त से आवृत्त था। कुछ इसी प्रकार का वर्णन तैत्तिरीयोपनिषद में भी मिलता है। पौराणिक साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि ब्रह्मा इस सम्पूर्ण सृष्टि का कर्ता है। ज्योतिषशास्त्र के ग्रन्थों में भी सृष्ट्युत्पत्ति को ब्रह्मा द्वारा स्वीकार किया गया है। पौराणिक साहित्य में सृष्टि संचालन की प्रक्रिया को ब्रह्मा-विष्णु-महेश इन त्रिदेवों की कल्पना के माध्यम से समझा जाता है। त्रिदेवकल्पना में सत्व-रज-तम इन तीन गुणों के अनुरूप ब्रह्मा रजोगुणयुक्त होकर विश्व का सृजन करता है, विष्णु सत्त्वगुण सम्पन्न होकर होकर सृष्टि का पोषण करते हैं तथा शिव तमोगुणयुक्त स्वरूप धारण कर सृष्टि का नाश करते हैं। यहां ब्रह्मा को सृष्टि का कर्ता, विष्णु को पालनकर्ता तथा शिव को संहारकर्ता के रूप में रखा गया है। श्रीमद्भागवत महापुराण के अनुसार ब्रह्मा ही सृष्टिकर्ता हैं, उन्हीं से यह सृष्टि उत्पन्न हुई है तथा यह ब्रह्मा अपने दिन के समय में सृष्टि उत्पन्न करते हैं और रात्रि में सृष्टि का विनाश करते हैं। सृष्टिरचना की यह क्रीडा ब्रह्मा द्वारा प्रतिदिन की जाती है। प्रस्तुत ईकाई में हम ब्रह्मा द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति पर विभिन्न मतों का अध्ययन करेंगे।

4.2 अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के माध्यम से हम निम्न विषयों को जान सकेंगे-

- ब्रह्मा द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्त को समझेंगे।
- ब्रह्मा की उत्पत्ति तथा संसार रचना का अध्ययन करेंगे।
- ब्रह्मा एवं ब्रह्म के बीच के भेद को जान सकेंगे।
- त्रिदेवसिद्धान्त को समझ सकेंगे।

4.3 वैदिक साहित्य में ब्रह्मा

जैसा कि आप जानते ही हैं कि सम्पूर्ण भारतीय ज्ञान परम्परा का मूल स्रोत वेद हैं। अतः वैदिक साहित्य में सृष्टि की उत्पत्ति के सूक्तों में उसके रचयिता का वर्णन मिलता ही है। इस विषय पर नासदीय सूक्त में भी कहा गया है कि इस सृष्टि का रचयिता परमात्मा है। परमात्मा के मन में सृष्टि की रचना की इच्छा उत्पन्न हुई। यथा –

कामस्तदग्रे समवर्ततााधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन्हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा॥

परमेश्वर के मन में सर्वप्रथम काम उत्पन्न हुआ, अर्थात् सृष्टि की उत्पत्ति की इच्छा हुई। जो परमेश्वर के मन मे सबसे पहला बीज रूप कारण बनी।भौतिक रूप से विद्यमान जगत के बन्धन-कामरूप कारण को क्रान्तदर्शी ऋषियों ने अपने ज्ञान द्वारा भाव से विलक्षण सत् और असत्के रूप में खोजा।नासदासीत् कामस्तदग्रे मनसारेतः इस प्रकार के वर्णनसे अनुमान होता है कि अविद्या, काम-संकल्प और सृष्टि बीज-कारण परमेश्वर के रेतस् अर्थात् तेज में सूर्य-किरणों के समान बहुत व्यापकता विद्यमान थी। आकाशादि की सृष्टि करने वाले परमात्मा के तेज की किरणेंकुछ तिरछी थी,कुछ नीचे की और विद्यमान थीतो कुछ ऊपर थी। वह सर्वत्र समान भाव से उत्पन्न था। इस प्रकार इस उत्पन्न जगत में कुछ पदार्थ बीज रूप कर्म को धारण करने वाले जीव रूप में थे, और कुछ तत्त्व आकाशादि महान रूप में प्रकृति रूप थे। उस समय भोग्य पदार्थ निम्नतर थे तथा भोक्ता पदार्थ उत्कृष्टता से परिपूर्ण थे-

तिरश्चीनो विततेरश्मिरेषामधः स्विदासी३दुपरि स्विदासी३त्।
रेतोधा आसन्महिमान आसन्त्स्वधा अवस्तात्प्रयतिः परस्तात्॥

इस प्रकार वह परमात्मा अनन्तशक्तिसम्पन्न है तथा सभी प्रकार की सृष्टि रचने में सक्षम है। इस परमात्मा को भी वेदों में कई नामों से जाना गया है। इन सिद्धान्तों द्वारा सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में भेद से अलग-अलग सिद्धान्त भी सृष्टिरचना के विषय में हमें प्राप्त होते हैं, इनमें ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का सिद्धान्त प्रमुख है। यजुर्वेद के तेरहवें अध्याय में वर्णन मिलता है कि यह जगत ब्रह्मा की शक्ति से ही उत्पन्न हुआ। वह ब्रह्मा सर्वशक्तिसम्पन्न है। यथा –

"ब्रह्मयज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवहः"

इस ऋचा के अनुसार सृष्टि में सर्वप्रथम ब्रह्मा उत्पन्न हुआ उसके बाद शक्तियों का विस्तार हुआ और उस शक्ति से व्यापक जगत प्रकाशित हुआ। शुक्लयजुर्वेद के बाईसवें अध्याय में ब्रह्मा की स्तुति की गई है, जिसमें कहा गया है कि हे ब्रह्मन् आप इस राष्ट्र में योग्य शूरवीरों को उत्पन्न करें। अतः यहां भी ब्रह्मा को स्रष्टा के रूप में ही माना गया है। जैसे –

"आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूरइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुःसप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवाऽस्य यजमानस्यवीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयःपच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्"।

अर्थात् हे ब्रह्मन् आप हमारे राष्ट्र में ब्राह्मणों को ब्रह्मवर्चस्वी बनायें। राष्ट्र में आप बाणविद्या में निपुण महारथी क्षत्रिय उत्पन्न करें, तीव्र वेग वाले घोड़े, भार ढोने वाले बैल, दुधारू गाएं लोगों को मिलें। स्त्रियां चरित्रवती गुणवती हों, वीर विजयी हों, सभी युवा हों, अच्छे वक्ता हों, बादल अच्छे बरसें, औषधियां फलवती हों, योगक्षेम का भी निर्वाह हो।इस प्रकार इस सूक्त में ब्रह्मा से ही सभी प्रकार की समृद्धि की प्रार्थना की गई है। इस प्रकार की अपेक्षा केवल उत्पन्न करने वाले से ही की जा सकती है। इस सूक्त में महारथियों से लेकर ऋतुएं, वर्षा, औषधि आदि की भी उत्पत्ति की प्रार्थना की गई है।

4.4 पौराणिक साहित्य में ब्रह्मा

ब्रह्मा का सर्वाधिक विस्तृत वर्णन पुराणों में मिलता है। श्रीमद्भागवत महापुराण में श्रीहरि विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति मानी गई है। इसी प्रकार मार्कण्डेय पुराण में स्थित दुर्गासप्तशती में भी ब्रह्मा की स्थिति भगवान् विष्णु के नाभिकमल में मानी गई है। दुर्गासप्तशती के अनुसार –

योगनिद्रां तदा विष्णुर्जगत्येकार्णवीकृते ॥
आस्तीर्य शेषमभजत्कल्पान्ते भगवान् प्रभुः ।
तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधुकैटभौ ॥
विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ ।
स नाभिकमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः ॥

अर्थात् जब भगवान् विष्णु योगनिद्रा में थे, तब उनके कानों के मल से मधु और कैटभ नामक दो असुर उत्पन्न हुए। ये दोनों ही भगवान के नाभिकमल में स्थित ब्रह्मा का बध करने के लिए उद्यत हुए। इस प्रकार के वर्णनों के अनुसार ब्रह्मा को श्रीहरि विष्णु के नाभिकमल से उत्पन्न माना गया है।

पुराणों के अनुसार उत्पत्ति के बाद ब्रह्मा को दो अक्षर सुनाई दिए –"त प" अर्थात् तपस्या। ब्रह्मा ने 100 दिव्यवर्षों तक कठोर तप किया। उसके बाद उन्हें चारों वेदों का ज्ञान हुआ जिसे उन्होंने अपने मुख से वर्णन किया, इसीलिए ब्रह्मा के चार मुख हो गए। इसके बाद ब्रह्मा के मन में श्रीमन्नारायण की कृपा से एक से अनेक होने "एकोऽहं बहुस्याम" इस प्रकार का विचार आया। सृष्टि की उत्पत्ति का संकल्प लेकर सर्वप्रथम उन्होंने अपने दस मानस पुत्रों को उत्पन्न किया, इन्हीं मानस पुत्रों द्वारा आगे चलकर समस्त सृष्टि का विस्तार हुआ।ब्रह्मा जी के मानस पुत्रों में मन से मरीचि, नेत्र से अत्रि, मुख से अंगिरस, कान से पुलस्त्य, नाभि से पुलह, हाथ से क्रतु, त्वचा से भृगु, प्राण से वसिष्ठ, अंगुष्ठ से दक्ष, छाया से कंदर्प, गोद से नारद, इच्छा से सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार, शरीर से स्वायंभुव मनु तथाध्यान से चित्रगुप्त माने गए हैं।वाचस्पत्यम् में भी ब्रह्माण्ड को ब्रह्मा द्वारा उत्पन्न माना गया है, जैसे –

तदण्डमभवद्धैमं सहस्रांशुसमप्रभम्।

तस्मिन् यज्ञे स्वयं ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः।।

अर्थात् वह अण्ड जिसमें सहस्रों ज्योतिपुञ्ज विद्यमान हैं, इस अण्ड में सृष्टियज्ञ करने वाले सभी लोकों के पितामह ब्रह्मा हैं। वे ही सभी प्रकार की सृष्टियां रचते हैं। अतः जिस अण्ड में ब्रह्मा समस्त प्रकार की सृष्टियों का सृजन करते हैं, उस अण्ड को ब्रह्माण्ड कहते हैं।

पुराणों तथा ज्योतिष शास्त्र के ग्रन्थों में ब्रह्मा की आयु 100 ब्रह्मवर्ष कही गई है। इन 100 वर्षों में प्रतिदिन ब्रह्मा सृष्टि करता है, तथा रात्रि को सृष्टि का संहार कर देता है। यह कार्य ब्रह्मा नियमित आजीवन तक करता रहता है। ब्रह्मा के एक दिन की सृष्टि में ही कई चतुर्युग बीत जाते हैं। विष्णुपुराण के अनुसार जब तक ब्रह्मा जगता है, सृष्टि की सभी क्रियाओं का सम्पादन करता है। ब्रह्मा शयनकाल में सभी प्रकार की सृष्टियों का विनाश कर देता है। विष्णुपुराण में कहा गया है कि –

एष नैमित्तिको नाम मैत्रेयः प्रतिसञ्चरः।

निमित्त यत्र यच्छेते ब्रह्मरूपधरो हरिः।।

ब्रह्मा के प्रतिदिन सृष्टि उत्पत्ति के पश्चात् रात्रि में सृष्टि के संहार को विष्णुपुराण में नैमित्तिक प्रलय कहा गया है। श्रीमद्भगवद्गीता में भी इसी प्रकार वर्णन मिलता है –

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।

रात्रिः युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः।।

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।

रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे।।

अर्थात् एक सहस्र चतुर्युगात्मक ब्रह्मा का दिन तथा सहस्र चतुर्युगात्मक ब्रह्मा की एक रात्रि होती है। जो इस दिन-रात्रि को जानते हैं, वे योगी तत्त्ववेत्ता हैं। ब्रह्मा के दिवसारम्भ में अव्यक्त अवस्था में समस्त चराचर भूत तथा प्राणी उत्पन्न होते हैं, तथा ब्रह्मा की रात्रि आने पर उसी कारणरूपी अव्यक्त प्रकृति में प्रलय को प्राप्त हो जाते हैं। एक हजार युगों को एक कल्प कहा जाता है, कल्प के आयुमान के बराबर ब्रह्मा का एक दिन होता है, तथा इतनी ही एक रात्रि होती है। यथा –

इत्थं युगसहस्रेण भूतसंहारकारकः।

कल्पो ब्राह्ममहः प्रोक्तं शर्वरी तस्य तावती।।

अर्थात् एक हजार महायुगों का एक कल्प होता है, यह कल्प ब्रह्मा का एक दिन तथा एक कल्प ब्रह्मा की एक रात्रि होती है। दिन में ब्रह्मा सृष्टिरचना करते हैं तथा रात्रि को संहार।

अभ्यास प्रश्न

प्र.1. भारतीय ज्ञान विज्ञान का मूल स्रोत क्या है?

प्र.2. यत् पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे का अर्थ बताइये।

प्र.3. ब्रह्मा की उत्पत्ति विष्णु के किस अंग से हुई?

प्र.4. नासदीय सूक्त के अनुसार परमेश्वर के मन में क्या उत्पन्न हुआ?

प्र.5. दुर्गासप्तशती किस पुराण से संबन्धित है?

प्र.6. मधु और कैटभ किसको मारने के लिए उद्यत हुए?

प्र.7. सभी लोकों के पितामह कौन हैं?

प्र.8. ब्रह्मा की आयु कितनी है?

प्र.9. ब्रह्मा के एक दिन को क्या कहते हैं?

प्र.10. ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का विनाश कौन सा प्रलय कहलाता है?

प्र.11. ब्रह्मा की एक रात्रि कितने मान की होती है?

प्र.12. ब्रह्मा के एक दिन में कितने युग होते हैं?

4.4.1 ब्रह्मा द्वारा सृष्टि

ज्योतिषशास्त्र के प्रसिद्ध ग्रन्थ सूर्यसिद्धान्त में ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का वर्णन मिलता है, इसके अनुसार परमपिता परमात्मा ने सृष्टि की उत्पत्ति के लिए सर्वप्रथम ब्रह्मा की उत्पत्ति की। उस ब्रह्मा ने क्रमशः सूर्यचन्द्रमा आदि सृष्टिरचना की। यथा –

त्रिपादममृतं गुह्यं पादोऽयं प्रकटोऽभवत्।

सोऽहंकारं जगत्सृष्ट्यै ब्रह्माणमसृजत् प्रभुः।।

अर्थात् सर्वप्रथम परमात्मा ने जगत की सृष्टि के लिए अहंकारस्वरूप ब्रह्मा की उत्पत्ति की। अहंकारस्वरूप का अर्थ यहाँ रजोगुणयुक्त ज्ञानस्वरूप है। परमात्मा ने सर्वप्रथम ब्रह्मा को रचा। ब्रह्मा को रचने का कारण सृष्टि की उत्पत्ति है, इसीलिए श्लोक में जगत्सृष्ट्यै शब्द का प्रयोग किया गया है। त्रिपादममृतं का अर्थ भगवान के तीन पादों से है, जो गोपनीय हैं। चतुर्थपाद यह चराचर जगत है। ऋग्वेद के पुरुषसूक्त में इसका वर्णन किया गया है-

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः।।

भगवान के तीन पादों का वर्णन पुराणों में भी मिलता है। भागवतपुराण के वामनावतार कथा के अनुसार विराटपुरुष भगवान ने राजा बलि से तीन पग भूमि दान में माँगी, जिसके परिणामस्वरूप बलि ने तीन पग भूमिदान का संकल्प ले लिया। संकल्प के पश्चात् वामनरूपी भगवान श्रीहरि विष्णु ने विराटस्वरूप धारण कर एक पग में पृथ्वी को, दूसरे पग में आकाश को नाप लिया तथा तीसरा पग बलि के सिर पर रखा।

ब्रह्मा की उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्मा में अपने अस्तित्त्व के प्रति अहंकार का प्रादुर्भाव हुआ। अतः ब्रह्मा में रजोमयज्ञान की उत्पत्ति हुई, इसके बाद ब्रह्मा के मन में सृष्टिरचना का संकल्प उत्पन्न हुआ। यथा–

अथ सृष्ट्यां मनश्चक्रे ब्रह्माऽहंकारमूर्तिभृत्।

मनसश्चन्द्रमा जज्ञे सूर्योऽक्ष्णोस्तेजसां निधिः।।

अर्थात् ब्रह्मा के मन में मैं जगत की सृष्टि कर रहा हूं, इस प्रकार का अहंकार उत्पन्न हुआ, जिससे ब्रह्मा के मन में "एकोऽहं बहुस्याम" इस प्रकार एक से अनेक होने की इच्छा हुई। उस ब्रह्मा के मन में सृष्ट्युत्पत्ति का संकल्प हुआ, इस प्रकार उनके मन से चन्द्रमा उत्पन्न हुआ, तथा दोनों तेजस्वरूप नेत्रों से सूर्य की उत्पत्ति हुई। इसके पश्चात् क्रमशः ब्रह्मा ने सृष्टि की –

मनसः खं ततो वायुरग्निरापो धरा क्रमात्।

गुणैकवृद्ध्या पञ्चेति महाभूतानि जज्ञिरे।।

तत्पश्चात् ब्रह्मा ने आकाश, आकाश के बाद वायु, वायु के बाद अग्नि, अग्नि के बाद जल तथा जल के बाद पृथिवी की उत्पत्ति की। इन पञ्चमहाभूतो में शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गन्ध इन गुणों की उत्पत्ति की। ये क्रमशः आकाशादि पञ्चमहाभूतो में एक-एक गुण की अधिकता में हैं। इसे हम निम्न तालिका के माध्यम से सरलता से समझ सकते हैं।

क्रमांक	**पञ्चमहाभूत**	**गुण**
1.	**आकाश**	**शब्द**
2.	**वायु**	**शब्द – स्पर्श**
3.	**अग्नि**	**शब्द – स्पर्श – रूप**
4.	**जल**	**शब्द – स्पर्श – रूप – रस**
5.	**पृथिवी**	**शब्द – स्पर्श – रूप – रस – गन्ध**

इस प्रकार की पञ्चमहाभूतों की सृष्टि के उपरान्त ब्रह्मा ने क्रमशः नक्षत्रों, चतुर्दश लोकों, ग्रहों आदि की रचना की। उसने इन्हीं लोकों में अनेकों प्रकार के जड़-चेतन सृष्टियाँ उत्पन्न की। नक्षत्रमण्डल की उत्पत्ति के विषय में सूर्यसिद्धान्त में कहा गया है –

पुनर्द्वादशधाऽऽत्मानं व्यभजद् राशिसंज्ञकम्।

नक्षत्ररूपिणं भूयः सप्तविंशात्मकं वशी।।

सगुण पञ्चमहाभूतों की सृष्टि के उपरान्त ब्रह्मा ने ब्रह्माण्ड के गोलस्वरूप को द्वादश राशियों में विभक्त किया। पुनः इन द्वादश राशियों में सत्ताईस नक्षत्रों की रचना की। राशियों को एक वृत्त में प्रत्येक को 30 अंश का बनाया। इनके अन्दर 27 नक्षत्रों की रचना की, प्रत्येक नक्षत्र का मान 13.33 अंश है। ये राशियां क्रमशः मेष , वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ एवं मीन हैं। तथा नक्षत्रों की संख्या 27 है, ये क्रमशः अश्विनी, भरणी, कृतिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वा भाद्रपदा, उत्तरा भाद्रपदा एवं रेवती हैं। तत्पश्चात् ब्रह्मा ने उत्तम–मध्य–अधम इन तीन रूपों में प्रकृति के तीन गुणों सत्त्व–रज–तम इनकी सृष्टि की-

ततश्चराचरं विश्वं निर्गमे देवपूर्वकम्।

ऊर्ध्वमध्याधरेभ्योऽथ स्रोतोभ्यः प्रकृती सृजन्।।

सत्वगुण को सर्वोत्तम, रजोगुण मध्यम तथा तमोगुण अधम गुण माना जाता है। लेकिन मूल प्रकृति में तीनों गुणों की साम्यता रहती है, इन तीन गुणों में अधिकता तथा न्यूनता रहने पर प्रकृति में विकार उत्पन्न होता है, प्रकृति के इसी विकार को सृष्टि कहा जाता है। इस प्रकार इन तीनों गुणों के द्वारा समस्त प्रकार के देवों, मनुष्यों, असुरों, पशुओं, पतंगों, कीटों तथा जड़ चेतन पदार्थों सहित समस्त प्रकार की सृष्टि ब्रह्मा ने की। इनमें सत्वगुण देवों में, रजोगुण मनुष्यों में तथा तमोगुण असुरों में अधिकता से है ।

*4.4.2*ब्रह्मा एवं ब्रह्म

ब्रह्मा सृष्टि के रचनाकार के रूप में प्रसिद्ध हैं तथा ब्रह्म भारतीय दार्शनिक विज्ञान में परमतत्त्व को कहा गया है। ये दोनों अलग-अलग सत्ताएं हैं। ब्रह्म का दार्शनिक चिन्तन उपनिषदों में विस्तार से किया गया है, तथा ब्रह्मा का विस्तृत वर्णन पौराणिक साहित्य में हमें मिलता है। लेकिन दोनों के ही मूल सिद्धान्त वेदों की ऋचाओं में प्राप्त होते हैं।ब्रह्म

को समस्त सृष्टि का चेतन तत्त्व माना गया है। वेदान्त दर्शन के अनुसार यह जगत मिथ्यारूप है, भ्रमात्मक है, अज्ञानस्वरूप है तथा सत्य केवल ब्रह्म ही है। इसीलिए वेदान्तदर्शन में कहा गया है –**"ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या"**। यह जगत माया का परिणाम है, माया अपनी दो शक्तियों आवरण और विक्षेप का प्रयोग कर अज्ञान को उत्पन्न करती है। आवरण की शक्ति का प्रयोग कर माया सत्य को छुपा लेती है, अर्थात् सत् के ऊपर आवरण डाल देती है। इन्ही आवरणों को बन्धन भी कहा जाता है। जीवात्मा इन्हीं बन्धनों में फंसकर रह जाता है और सत्य का ज्ञान नहीं कर पाता। जो जीवात्मा बन्धनों से निकलकर ब्रह्म का अनुभव कर लेता है, वह मोक्ष प्राप्त करता है। मोक्ष की प्राप्ति के लिए बन्धनरूपी आवरण से मुक्ति आवश्यक है। अज्ञान का आवरण ज्ञान से ही हट सकता है, यही ज्ञान ब्रह्म है, अतः हमें ब्रह्म की साधना करनी चाहिए। ब्रह्म ज्ञानस्वरूप है, ऐतरेय उपनिषद् में ब्रह्म को **"प्रज्ञानं ब्रह्म"** इस प्रकार कहकर, ज्ञान को ही ब्रह्म कहा है। इनके अनुसार ब्रह्मतत्त्व का ज्ञान ही परमलक्ष्य है। ब्रह्म के ज्ञान होने से अज्ञान की निवृत्ति होती है तथा मुमुक्षु को सत्य का अनुभव होता है, इसी को मोक्ष भी कहा गया है। मोक्षदशा में जीव अज्ञान के आवरण से हटकर अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त करता है, और वह ज्ञानवान होकर **"अहं ब्रह्मास्मि"** मैं ब्रह्म हूं, का अनुभव करता है।

4.4.3 त्रिदेव परिकल्पना और ब्रह्मा

त्रिदेव कल्पना सनातन परम्परा का प्रमुख सिद्धान्त है, इसके अनुसार तीन देव मिलकर समस्त सृष्टि का संचालन करते हैं और इन तीनों के कार्य भी अलग-अलग होते हैं। त्रिदेव सिद्धान्त में ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ये तीन देव माने गए हैं, इन्हें त्रिमूर्ति नाम से भी जाना जाता है। इनमें सृष्टि की रचना का कार्य ब्रह्मा का है, विष्णु उत्पन्न की गई सृष्टि के पालक माने गए हैं तथा शिव सृष्टि के संहारक माने जाते हैं। सृष्टि-स्थिति-लय ये तीनों निरन्तर चलते रहें इसके लिए त्रिदेवों का कार्यविभाजन भी महत्वपूर्ण हो जाता है, इसी दृष्टि को ध्यान में रखकर प्राचीन भारतीय ऋषियों ने त्रिदेव सिद्धान्त की परिकल्पना की। दार्शनिक दृष्टि से तीन गुण ही त्रिदेव के स्वरूप में हैं, जिसमें सत्व, रज तथा तम इन तीन गुणों के अनुसार इन त्रिदेवों के स्वरूप को प्रतिपादित किया जाता है। ब्रह्मा को रजोगुण प्रधान, विष्णु को सत्वगुण प्रधान तथा शिव को तमोगुणप्रधान देव कहा जाता है। ये तीनों अपने-अपने गुणों की प्रधानता के परिणामस्वरूप सृष्टिकार्य में प्रवृत्त होते हैं।

4.4.4 त्रिदेव का दार्शनिक स्वरूप

किसी भी वस्तु अथवा तत्त्व के तीन ही स्तर हो सकते हैं- पहला उत्पत्ति, दूसरा स्थिति तथा तीसरा विनाश। जो वस्तु उत्पन्न होगी उसकी स्थिति के अनुसार अस्तित्त्व रहेगा ही तथा उसका विनाश भी निश्चित ही है। "यत् पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे" इस सिद्धान्त के अनुसार जो कुछ भी पिण्ड में विद्यमान है, वही इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में भी विद्यमान है अतः जिस प्रकार पिण्ड की उत्पत्ति होती है कुछ समय अपने स्वरूप में स्थित होने के बाद उसका विनाश हो जाता है उसी प्रकार यह ब्रह्माण्ड भी उत्पन्न हुआ, आज अपनी स्थिति में विराजमान है तथा एक दिन अवश्य ही इसका विनाश भी निश्चित ही होगा। इस प्रकार त्रिदेव कल्पना में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की सृष्टि की बात कही जाती है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के रचयिता अथवा उत्पत्तिकर्ता ब्रह्मा माने गए हैं। कार्य-कारण सिद्धान्त के अनुसार इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का कारण भी विद्यमान रहा होगा, इस प्रकार की परिकल्पना की जा सकती है। पौराणिक ग्रन्थों में इसी सिद्धान्त के अनुसार ऋषियों ने अपनी परिकल्पनाएं की, जिसके फलस्वरूप त्रिदेव सिद्धान्त के कर्ता, कार्य और कारण को स्पष्ट करने के लिए त्रिदेवों को भी स्पष्ट किया गया। इस प्रकार ब्रह्माण्ड की स्थिति को बनाए रखने के लिए सभी प्रकार की व्यवस्था करने का कार्य विष्णु का है, इसलिए उन्हें पालनकर्ता भी कहा जाता है। सृष्ट वस्तु का यदि विनाश नहीं होगा तो गुणों में विकार उत्पन्न हो जाएगा और सृष्टि का संतुलन बिगड़ जाएगा इसलिए सृष्ट वस्तु का विनाश होना भी अत्यन्त आवश्यक है। ब्रह्माण्ड के समस्त प्रकार की वस्तुओं के विनाश का कार्य भगवान शिव का माना गया है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.13. सूर्यसिद्धान्त किस शास्त्र का ग्रन्थ है?

प्र.14. परमात्मा ने सृष्टि की उत्पत्ति के लिए सर्वप्रथम किसे रचा?

प्र.15. वामन ने कितने पग भूमि दान में मांगी?

प्र.16. एकोऽहं बहुस्याम का अर्थ बताइये।

प्र.17. पञ्चमहाभूतों के पाँच गुण कौन-कौन से हैं?

प्र.18. राशियों की संख्या कितनी है? नाम बताए।

प्र.19. नक्षत्रों की संख्या कितनी है?

प्र.20. प्रकृति के तीन गुण कौन-कौन से हैं?

प्र.21. वेदान्त दर्शन के अनुसार जगत क्या है?

प्र.22. वेदान्तदर्शन के अनुसार सत्य क्या है?

प्र.23. माया की कितनी शक्तियां हैं?

प्र.24. मोक्षदशा में ज्ञाता किस स्वरूप को प्राप्त होता है?

प्र.25. त्रिदेव कौन-कौन हैं? तथा इनके कार्य बताइये।

4.5 सारांश

भारतीय सृष्टिविज्ञान में ब्रह्मा को विधाता के नाम से भी जाना जाता है। इसका प्रमुख कारण यही है कि ब्रह्मा को सृष्टि का रचनाकार माना गया है। उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ब्रह्मा सम्पूर्ण संस्कृत तथा भारतीय वाङ्मय में सृष्टिकर्ता के रूप में प्रसिद्ध है। ब्रह्मा का व्यापक वर्णन पुराणों में मिलता है। दार्शनिक ग्रन्थों में वर्णित ब्रह्म सत्–चित्–आनन्द स्वरूप है, तथा पौराणिक ब्रह्मा की कल्पना ब्रह्म से अलग है। ब्रह्मा को समझने के लिए त्रिदेव सिद्धान्त को समझना आवश्यक है, जिसमें ब्रह्मा को सृष्टिकर्ता, विष्णु को पालनकर्ता तथा शिव को संहारकर्ता के रूप में प्रस्तुत किया गया है। ब्रह्मा का वर्णन वैदिक साहित्य, पौराणिक साहित्य तथा ज्योतिष के अनेकों ग्रन्थों में हमें प्राप्त होता है। इन सभी अध्ययनों के आधार पर ब्रह्मा को सृष्टिकर्ता के रूप में स्वीकार किया गया है।

4.6 कठिन शब्दार्थ

जड़	- निर्जीव
सर्वशक्तिमान्	- सर्वाधिक शक्ति ये युक्त
त्रिदेव	- तीन देव
पौराणिक	- पुराणों से संबन्धित

जगत - संसार

शुद्धचैतन्य - शुद्ध एवं चेतना से युक्त

नाभिकमल - नाभी में उत्पन्न कमल

हिरण्याण्ड - सोने का अण्डा

आवरण - ढका हुआ

सृष्ट्युत्पत्ति - सृष्टि की उत्पत्ति

सम्पन्न - युक्त

प्रतिदिन - प्रत्येक दिन

काम - इच्छा

विद्यमान - स्थित

विलक्षण - विशेष प्रकार के लक्षणों से युक्त

अविद्या - विद्या का अभाव

व्यापकता - स्थिति की विशालता

उत्कृष्ट - सम्पन्न, योग्य

अनन्त - जिसका अन्त न हो सके

सक्षम - योग्य

सर्वशक्तिसम्पन्न - सभी प्रकार की शक्तियों से युक्त

प्रकाशित - विकसित, फैलाना

महारथी - योद्धा

असुर - राक्षस

ज्योतिपुञ्ज - एकत्रित प्रकाश

आजीवन - जीवन पर्यन्त

सहस्र	- एक हजार
युगात्मक	- युग के बराबर
तत्त्ववेत्ता	- तत्त्व को जानने वाले
दिवसारम्भ	- दिन की शुरुआत
चराचर	- चर और अचर, जीव और निर्जीव
संहार	- समाप्त करना, नष्ट करना
पाद	- पैर
वामनावतार	- वामन, बौना अवतार
विराटस्वरूप	- बहुत बड़ा रूप
उपरान्त	- बाद में
जड़-चेतन	- जीव और निर्जीव
सगुण	- गुणों के सहित
सर्वोत्तम	- सबसे उत्तम
न्यूनता	- कमी
साम्यता	- बराबरी
आवरण	- ढकना
ज्ञाता	- जानने वाला
मुमुक्षु	- मोक्ष की इच्छा रखने वाला
पालक	- पालन करने वाला
लय	- प्रलय
उत्पत्तिकर्ता	- उत्पन्न करने वाला

4.6.1 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. भातीय ज्ञान विज्ञान का मूल स्रोत वेद हैं।
2. जो पिण्ड में है, वही ब्रह्माण्ड में है। इस प्रकार जो सत्ता छोटे पदार्थ में स्थित है वही सत्ता बडे स्वरूप में भी होती है।
3. ब्रह्मा की उत्पत्ति श्रीहरि विष्णु के नाभिकमल में हुई।
4. परमेश्वर के मन में सृष्टि की जिज्ञासा उत्पन्न हुई।
5. दुर्गासप्तशती मार्कण्डेयपुराण से संबन्धित है।
6. मधु और कैटभ भगवान विष्णु के नाभिकमल में स्थित ब्रह्मा के बध के लिए उद्यत हुए।
7. सभी लोकों के पितामह ब्रह्मा हैं।
8. ब्रह्मा की आयु 100 वर्ष है।
9. ब्रह्मा के एक दिन को कल्प कहते हैं।
10. ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का विनाश नैमित्तिक प्रलय कहलाता है।
11. ब्रह्मा की एक रात्रि एक कल्पमान की अर्थात् एक हजार युगों की होती है।
12. ब्रह्मा का एक दिन एक हजार युगों का होता है।
13. सूर्यसिद्धान्त ज्योतिषशास्त्र का ग्रन्थ है।
14. परमात्मा ने सर्वप्रथम सृष्टि की उत्पत्ति के लिए ब्रह्मा की उत्पत्ति की।
15. वामन ने तीन पग भूमि दान में मांगी।
16. मैं एक हूं, तथा अनेक होना चाहता हू। अर्थात् एक से अनेक की इच्छा।
17. आकाशादि पञ्चमहाभूतों के पांच गुण क्रमशः शब्द-स्पर्श-रूप-रश-गन्ध हैं।
18. मेष–वृष–मिथुन–कर्क–सिंह–कन्या–तुला–वृश्चिक–धनु–मकर–कुम्भ–मीन ये बारह राशियां हैं।
19. नक्षत्रों की संख्या 27 है।
20. प्रकृति को तीन गुण सत्त्व-रज-तम हैं।
21. वेदान्त दर्शन के अनुसार जगत मिथ्यारूप है, भ्रमात्मक है, अज्ञानस्वरूप है।
22. वेदान्त दर्शन के अनुसार सत्य ब्रह्म है।

23. माया की दो शक्तियां हैं, आवरण और विक्षेप।

24. मोक्षदशा में ज्ञाता अज्ञान के आवरण से हटकर अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त करता है।

25. त्रिदेव ब्रह्मा-विष्णु-महेश हैं। इनका कार्य क्रमशः उत्पत्ति-पालन-संहार हैं।

4.6.2 व्याख्यात्मक प्रश्न

प्र.1. वैदिक वाङ्मय में ब्रह्मा का वर्णन किस प्रकार किया गया है*?* विस्तार से बताइये।

प्र.2. ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का वर्णन कीजिए।

प्र.3. ब्रह्म एवं ब्रह्मा में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

प्र.4. त्रिदेव की कल्पना को स्पष्ट कीजिए।

4.7 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2016
2. भुवनकोश विमर्श, प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स दिल्ली, वर्ष 2004
3. यजुर्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2015
4. विष्णुपुराणम्, वेदव्यास,गोरखपुर ,गीताप्रेस, सन् 1961
5. श्रीमद्भागवतपुराणम्, वेदव्यास,गोरखपुर, गीताप्रेस, संवत् 2059
6. श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2048
7. सूर्यसिद्धान्तः, शास्त्री, कपिलेश्वरः, वाराणसी, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, सन् 1983
8. वास्तुशास्त्रविमर्श, शोधपत्रिका, श्री ला.ब.शा.रा.सं.विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

ईकाई -5 प्रजापति द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति

पाठ संरचना

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 वैदिक वाङ्मय में प्रजापति

5.4 पौराणिक वाङ्मय में प्रजापति

5.5 प्रजापति द्वारा सृष्टि

5.6 सारांश

5.7 कठिन शब्द

5.7.1 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.7.2 व्याख्यात्मक प्रश्न

5.8 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थसूची

5.1 प्रस्तावना

हमारा ब्रह्माण्ड कब और कैसे उत्पन्न हुआ, इस पर अनेकों विचारकों ने अपने-अपने सिद्धान्त प्रस्तुत किए हैं। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के विषय में वैदिक साहित्य से लेकर वर्तमान पर्यन्त वैज्ञानिक निरन्तर अनुसन्धान कर रहे हैं। अनेकों सन्दर्भों के माध्यम से हम कह सकते हैं कि वैदिक साहित्य में भी इसके विषय में व्यापक जिज्ञासा थी। ऋषियों ने ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में भी पर्याप्त मात्रा में चिन्तन किया। सृष्टि के रहस्यों को हमारे वैदिक ऋषियों ने जानने का प्रयास किया और कुछ सिद्धान्त भी हमारे समक्ष प्रस्तुत किए। ब्रह्माण्ड तथा उसकी उत्पत्ति के विषय में भारतीय ज्ञान परम्परा के अध्ययन के आधार पर प्रमुख चार सिद्धान्त हमें प्राप्त होते हैं। इसमें ब्रह्मा द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति, विराटपुरुष द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति, विश्वकर्मा द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति तथा प्रजापति द्वारा ब्रह्माण्डोत्पत्ति का सिद्धान्त ब्रह्माण्डोत्पत्ति तथा सृष्टि विज्ञान के सन्दर्भ में हमें दिशा-निर्देश करते हैं। इन सिद्धान्तों में प्रजापति द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का सिद्धान्त प्रमुख है। इस सिद्धान्त के अनुसार समस्त प्रकार की सृष्टि के रचयिता प्रजापति हैं तथा इस सृष्टि का संचालन भी प्रजापति द्वारा ही किया जाता है। प्रजापति एक है अथवा अनेक? इस पर भी कई मत हैं, प्रायः प्रजापति के अनेकत्व के विषय में हमें वर्णन प्राप्त होता है। प्रजापति के विषय में कहा गया है कि प्रजा का पति अर्थात् प्रजा के स्वामी को प्रजापति कहा जाता है। सर्वप्रथम ऋग्वेद में प्रजापति का वर्णन प्राप्त होता है–

"हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्"

अर्थात् परमात्मा से सर्वप्रथम प्रजापति उत्पन्न हुए और वे उत्पन्न होते ही सभी लोकों के स्वामी बन गए। यही प्रजापति वैदिक श्रुतियों में हिरण्यगर्भ नाम से प्रसिद्ध हुए। पौराणिक साहित्य में प्रजापति को ब्रह्मा की पहली उत्पत्ति मानी जाती है।आगे चलकर यही प्रजापति विभिन्न प्रकार की सृष्टियों का सृजन करते हैं। महाभारत के मोक्षधर्म में इक्कीस तथा हरिवंशपुराण में तेरह प्रजापतियों का वर्णन मिलता है।इसके अनुसार पितामह ब्रह्मा ने सर्वप्रथम लोकों के कर्ता प्रजापतियों का सृजन किया तत्पश्चात् इन प्रजापतियों ने लोकों की रक्षा की और नई सृष्टि उत्पन्न की। वैदिक वाङ्मय से लेकर पौराणिक वाङ्मय तक प्रजापतियों का वर्णन हमें प्राप्त होता है। इन सभी संदर्भों के आधार पर प्रजापति एक महत्वपूर्ण परिकल्पना है, जो सम्पूर्ण सृष्टि का कारण भी है, और सृष्टि

का संचालक भी। प्रस्तुत अध्ययन में हम प्रजापति द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के विषय में जानेंगे।

5.2 अध्ययन का उद्देश्य

- प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से हम ब्रह्माण्डोत्पत्ति के कारणों को समझने का प्रयास करेंगे।
- प्रजापति द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का अध्ययन करेंगे।
- वेदों में वर्णित प्रजापति के वर्णनों को जान सकेंगे।
- पुराणों में वर्णित प्रजापति के विषय में जान सकेंगे।
- सृष्टि की उत्पत्ति के संदर्भ में प्रजापति द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का अध्ययन करेंगे।

5.3 वैदिक वाङ्मय में प्रजापति

प्रजापति को सम्पूर्ण प्रजाओं का स्रष्टा माना गया है। पौराणिक ब्रह्मा वैदिक साहित्य में वर्णित प्रजापति से साम्यता रखता है। सभी प्रकार के ज्ञान-विज्ञान का स्रोत वेद ही हैं अतः ब्रह्माण्डोत्पत्ति का वर्णन भी हमें वेदों में प्राप्त होता है। इस प्रकार प्रजापति को सृष्टिकर्ता माना जाता है। प्रजापति का वर्णन वेदों में अनेक स्थानों में हमें मिलता है। ऋग्वेद के दशम मण्डल में प्रजापति का वर्णन अलग-अलग कार्यों के संपादन तथा कार्यों की प्राप्ति हेतु मिलता है। ऋग्वेद मेंगायों को अत्यधिक दुग्धवती बनाने वाले प्रजापति ही कहे गए हैं। यथा –

प्रजापतिर्मह्यमेता रराणो विश्वैर्देवैः पितृभिः संविदान।

शिवाः सतीरूप नो गोष्ठमाकस्तासां वयं प्रजया सं सदेम।।

अर्थात् प्रजापति ने समस्त देवों तथा पितरों कीकृपास्वरूप गौ हमें प्रदान की हैं, वे ही गौ को कल्याणकारिणी बनाने वाले हैं तथाहमें गौ के बछड़े प्रदान करने वाले भी वही प्रजापति हैं।

ऋग्वेद के ही 10वें मण्डल के 184वें सूक्त में प्रजापति सन्तान देने वाले देवता के रूप में वर्णित हैं, उनसे प्रार्थना की गई है कि वे हमें सन्तान प्रदान करें। विष्णु, त्वष्ट्रा, धाता तथा प्रजापति मिलकर अलग-अलग कार्यों सम्पादन करने वाले हैं, जिसके परिणामस्वरू संतान की प्राप्ति होती है। इसके अतिरिक्त एक स्वतंत्र सूक्त में भी प्रजापति को सर्वशक्तिमान देवता के रूप में वर्णित किया गया है। प्रजापति को वैदिक साहित्य में हिरण्यगर्भ नाम से भी संबोधित किया गया है। यथा –

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।

स दधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

अर्थात् सर्वप्रथम परमात्मा की कृपा से प्रजापति उत्पन्न हुए। वे प्रजापति उत्पन्न होते ही सम्पूर्ण जगत के स्वामी बन गए। इस प्रकार प्रजापति समस्त लोकों के स्वामी हैं, और सृष्टि की उत्पत्ति इन्हीं द्वारा हुई है, ये प्रजापति ही सृष्टि को उत्पन्न करने वाले हैं, संचालन करने वाले हैं तथा पालन करने वाले हैं। वे ही संसार के परमपिता हैं। उन्होंने धरती एवं द्यौ को धारण किया।अतः पुरोडाश आदि द्वारा प्रजापति को आहुति प्रदान करें। इस प्रकार यहाँ प्रजापति सर्वशक्तिमान व पूजन का अधिकारी माना गया है। प्रजापति को शक्तिप्रदायक एवं विश्व के उपास्य देव के रूप में वर्णित करते हुए ऋषि कहता है कि –

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।

यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

अर्थात् जो प्रजापति आत्माओं को बल देने वाले हैं, सभी विश्व के प्राणी जिनकी आज्ञा को स्वीकार करते हैं, मरण एवं अमरता जिनकी छाया है, उनको आहुति प्रदान करें।

इस प्रकार प्रजापति को सभी प्रकार का बल प्रदान करने वाला देवता बताया गया है। विश्व का संचालन भी यही प्रजापति करते हैं। उनके बनाए हुए नियमों को सभी स्वीकार करते हैं। मृत्यु और अमरता के स्वामी भी वहीं हैं। आगे कहा गया है कि प्रजापति ने ही आकाश तथा पृथ्वी की स्थापना की है। यही अन्तरिक्ष के स्थानों में व्याप्त हैतथा समस्त विश्व तथा समस्त प्राणियों को उत्पन्न करने वाले भी प्रजापति ही हैं –

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः।

यस्योमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृव्व्हा येन स्वः स्तभितं येन नाकः।

यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

अर्थात् जिनकी महिमा से समस्त हिमालय उत्पन्न हुआ है और यह समुद्र पर्यन्त धरती जिसकी कार्यस्थली है। ये दिशाएं जिनकी भुजाएं हैं। जिसने द्यौ एवं धरती को स्थिर किया है। जिसने स्वर्ग तथा आदित्य को धारण किया है एवं जो अन्तरिक्ष में जल बनाने वाले हैं, उस प्रजापति को आहुति प्रदान करें।

इस प्रकार प्रजापति ही पर्वत, नदी, वृक्ष, धरती, दिशाएं आदि सभी प्रकार की सृष्टि का विधाता है। द्युलोक एवं भूलोक को स्थिर करने वाले भी प्रजापति ही हैं। आकाश में सूर्य को धारण करने वाले तथा वर्षा देने वाले भी प्रजापति ही हैं। प्रजापति की ही आज्ञा से अन्तरिक्ष में जल बनता है, वह जल वर्षा के रूप में हमें प्राप्त होता है। जैसे ऋषि कहता है-

आपो ह यद् बृहतीर्विश्वमायन्गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम्।

ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

अर्थात् जब विस्तृत जल ने सारे संसार को ढक लिया था। जल ने गर्भधारण करके अग्नि और समस्त आकाश को जन्म दिया। उस समय एकमात्र पुरुष उत्पन्न हुआ, वह प्रजापति थे। अतः उन प्रजापति को आहुति प्रदान करें।

इस ऋचा में प्रजापति के जन्म का वर्णन किया गया है। प्रलयकाल में जब सम्पूर्ण जगत जलमग्न था तब हिरण्याण्ड के रूप में जल ने गर्भधारण किया, उसी हिरण्याण्ड के फूटने पर उसका ऊपरी भाग से आकाश तथा निम्न भाग से पृथिवी उत्पन्न हुई। इसके पश्चात् इसमें से प्रजापति उत्पन्न हुए और वह इस समस्त जगत के स्वामी हो गए। इस सूक्त में, आकाश एवं पृथ्वी, जल एवं सभी जीवित प्राणियों के स्त्रष्टा के रुप में प्रजापति की स्तुति की गयी हैतथा कहा गया है किपृथ्वी में जो कुछ भी है, उसके अधिपति के रुप में प्रजापति का जन्म हुआ है। यह श्वास लेनेवाले समस्त गतिशील जीवों के संचालक हैं और निर्जीव जगत के रचनाकार भी यही प्रजापति हैं। यही सब

देवों में श्रेष्ठ हैं तथा प्रजापति के ही बनाए गए विधानों का सभी प्राणी पालन करते हैं। इनका यह विधान देवताओं को भी मान्य है।

अथर्ववेद संहिता, शुक्लयजुर्वेदीय वाजसनीय संहितातथा ब्राह्मण ग्रन्थों में प्रजापति को सर्व प्रमुख देवता माना गया है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसारयह प्रजापति देवों का पिता है। सृष्टि के आरम्भ में अकेले प्रजापति का ही अस्तित्त्व था एवं यह पृथ्वी का सर्वप्रथम याज्ञिक थे। देवों को ही नहीं, वरन् असुरों को भी प्रजापति ने ही बनाया था। ऋग्वेद के कई ऋचाओं के दृष्टा भी प्रजापति हैं। वैदिक साहित्य में प्रजापति को सर्वप्रमुख देवता के रूप में वर्णित किया गया है, उपनिषदों में प्रजापति को विश्वात्मा कहा है। तत्त्वज्ञान के विषय में भी जब किसी को किसी प्रकार की कोई शंका होती थी, तब दैत्य, मानव, देव आदि सभी जाकर प्रजापति से समाधान प्राप्त करते थे। ऋग्वेद, ब्राह्मण एवं उपनिषद् ग्रन्थों में प्रजापति को प्रायः देवता के रूप में माना गया है, परन्तुइन्ही ग्रन्थों में कई स्थानों में प्रजापति को अन्य रूपों में भी निरूपित किया गया है। ऋग्वेद में एक स्थानपरप्रजापति उस 'सवितृ' की उपाधि के रूप में आता है, जिसे आकाश को धारण करनेवालाएवं विश्व का प्रजापति कहा गया है। दूसरे एक स्थानपर इसे सोम की उपाधि के रूप में प्रस्तुत किया गया है। ब्राह्मण एवं उपनिषद ग्रन्थों मेंप्रजापति शब्दविभिन्न अर्थों से प्रयुक्त किया गया है।कुछ इस प्रकार से हैं – यज्ञ, बारह माह, वैश्वानर, अन्न, वायु, साम एवं आत्मा। जैसे नक्षत्रिय प्रजापति के रूप का वर्णन तैत्तरीय ब्राह्मण में इस प्रकार मिलता है-

यो वै नक्षत्रियं प्रजापतिं वेद। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः। हस्त एवास्य हस्तः। चित्रा शिरः। निष्ट्यां हृदयं। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठानुराधाः। एष वै नक्षत्रियः प्रजापतिः।

इससे प्रतीत होता है कि, उस समय किसी भी वस्तु की महत्ता वर्णित करने के लिए, 'प्रजापति' उपाधि का प्रयोग होता था। पंचविंश ब्राह्मण के अनुसारकिसी के महत्त्व का वर्णन करने के लिएउन्हें प्रजापति उपाधि दी गयी है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.1. हरिवंश पुराण में कितने प्रजापतियों का वर्णन मिलता है?

प्र.2. प्रजापति का अर्थ बताइये।

प्र.3. प्रजापतियों का वर्णन सर्वप्रथम कहां मिलता है?

प्र.4. ऋग्वेद के अनुसार गौ को दुग्धवती बनाने वाला कौन है?

प्र.5. ऋग्वेद के कौन से मण्डल में प्रजापति सूक्त मिलते हैं?

प्र.6. प्रजापति को वैदिक साहित्य में किस नाम से संबोधित किया गया है?

प्र.7. सभी प्रकार की शक्ति कौन प्रदान करता है?

प्र.8. हिमालय तथा धरती पर्यन्त समस्त प्रकार की सृष्टि किसकी कार्यस्थली है?

प्र.9. अन्तरिक्ष में जल किसकी आज्ञा से बनता है?

प्र.10. जल के गर्भधारण से कौन उत्पन्न हुआ?

प्र.11. शतपथ ब्राह्मण के अनुसार प्रजापति कौन है?

प्र.12. विश्वात्मा किसे कहा गया है?

प्र.13. ब्राह्मण तथा उपनिषदों में प्रजापति को किन अर्थों में प्रयुक्त किया गया है?

प्र.14. पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार प्रजापति किसे कहते हैं?

5.4 पौराणिक साहित्य में प्रजापति

प्रजापति का विवरण वेदों के बाद पौराणिक साहित्य में भी पर्याप्त मात्रा में मिलता है। पुराणों में ब्रह्मा के मानस पुत्र के रूप में भी प्रजापति को जाना जाता है। वायुपुराण के अनुसार सर्वप्रथमब्रह्मा ने सृष्टि की उत्पत्ति की। उस सृष्टि के संचालन तथा उसे आगे बढाने के लिए उन्होंनेअपने शरीर के विभिन्न अवयवों से अनेक मानसपुत्रों का निर्माण किया। मानसपुत्रों के निर्माण के पीछे उनका उद्देश्य सृष्टि विस्तार करना ही था। इस कारण ब्रह्माने अपने मानसपुत्रों को प्रजा उत्पन्न करने तथा उनका भरण-पोषण करने की आज्ञा दी। इसी कारणब्रह्मा के मानस पुत्रों को सामूहिक रूप से प्रजापति के नाम से जाना जाता है। ब्रह्मा के सभी पुत्र सृष्टिनिर्माण में अपनी-अपनी भूमिका का निर्वहण करते हैं अतः उन सभी को प्रजापति कहा जाता है।पुराणों में 'प्रजापति' शब्द

की व्याख्या 'संतति उत्पन्न करनेवाला' इस रूप में की गयी है। इस विषय में वायुपुराण में लिखा है–

लोकस्य संतानकरास्तैरिमा वर्धिताः प्रजाः।

प्रजापतय इत्येवं पठ्यन्ते ब्रह्मणः सुताः॥

अर्थात् सभी लोकों की सृष्टियों को करने वाला तथा प्रजा का पालन-पोषण करने वाला प्रजापति है। ये प्रजापति ब्रह्मा के पुत्र हैं।

मत्स्य पुराण में भी कुछ इसी प्रकार का वर्णन मिलता है,जो निम्नलिखित श्लोक में द्रष्टव्य है–

विश्वे प्रजानां पतयो येभ्यो लोका विनिसृताः।

अर्थात् विश्व के स्वामी का नाम प्रजापति है। इसी प्रजापति से समस्त प्रकार की सृष्टि उत्पन्न हुई।

विश्व के स्वामी से अर्थ प्रजापति के अनन्त शक्तिसम्पन्नता से है। यह प्रजापति सृष्टि का संचालन करता है तथा समस्त प्रकार की सृष्टि का कारण भी यही है। इस प्रकार पुराणों में प्रजापति को ही समस्त सृष्टि का रचनाकार माना गया है। पुराणों में प्रजापतियों की संख्या के बारे में भी एकवाक्यता नहीं है। पुराणों में प्रजापतियों की संख्याओं के लियेसात, तेरह, चौदह, इक्कीस आदि भिन्न भिन्न संख्याएंमिलती हैं।प्रायः सभी पुराणों में निम्नलिखित व्यक्तियों का निर्देश प्रजापति के नाम से किया गया है–

ब्रह्मास्थाणुर्मनुर्दक्षो भृगुर्धर्मस्तथा यमः।

मरीचिरङ्गिरात्रिश्च पुलस्त्यं पुलहः क्रतुः।।

वसिष्ठः परमेष्ठी च विवस्वान् सोम एव च।

कर्दमश्चापि यः प्रोक्तः क्रोधोऽर्वाक् क्रीत एव च।।

एकविंशतिरुत्पन्ना ते प्रजापतयः स्मृताः।।

इस प्रकार मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष, वसिष्ठ, भृगु औरनारद ये प्रमुख प्रजापतियों के नाम से वर्णित हैं। इनके अतिरिक्त वायुपुराण, ब्रह्माण्डपुराण, गरुड़पुराण, मस्त्यपुराण एवं महाभारत में 'अन्याः बहवः' ऐसा निर्देश

करकेऔर भी कईप्रजापतियों की नामावली दी गयी है। पुराणों में बहुत सारी जगहों पर प्रजापति को समस्त सृष्टि का सृजन करनेवाले ब्रह्मा से समीकृत किया गया है। कुछस्थानों पर इसे व्यास भी कहा गया है।विभिन्न पुराणों में प्रजापतियों की नामावलि निम्नप्रकार से दी गयी है–

वायु एवं ब्रह्मांड पुराण–कर्दम, कश्यप, शेष,विक्रांत,सुश्रवस्, बहुपुत्र,कुमार, विवस्वत,
अरिष्टनेमि,बहुल,कुशोच्चय,वालखिल्य,संभूत,परमर्षय,मनोजव,सर्वगत,सर्वभोग।

गरुड पुराण–धर्म, रुद्र, मनु, सनक, सनातन, सनत्कुमार, रुचि, श्रद्धा, पितर, बर्हिषद, अग्निष्वात्त, कव्यादान, दीप्यान, आज्यपान।

मस्त्य पुराण–गौतम, हस्तींद्र, सुकृत, मूर्ति, अप्, ज्योति, त्र्यय, समय। मत्स्य में निर्दिष्ट ये सारे प्रजापति स्वायंभुव मन्वन्तर में पैदा हुए थे।

महाभारत–रुद्र, भृगु, धर्म, तप, यम, मरीचि,अंगिरा,अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ, चन्द्रमा, क्रोध, विक्रीत, बृहस्पति, स्थाणु, मनु, क, परमेष्ठिन्, दक्ष, सप्त पुत्र, कश्यप,, कर्दम, प्रल्हाद, सनातन, प्राचीनबर्हि, दक्ष प्रचेतस, सोम, सर्यमन्, शशबिंदुपुत्र वगौतम। महाभारत में मरीचि ऋषि के पुत्र कश्यप को प्रजापति कहा गया हैएवं उसे मनुष्य, देव एवं राक्षसों का आदि पुरुष कहा गया है। महाभारत के अनुसारमरीचि ऋषि के पुत्र का नाम प्रजापति अरिष्टनेमि अथवा कश्यप था, जिसका विवाह दक्ष की कन्याओं से हुआ था। उसी कश्यप से सारी सृष्टि का निर्माण हुआ। यादवों के चक्रवर्ती राजा शशबिन्दु को भी महाभारत में एक स्थान पर प्रजापति कहा गया है।

ब्रह्माण्ड पुराण के अनुसारप्रत्येक कल्प में नयी सृष्टि का निर्माण करना प्रजापति का कार्य है।एक कल्प के बीत जाने पर प्रलय होता है, प्रलय के पश्चात् पुनः सृष्टि का निर्माण होता है। एक कल्प 1000 महायुगों के बीत जाने पर माना जाता है। यह कल्प ब्रह्मा का एक दिन कहलाता है। दिन के बीतने पर ब्रह्मा की रात्रि प्रारम्भ होती है। इस रात्रि के प्रारम्भ में प्रलय होता है। प्रलय के पश्चात् अगले दिन पुनः सृष्टिनिर्माण करना प्रजापति का कार्य है।यह प्रक्रिया प्रत्येक कल्प में निरन्तर चलती रहती है। एक कल्प का समय पूर्ण होने पर प्रलय का वर्णन विष्णुपुराण में भी मिलता है। प्रायः ऐसा ही वर्णन

ज्योतिषशास्त्र में भी मिलता है। प्रलय के पश्चात् रात्रि के अन्त में पुनः सृष्टि का वर्णन विष्णुपुराण के अनुसार यह है –

ततः प्रबुद्धो रात्र्यन्ते पुनः सृष्टिं करोत्यजः

अर्थात् ब्रह्मा की एक रात्रि के पूर्ण होने पर प्रलय भी समाप्त हो जाता है, इसके बाद ब्रह्मा पुनः सृष्टिनिर्माण करते हैं।

पद्मपुराण के अनुसार, रोहिणी नक्षत्र के देवता को प्रजापति माना गया है। प्रजापति को जब शनि की पीड़ा होती है, तब सृष्टि का संहारहोता है। धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में प्रजापति को एक धर्मशास्त्रकार के रूप में भी वर्णित किया गया है।बौधायन के धर्मसूत्र में, प्रजापति के धर्मशास्त्रविषयक मत ग्राह्य माने गये है। वसिष्ठ ने भी अपने धर्मशास्त्र में इसके मतों का अनेक बार निर्देश किया है। बौधायन तथा वसिष्ठ धर्मसूत्रों में निर्देशित प्रजापति के सारे श्लोक प्रायः मनुस्मृति में पुनः प्राप्त हैं। इसी के आधार पर कहा जा सकता है किबौधायन तथा वसिष्ठ ने प्रजापति को मनु का ही नामांतर माना है, और स्मृतिकार के रूप में स्वीकार किया है। आनंदाश्रम संग्रह मेंप्रजापति की श्राद्धविषयक एक स्मृति दी गयी है, जिसमें एक सौ अठ्ठान्नवे श्लोक हैं। ये श्लोक अनुष्टुप, इन्द्रवज्रा, उपजाति, वसन्ततिलका तथा स्त्रग्धरा वृत्तों में हैं। इस ग्रन्थ में कल्पशास्त्र, स्मृति, धर्मशास्त्र तथा पुराणों पर विचार किया गया है। प्रजापति के लोकव्यवहार सम्बन्धी विचारधारा का उल्लेख अपरार्क, स्मृतिचन्द्रिका, पराशर माधवीय तथा अन्य ग्रन्थों में भी किया गयाहै। प्रजापति के अनुसार, निःसंतान विधवा का अपने पति की सम्पूर्ण संपत्ति पर अधिकार हैएवं उसके मासिक तथा वार्षिक श्राद्ध करने का अधिकार भी उसे ही प्राप्त है। यह अत्यन्त आधुनिक विचार का प्रतिपादन करता है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.15. पौराणिक मान्यता के अनुसार प्रजापति कौन हैं?

प्र.16. ब्रह्मा ने सृष्टि की उत्पत्ति तथा भरण-पोषण करने का कार्य किसे दिया?

प्र.17. प्रजापति का अर्थ पुराणों में क्या किया गया है?

प्र.18. वायुपुराण में प्रजापति की व्याख्या किस प्रकार किया गया है?

प्र.19. प्रजापतियों की संख्या कितनी है?

प्र.20. महाभारत में प्रजापति किसे कहा गया है?

प्र.21. ब्रह्माण्ड पुराण के अनुसार प्रजापति का कार्य क्या है?

प्र.22. कल्प का अर्थ बताइये।

प्र.23. कल्प के पूर्ण होने पर कौन सा प्रलय होता है?

प्र.24. पद्मपुराण के अनुसार प्रजापति किसे कहा गया है?

प्र.25. धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में प्रजापति कौन है?

प्र.26. धर्मशास्त्रीय प्रजापति का अत्यन्त आधुनिक विचार क्या है?

5.5 प्रजापति द्वारा सृष्टि

तैत्तिरीय ब्राह्मण में प्रजापति द्वारा की गई सृष्टि का वर्णन मिलता है, उसके अनुसार एक बार प्रजापति के मन में सृष्टि के सृजन की इच्छा उत्पन्न हुयी। तब प्रजापति ने अपने अन्तर्मनसंकल्प से एक विशाल धूम्रराशि का निर्माण किया।जिससे अग्नि, ज्वाला, ज्योति एवं प्रभा आदि उत्पन्न हुए। पश्चात्उन सबने मिलकर एक ठोस गोले का रूप धारण किया।जिससे प्रजापति का मूत्राशय बना, इस मूत्राशय को परमेश्वर ने फोडा, जिससे समुद्र बना। क्योंकि समुद्रमूत्राशय से उत्पन्न हुआ है, इसी से उसका पानी खारा रहता है तथा वह पीने योग्य नहीं होता। घोर जलमय समुद्र से ही प्रजापति ने क्रमानुसार पृथ्वी, अंतरिक्ष तथा द्यौ उत्पन्न किये। तत्पश्चात्अपने शरीर से असुरों का निर्माण कर, दिवस रात्रि तथा अहोरात्र के संधिकाल को बनाया। इस प्रकारप्रजापति ने सारी प्रजा का निर्माण किया। देवों को पैदा करने के उपरान्तप्रजापति ने देवों में कनिष्ठ इन्द्र को उत्पन्न कर, उससे कहा - तुम स्वर्ग में जाकर देवों पर शासन करो।इन्द्र स्वर्ग गयापर वहाँ किसी ने उस को अपना राजा न माना, क्योंकि वह सबसे आयु में छोटा था।इन्द्र वापस आयाऔर प्रजापति से देवों के कथन को दुहरा कर उसने अपने विशेष तेज को देने की याचना की। प्रजापति ने इन्द्र से कहा यदि मै तुम्हें अपना तेज दे दूँगा, तो फिर मुझे कौन पूछेगा? । इस पर इन्द्र ने उत्तर दिया कितुम प्रसिद्ध रहोगे। अपना तेज मुझे देने के बाद भी तुम्हारा प्रजापतित्व बना रहेगा। इतना सुन कर प्रजापति ने अपने तेज को एक 'पदक' का रूप देकर उसे इन्द्र के मस्तक पर बांध दिया। तब इन्द्र इस योग्य बना किवह देवों का अधिपति बनकर उन पर राज्य कर सके।

पुराणों में आदि प्रजापति के रूप में ब्रह्मा को स्वीकार किया गया है। अमरकोश में ब्रह्मा के पर्याय नामों में प्रजापति शब्द भी मिलता है। वेद-पुराणोक्त सृष्टिवर्णन के अनुसार ज्योतिष शास्त्र में भी ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का सुविस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। यथा सूर्यसिद्धान्त-

अथ सृष्ट्यां मनश्चक्रे ब्रह्माऽहङ्कारमूर्तिभृत्।

मनसश्चन्द्रमा जज्ञे सूर्योऽक्ष्णोस्तेजसां निधिः।।

मनसः खं ततो वायुरग्निरापो धरा क्रमात्।

गुणैकवृद्ध्या पञ्चेति महाभूतानि जज्ञिरे।।

अग्नीषोमौ भानुचन्द्रौ ततस्त्वङ्गारकादयः।

तेजोभूखाम्बुवातेभ्यः क्रमशः पञ्च जज्ञिरे।।

पुनर्द्वादशधाऽऽत्मानं व्यभजद् राशिसंज्ञकम्।

नक्षत्ररूपिणं भूयः सप्तविंशात्मकं वशी।।

ततश्चराचरं विश्वे निर्ममे देवपूर्वकम्।

ऊर्ध्वमध्याधरेभ्योऽथ स्रोतोभ्यः प्रकृतीः सृजन्।।

अर्थात् अहंकारमूर्ति को धारण किये ब्रहमा ने सृष्टि रचना की अभिलाषा की। तब ब्रह्माकेमनसेचन्द्रकीउत्पत्तिहुई और उनके नेत्रों से प्रकाशात्मा सूर्य प्रकट हुए। पुनः ब्रह्माकेमनसे आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल तथा जल से पृथिवी तत्त्व एक – एक गुणवृद्धि से उत्पन्न हुए। सूर्य अग्निरूप व चन्द्र सोमरूप हैं। तत्पश्चात् अग्निसे भौम, पृथ्वीसे बुध, आकाशसे गुरु, जलसेशुक्रतथावायुतत्त्वसेशनि उत्पन्नहुए। पुनः स्वतन्त्र ब्रह्मा ने ब्रह्माण्डगोलस्वरूप अपने रूप को 12 भागों में में विभक्त किया जिनकी राशिसंज्ञा हुई। फिर 27 भागों में नक्षत्ररूप में विभक्त होकर प्रतिष्ठित हुए। तत्पश्चात् ब्रह्मा ने उत्तम, मध्यम व अधम स्रोतों से सत्त्व, रज व तम प्रकृतियों को उत्पन्न कर उनसे देव, दानव, मानवादि चराचर की रचना की।

इस प्रकार प्रजापति के द्वारा सृष्टि का सुन्दर वर्णन अनेक स्थानों पर प्राप्त होता है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.27. प्रजापति ने इन्द्र को क्या कहा?

प्र.28. इन्द्र को शक्ति किसने प्रदान की?

प्र.29. चन्द्र की उत्पत्ति ब्रह्मा के किस अंग से हुई?

प्र.30. भौमादि ग्रह किन तत्त्वों से उत्पन्न हुए?

5.6 सारांश

ब्रह्माण्ड तथा उसकी उत्पत्ति के विषय में वैदिक सिद्धान्तों में प्रजापति द्वारा सृष्टि का सिद्धान्त महत्वपूर्ण है। वैदिक वाङ्मय में प्रजापति एक स्वतंत्र सृष्टिरचनाकार हैं, जिन्हें महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसी प्रजापति को वैदिक वाङ्मय में हिरण्यगर्भ कहा है और सम्पूर्ण सृष्टि का मूल कारण भी हिरण्यगर्भ को ही माना गया है। इस प्रकार समस्त सृष्टि के रचयिता प्रजापति हैं। प्रजापति के विषय में पौराणिक साहित्य में अलग-अलग परिभाषाएं मिलती हैं। पुराणों में ब्रह्मा के मानस पुत्रों को प्रजापति कहा गया है। ये प्रजापति ब्रह्मा के निर्देश पर सृष्टि की उत्पत्ति करते हैं। इस प्रकार प्रजापतियों की संख्या के विषय में भी पुराणों में अलग-अलग सन्दर्भ मिलते हैं। प्रायः दस, तेरह तथा इक्कीस प्रजापतियों की संख्या सर्वमान्य है। इसके अतिरिक्त धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में प्रजापति को स्मृतिकार के रूप में भी वर्णित किया गया है। धर्मशास्त्रों के अध्ययन से पता चलता है कि प्रजापति धर्मशास्त्री थे। पुराणों में आदि प्रजापति के रूप में ब्रह्मा को स्वीकार किया गया है। अमरकोश में ब्रह्मा के पर्याय नामों में प्रजापति शब्द भी मिलता है। वेद-पुराणोक्त सृष्टिवर्णन के अनुसार ज्योतिष शास्त्र में भी प्रजापति ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का सुविस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

5.7 कठिन शब्दार्थ

निरन्तर	- लगातार
व्यापक	- विस्तार से
रचयिता	- रचनाकार
संचालन	- नियामन करना, चलाना, निर्देश करना

सृजन	- उत्पन्न करना
सृष्टा	- उत्पन्न करने वाला, सृष्टि करने वाला
दुग्धवती	- दूध वाली
सर्वशक्तिमान	- सबसे अधिक शक्तिशाली
अमरता	- न मरने की क्षमता
अन्तरिक्ष	- आकाश
निम्न भाग	- निचला भाग
अधिपति	- स्वामी
विधान	- नियम
ऋचा	- मन्त्र
विश्वात्मा	- समस्त जगत की आत्मा
पौराणिक	- पुराणों से संबन्धित
अवयव	- अंग
सृष्टिनिर्माण	- सृष्टि का निर्माण करना
संतति	- संतान
विश्व	- संसार
शक्तिसम्पन्नता	- शक्ति की अधिकता
एकवाक्यता	- सहमति
समीकृत	- समान, बराबरी
कल्प	- एक हजार युग
प्रलय	- नष्ट होना
संहार	- समाप्ति

गाह्य	- स्वीकार करना
लोकव्यवहार	- समाज में स्वीकृत
निःसन्तान	- जिसकी सन्तान न हो
आधुनिक	- नया
अन्तर्मन	- अन्दर का मन
अहोरात्र	- एक दिन और रात्रि का मान
सन्धिकाल	- दिन और रात्रि के बीच का काल
शासन	- राज करना, नियमन करना, संचालन करना
तेज	- शक्ति
सृष्टिरचनाकार	- सृष्टि की रचना करने वाला
रचयिता	- रचने वाला
स्मृतिकार	- स्मृतियों को रचने वाला
सर्वमान्य	- सभी द्वारा स्वीकृत

5.7.1 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. हरिवंशपुराण में तेरह प्रजापतियों का वर्णन मिलता है।
2. प्रजाओं के सृष्टा प्रजापति हैं।
3. प्रजापतियों का वर्णन सर्वप्रथम वेदों में मिलता है।
4. ऋग्वेद के अनुसार गौ को दुग्धवती बनाने वाला प्रजापति है।
5. ऋग्वेद के 10वें मण्डल में प्रजापति सूक्त मिलते हैं।
6. प्रजापति को वैदिक साहित्य में हिरण्यगर्भ नाम से संबोधित किया गया है।
7. सभी प्रकार की शक्ति प्रजापति प्रदान करते हैं।
8. हिमालय से समस्त धरती पर्यन्त प्रजापति की कार्यस्थली है।
9. अन्तरिक्ष में जल प्रजापति की आज्ञा से बनता है।
10. जल के गर्भधारण से प्रजापति उत्पन्न हुआ।

11. शतपथ ब्राह्मण के अनुसार प्रजापति देवों का पिता है।

*12.*प्रजापति को उपनिषदों में विश्वात्मा कहा गया है।

13. ब्राह्मण तथा उपनिषदों में प्रजापति को विभिन्न अर्थोसे प्रयुक्त किया गया है, कुछ इस प्रकार हैं – यज्ञ, बारह माह, वैश्वानर, अन्न, वायु, साम एवं आत्मा।

*14.*पंचविंश ब्राह्मण के अनुसारकिसी के महत्त्व का वर्णन करने के लिए, उन्हें प्रजापति उपाधि दी गयी है।

*15.*पौराणिक मान्यता के अनुसार प्रजापति ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं।

*16.*ब्रह्मा के सभी पुत्र सृष्टिनिर्माण में अपनी-अपनी भूमिका का निर्वहन करते हैं, उन सभी को प्रजापति कहा जाता है।

*17.*पुराणों में 'प्रजापति' शब्द की व्याख्या 'संतति उत्पन्न करनेवाला' इस रूप में की गयी है।

*18.*लोकस्य संतानकरास्तैरिमा वर्धिताः प्रजाः।

प्रजापतय इत्येवं पठयन्ते ब्रह्मणः सुताः॥

*19.*प्रजापतियों की संख्या के बारे में भी एकवाक्यता नहीं है। पुराणों में प्रजापतियों की संख्याओं के लियेसात, तेरह, चौदह, इक्कीस आदि भिन्न भिन्न संख्याएं मिलती हैं।

*20.*महाभारत के अनुसार, मरीचि ऋषि के पुत्र का नाम प्रजापति अरिष्टनेमि अथवा कश्यप था, जिसका विवाह दक्ष की कन्याओं से हुआ था।

*21.*ब्रह्मांड पुराण के अनुसारप्रत्येक कल्प में नयी सृष्टि का निर्माण करना प्रजापति का कार्य है।

*22.*एक कल्प 1000 युगों के बीत जाने पर माना जाता है, यह कल्प ब्रह्मा का एक दिन कहलाता है, दिन के बीतने पर ब्रह्मा की रात्रि प्रारम्भ होती है, इस रात्रि के प्रारम्भ में प्रलय होता है।

*23.*कल्प के पूर्ण होने पर होने वाले प्रलय को नैमित्तिक प्रलय अथवा ब्राह्मप्रलय कहते हैं।

*24.*पद्मपुराण के अनुसार, रोहिणी नक्षत्र के देवता को प्रजापति माना गया है।

25. धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में प्रजापति को एक धर्मशास्त्रकार के रूप में भी वर्णिन किया गया है।

26. प्रजापति के अनुसार, निःसंतान विधवा का अपने पति की सम्पूर्ण संपत्ति पर अधिकार है, एवं उसके मासिक तथा वार्षिक श्राद्ध करने का अधिकार भी उसे ही प्राप्त है, यह अत्यन्त आधुनिक विचार का प्रतिपादन करता है।

27. प्रजापति ने देवों में कनिष्ठ इन्द्र को उत्पन्न कर, उससे कहा - तुम स्वर्ग में जाकर देवो पर शासन करो।

28. इन्द्र को शक्ति प्रजापति ने प्रदान की।

29. चन्द्र की उत्पत्ति ब्रह्मा के मन से हुई।

30. भौम अग्नि से, बुध पृथ्वी से, गुरु आकाश से, शुक्र जल से तथा शनि वायु तत्त्व से उत्पन्न हुए।

5.7.2 व्याख्यात्मक प्रश्न

प्र.1. वैदिक वाङ्मय के अनुसार प्रजापति का वर्णन कीजिए।

प्र.2. पौराणिक वाङ्मय में प्रजापति का वर्णन किस प्रकार किया गया है? विस्तार से लिखें।

प्र.2. प्रजापति द्वारा सृष्टि का वर्णन करें।

प्र.4. प्रजापतियों की संख्या के बारे में विस्तार से लिखें।

प्र.5. सूर्यसिद्धान्तोक्त प्रजापति ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का वर्णन करें।

5.8 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2016
2. खगोलीय पिण्डों का परिक्रमण, कोपर्निकस, व्याख्या, तिवारी, श्रवणकुमार एवं पाण्डेय रमाकान्त, वाराणसी, हिन्दी प्रकाशन समिति, सन् 1972
3. गोलपरिभाषा, झा, सीताराम, दरभङ्गा, बिहार, श्रीसीताराम पुस्तकालय, संवत् 2027
4. भुवनकोश विमर्श, प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स दिल्ली, वर्ष 2004

5. सूर्यसिद्धान्त, आर्षग्रन्थ, तत्त्वामृतभाष्य कपिलेश्वरशास्त्री, , चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी 2011
6. यजुर्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2015
7. श्रीमद्भागवतपुराणम्, वेदव्यास,गोरखपुर, गीताप्रेस, संवत् 2059
8. श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2048
9. समराङ्गणसूत्रधार, भोजराज, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी 2011
10. विष्णुपुराण, गीताप्रेस गोरखपुर
11. वायुपुराण, गीताप्रेस गोरखपुर
12. ब्रह्माण्डपुराण, गीताप्रेस गोरखपुर
13. वास्तुशास्त्रविमर्श, शोधपत्रिका, श्री ला.ब.शा.रा.सं.विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

वैदिक सृष्टि विज्ञान में प्रमाणपत्र

खण्ड*2*

सृष्टि एवं ब्रह्माण्ड की आधुनिक अवधारणा

ईकाई *1* – स्थिर दशा सिद्धान्त

पाठ संरचना

1.1 **प्रस्तावना**

1.2 **उद्देश्य**

1.3 **स्थिरदशा सिद्धान्त**

1.4 **स्थिरदशा सिद्धान्त की मूल अवधारणा**

1.5 **स्थिरदशा सिद्धान्त की विशेषता**

1.6 **स्थिरदशा सिद्धान्त की अस्वीकार्यता**

1.7 **स्थिरदशा सिद्धान्त तथा भारतीय सृष्टि विज्ञान**

1.8 **सारांश**

1.9 **कठिन शब्द**

1.10 **अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**

1.11 **व्याख्यात्मक प्रश्न**

1.12 **सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थसूची**

1.1 प्रस्तावना

प्राचीन काल से ही सृष्टि की उत्पत्ति का विषय मनुष्यों के लिए आकर्षक रहा है। यह सृष्टि कैसे उत्पन्न हुई? तथा उसका रचयिता कौन है?इस पर बौद्धिक समुदाय ने विचार और चिन्तन पर आधारित कई सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया है।धार्मिकबौद्धिक समुदायों का मानना है कि इस सम्पूर्ण जगत का रचयिता परमात्मा है, वही इस सृष्टि को रचता है तथा संचालित करता है। अनादि काल से परमात्मा इस सृष्टि को रचते आया है, वह सर्वव्यापी, सर्वशक्तिशाली तथा सर्वज्ञ ईश्वर ही इस सृष्टि का संचालन करता है और अनन्तकाल तक इस सृष्टि का संचालन करता रहेगा। प्रलय के दिन ही यह सृष्टि समाप्त होगी। उस प्रलय की शक्ति भी उसी ईश्वर के हाथों में है। अतः इस समस्त प्रकार के जगत का संचालक सर्वशक्तिमान ईश्वर ही है।

इस विषय पर धार्मिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक विचारक अनेकों प्रकार के कारणों को मानते हैं। प्राचीन भारतीय शास्त्रों में सृष्टि की उत्पत्ति के कई वृत्तान्त हमें प्राप्त होते हैं। उनमें प्रमुख चार सिद्धान्तों को विद्वानों द्वारा माना जाता है। सृष्टिविज्ञान के विषय में ये चार सिद्धान्त हैं –ब्रह्मा द्वारा सृष्टि, प्रजापति द्वारा सृष्टि, विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि तथा विराटपुरुष द्वारा सृष्टि। इन सिद्धान्तों के अतिरिक्त भी हमारे ऋषियों ने सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में विचार प्रस्तुत किए हैं। सांख्यदर्शन प्रकृति तथा पुरुष द्वारा सृष्टि को विस्तार से परिभाषित करता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न दार्शनिकों द्वारा भी व्यक्तिगत स्तर पर इन प्रश्नोंके उत्तर देने के प्रयास दिखाई पड़ते हैं। दसवीं शताब्दी में प्रसिद्ध भारतीय दार्शनिक उदयनाचार्य अपने ग्रन्थ न्यायकुसुमांजलि में कहते हैं कि जिस प्रकार संसार की सभी वस्तुएं अपनी रचना तथा विकासक्रम के लिए किसी अन्य बुद्धिमान जीव पर निर्भर करती हैं, उसी प्रकार पृथ्वी भी एक वस्तु के समान है, जिसकी सृष्टि तथा विकासक्रम किसी सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान सत्ता पर निर्भर करता है और

इससर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी, सर्वज्ञ सत्ता का नाम ईश्वर अथवा परमात्मा है। उदयनाचार्य ने इसी सर्वशक्तिशाली ईश्वर के अस्तित्त्व की सिद्धि के लिए निम्न प्रमाण प्रस्तुत किए

कार्यायोजनधृत्यादेः पदात् प्रत्ययतः श्रुतेः।

वाक्यात् संख्याविशेषाच्च साध्यो विश्वविदव्ययः।।

आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा भी ब्रह्माण्ड और उसकी उत्पत्ति के विषय में निरन्तर खोजें की जा रही हैं। इन खोजों के आधार पर खगोल जगत ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में प्रमुख रूप से स्थिरदशा सिद्धान्त, विस्फोट सिद्धान्त तथा स्पन्दनशील सिद्धान्त इन तीनों को स्वीकार करता है। इन सिद्धान्तों के माध्यम से वैज्ञानिकों ने सृष्टि की उस गुत्थी को सुलझाने का प्रयास किया है, जिसे मनुष्य हजारों वर्षों पूर्व से ही जानने का प्रयास करता आया है। आधुनिक सृष्टि सिद्धान्तों में विस्फोट सिद्धान्त सर्वाधिक प्रसिद्ध और सर्वमान्य सिद्धान्त है।वैज्ञानिकों के अनुसार इस सृष्टि की संरचना एक सर्वव्यापी महाविस्फोट के साथ हुई। इस शक्तिशाली विस्फोट के कारण ही ब्रह्माण्ड अभी भी लगातार विस्तार प्राप्त कर रहा है। दूसरा महत्वपूर्ण सिद्धान्त स्पन्दनशील सिद्धान्त है, इस सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति एक बिन्दु से हुई और सृष्टि का विस्तार हुआ। वर्तमान में भी हमारे ब्रह्माण्ड का विस्तार हो रहा है, परन्तु एक सीमित सीमा के विस्तार के बाद सृष्टि संकुचित भी होगी और यह एक बिन्दु पर एकत्रित हो जाएगी। तीसरा और महत्वपूर्ण सिद्धान्त है स्थिरदशा सिद्धान्त। इस सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि अनादि काल से ही अपने अस्तित्त्व में विद्यमान है। इस स्थिरदशा सिद्धान्त का अध्ययन हम इस अध्याय में विस्तार से करेंगे।

1.2 अध्ययन का उद्देश्य

- ❖ प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हम सृष्टि तथा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का अध्ययन करेंगे।

- ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धान्तों को समझेंगे।
- स्थिरदशा सिद्धान्त के माध्यम से सृष्टि को जानेंगे।
- आधुनिक वैज्ञानिक चिन्तन के आधार पर ब्रह्माण्ड की स्थिर अवस्था के बारे में पढेंगे।
- इस सिद्धान्त की विशेषताओं का अध्ययन करेंगे।

1.3 स्थिरदशा सिद्धान्त

जैसा कि प्रस्तावना में आप जान चुके हैं कि आधुनिक खगोल वैज्ञानिकों द्वारा सर्वाधिक मान्यताप्राप्त सिद्धान्त विस्फोट सिद्धान्त है, जिसके अनुसार इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक महाविस्फोट से हुई। यह महाविस्फोट ऊर्जा के अत्यन्त घनत्व के कारण हुआ। इसके अतिरिक्त एक और सिद्धान्त विख्यात है – स्पन्दनशील सिद्धान्त। इसके अनुसार ब्रह्माण्ड महाविस्फोट के बाद फैलना प्रारम्भ हुआ और अभी भी यह फैल रहा है। परन्तु एक सीमित समय के बाद यह सिकुड़ना प्रारम्भ करेगा। इन दोनों सिद्धान्तों के विपरीत स्थिरदशा सिद्धान्त ब्रह्माण्ड को स्थिर मानता है। स्थिर सिद्धान्त के अनुसार जब ब्रह्माण्ड में न सिकुड़न दिखाई पड़ती है और न ही विस्तार दिखाई पड़ता है, इस अवस्था को ब्रह्माण्ड की स्थिर अवस्था कहा जाता है। व्यवहारिक रूप में यही दिखाई भी पड़ता है। इस प्रकार जो भी आकाश को देखेगा वह यही समझेगा कि यह आकाश स्थिर है, तथा इसमें गतिशीलता नहीं है। इस प्रकार इस स्थिति में ब्रह्माण्ड को हम स्थिर कह सकते हैं। इस सिद्धान्त को खगोल विज्ञान का प्रारम्भिक विचार भी कह सकते हैं, क्योंकि लगातार खोजों और साक्ष्यों के निष्कर्ष आधारित अध्ययनों के बाद इस सिद्धान्त को वैज्ञानिकों द्वारा नकार दिया गया और नया सिद्धान्त प्रस्तुत हुआ।अल्बर्ट आइन्स्टाइन के सिद्धान्तों में इसकी मूलसंकल्पना मिलती है। उनका मानना था कि ब्रह्माण्ड स्थिर है और सदैव स्थिर दशा में ही रहता हैऔर यह ब्रह्माण्ड करोड़ों वर्षों से स्थिर है। उनका मानना था कि ब्रह्माण्ड का रचयिता कोई नहीं है, यह अनादि काल से

इसी अवस्था में है तथा इसमें अकारण ही सृष्टि होती है। आइन्स्टाइन के इस सिद्धान्त को बीसवीं सदी के ब्रह्माण्ड विज्ञानी फ्रेड हॉयल ने अंग्रेज गणितज्ञ हरमन बांडी और अमेरिकी वैज्ञानिक थोमस गोल्ड के साथ संयुक्त रूप से मिलकर स्पष्ट किया।

यह सिद्धान्त आधुनिक विज्ञान-जगत में स्थिरदशा सिद्धान्त अथवा स्थायी दशा सिद्धान्त के नाम से विख्यात है। इसके अनुसार न तो ब्रह्माण्ड का आदि है और न ही इसका कभी अन्त होगा। यह सदैव ही स्थिर दशा में विद्यमान रहा है और रहेगा भी। यह समयानुसार अपरिवर्तनशील है। यद्यपि इस सिद्धान्त में प्रसरणशीलता समाहित है, परन्तु फिर भी ब्रह्माण्ड के घनत्व को स्थिर रखने के लिए पदार्थ इसमें स्वतः रूप से उत्पन्न होता है और परिवर्तित भी होता रहता है। ब्रह्माण्ड विज्ञान मेंस्थिरदशा सिद्धान्त का दृष्टिकोण है कि ब्रह्मांड सदैव गतिशील रहा है, परन्तु यह गतिशीलता के साथ-साथ यह निरन्तर औसत घनत्व भी बनाए रखता है।यह ब्रह्माण्ड नए सितारों और आकाशगंगाओं की उत्पत्ति भी उसी अनुपात में करता है, जितनी उन्हें आवश्यकता होती है। इस सिद्धान्त के अनुसार स्थिर अवस्था वाले इस ब्रह्माण्ड का न तो प्रारम्भिक बिन्दु है और न ही अन्तिम बिन्दु हो सकता है। यह ब्रह्माण्ड तथा इसमें उत्पन्न आकाशगंगायें युगों-युगों से इसी अवस्था में स्थिर हैं, अतः इनका कोई एक मूल बिन्दु नहीं हो सकता।

इस सिद्धांत को 1948 ई. में प्रथम बार ब्रिटिश वैज्ञानिकों सर हरमन बोंडी, थॉमस गोल्ड और सर फ्रेड हॉयल ने ब्रह्माण्डविज्ञानियों के समक्ष रखा था। यह सिद्धान्त विस्फोटसिद्धान्त की परिकल्पना के संबंध में उत्पन्न होने वाली समस्याओं से निपटने के लिए फ्रेड हॉयल द्वारा आगे विकसित भी किया गया। सन् *1950*ई. के दशक के बाद से इस सिद्धान्त के ठीक विपरीत ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में एक और सिद्धान्त अस्तित्त्व में आया जिसे बिग-बैंग परिकल्पना अथवा विस्फोट का सिद्धान्त कहा जाता है। इसके अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक महाविस्फोट से हुई, उस महाविस्फोट के कारण

ब्रह्माण्ड विकसित हुआ। सन् 1950 ई. के दशक तक ब्रह्माण्ड को स्थिर ही माना जाता था। आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा दूरबीन तथा अन्य तकनीकी यन्त्रों की खोज के बाद खगोल विज्ञान ने खूब उन्नति प्राप्त की और ब्रह्माण्ड में स्थित आकाशगंगाओं का अध्ययन किया और नया सिद्धान्त प्रस्तुत किया। वे इस निष्कर्ष तक पहुंचे कि इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक बिन्दु पर अत्यधिक ऊर्जा के घनत्व के कारण हुए एक महाविस्फोट से हुआ। इसे विस्फोट सिद्धान्त का नाम दिया गया, यह बिग-बैंग सिद्धान्त नाम से भी जाना जाता है। विस्फोट सिद्धान्त को स्थिरदशा सिद्धान्त की परिकल्पना के विपरीत बहुत सारे साक्ष्यों के आधार पर प्रस्तुत किया गया था। वर्तमान मे बिग-बैंग सिद्धान्त को ब्रह्माण्ड वैज्ञानिक जगत का पर्याप्त समर्थन भी प्राप्त हुआ और स्थिरदशा सिद्धान्त को वैज्ञानिकों द्वारा प्रायः नकार दिया गया है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.1. धार्मिक बौद्धिक समुदाय कासृष्टि के विषय में क्या मानना है?

प्र.2. धार्मिकों के अनुसार इस ब्रह्माण्ड का रचयिता कौन है?

प्र.3. धार्मिकों के अनुसार सृष्टि कब समाप्त होगी?

प्र.4. सृष्टि के विषय में कौन से प्राचीन भारतीय सिद्धान्त प्रसिद्ध हैं?

प्र.5. सांख्यदर्शन सृष्टि को कैसे परिभाषित करता है?

प्र.6. उदयनार्य का ग्रन्थ कौन सा है?

प्र.7. उदयनाचार्य ने ईश्वर की सिद्धि किस प्रकार की है?

प्र.8. आधुनिक खगोल जगत ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में क्या स्वीकार करता है?

प्र.9. आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा सर्वाधिक मान्यताप्राप्त सिद्धान्त कौन सा है*?*

प्र.10. स्पन्दनशील सिद्धान्त क्या है*?*

प्र.11. स्थिरदशा सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड का रचयिता कौन है*?*

प्र.12. स्थिरदशा सिद्धान्त को किसने प्रस्तुत किया*?*

प्र.13. स्थिरदशा सिद्धान्त क्या है*?*

प्र.14. विस्फोट सिद्धान्त और स्थिरदशा सिद्धान्त में क्या अन्तर है*?*

प्र.15. स्थिरदशा सिद्धान्त के विपरीत साक्ष्यों द्वारा क्या स्थापित किया गया*?*

1.4 स्थिरदशा सिद्धान्त की मूल अवधारणा

किसी पदार्थ की स्थिति का तीनों कालों में एक समान बना रहना स्थिर कहलाता है, इस स्थिर रहने की स्थिति को स्थिरस्थिति अथवा स्थिरदशा कहते हैं। इस प्रकार वैज्ञानिकों द्वारा ब्रह्माण्ड की तीनों कालों में बने रहने की दशा को स्थिरदशा सिद्धान्त के माध्यम से समझा जाता है। यह बिग-बैंग सिद्धान्त का विपरीत सिद्धान्त भी है। बिग बैंग सिद्धांत के अनुसार ब्रह्मांड की उत्पत्ति लगभग *13*.8 अरब साल पहले एक अविश्वसनीय महाविस्फोट से हुई थी, उसके बाद उस महाविस्फोट के कारण परमाणुओं में विस्तार प्रारम्भ हुआ और यह गर्म घनघोर धुंए के बादल के रूप में फैलने लगा। वर्षों तक फैलने के बाद ऊर्जा के परमाणु आपस में जुड़कर स्थूल पदार्थ का स्वरूप धारण करने लगे। उसके पश्चात् यह ठंडा हुआ और सृष्टि की उत्पत्ति हुई। यह प्रायः अधिकांश ब्रह्मांड विज्ञानियों द्वारा स्वीकार किया जाता है।

ब्रह्माण्ड के विषय में सदा से ही बिग-बैंग सिद्धान्त स्वीकार्य नहीं रहा, इससे पूर्व स्थिरदशा का यह सिद्धान्त ही अत्यन्त लोकप्रिय था। जिसे ब्रह्मांड की उत्पत्ति और

विस्तार की व्याख्या में आने वाली समस्याओं से निपनटने के लिए बिग-बैंग सिद्धान्त के विकल्प के रूप में विकसित किया गया था। स्थिरदशा सिद्धान्त के केंद्र में परफेक्ट कॉस्मोलॉजिकल सिद्धांत है। यह बताता है कि हमारा ब्रह्माण्ड अनन्त है, इसकी कोई एक सीमा का निर्धारण नहीं किया जा सकता अतः ब्रह्माण्ड असीम है। यह अनादि है, इसकी उत्पत्ति के बारे में कोई नहीं जानता और यह अति प्राचीन भी है।समग्र रूप से देखा जाएतो हमारा यह ब्रह्माण्ड सभी दिशाओं में व्याप्त है। भूतकाल, भविष्यकाल और वर्तमान काल इन तीनों कालों में इसका अस्तित्त्व रहा है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं किब्रह्मांड समय के साथ विकसित या परिवर्तित नहीं होता है, यह एक स्थिर सत्ता है।

स्थिरदशा सिद्धान्त यह भी स्वीकार करता है कि ब्रह्माण्ड में भौतिक परिवर्तन छोटे-बड़े पैमाने पर होते रहते हैं, परन्तु ये सभी परिवर्तन एक निश्चित मात्रा में होते हैं और उनकी उत्पत्ति और विनाश में सन्तुलन बना रहता है। यदि हम ब्रह्माण्ड के एक छोटे से क्षेत्र की बात करें जैसे – सूर्य और उसका परिवार, ये सभी परिवर्तनशील हैं, नष्ट होते हैं तथा उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त ब्रह्माण्ड में स्थित अलग-अलग तारे अपना ईंधन जलाते हैं और मर जाते हैं।अंततः ये सभी ब्लैक ड्वार्फ, न्यूट्रॉन तारे और ब्लैक होल जैसी वस्तु बन जाते हैं। आधुनिक वैज्ञानिकों का मानना है कि पुराने तारे मर जाते हैं तथा उसी मात्रा में नए तारे जन्म लेते रहते हैं। वे पुराने तारे जिन्होंने अपने ईंधन का उपयोग कर लिया है और चमकना बंद कर दिया है, उनका स्थान नए तारे ले लेते हैं। इसलिएयदि हम अंतरिक्ष के एक बड़े क्षेत्र का अध्ययन करें तो उस क्षेत्र में उत्सर्जित प्रकाश की मात्रा समय के साथ नहीं बदलती, अपितु वह स्थिर बनी रहती है। इस प्रकार से ब्रह्माण्ड की ऊर्जा बनी रहती है तथा वह कभी भी समाप्त नहीं होती। यह प्रक्रिया स्थिर है और अनादि काल से चली आ रही है तथा अनन्त काल तक चलती रहेगी।

1.5 स्थिरदशा सिद्धान्त की विशेषता

स्थिरदशा सिद्धांत की एक विशेषता यह है कि यह हमारे ब्रह्मांड को असीमित और अति प्राचीन मानता है, अतःइसकी उत्पत्ति का प्रश्न ही नहीं उठता। यह ब्रह्माण्ड सदा से ही अस्तित्व में रहा है, और भविष्य में भी रहेगा। यह अनादि है तथा अनन्त है और साथ ही असीमित भी है। स्थिर दशा सिद्धान्त की परिकल्पना बिग-बैंग सिद्धांत के विपरीत सिद्धान्त के रूप में है।स्थिरदशा सिद्धांत का उस विस्फोट सिद्धान्त से कोई लेना-देना नहीं है, जिसके अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के समय एक महाविस्फोटघटित हुआ था, जिसके कारण ब्रह्मांड अस्तित्व में आया। स्थिरदशा सिद्धान्त के असीमित सिद्धान्त को सामान्यरूप से आज के वैज्ञानिक भी मानते हैं। ब्रह्माण्ड कितना बडा है?यह आधुनिक विद्वान भी ठीक तरह से बता नहीं पाये हैं। इसी प्रकारब्रह्माण्डका अनादि और अनन्त सिद्धान्त भी श्रीकृष्ण द्वारा कथित आत्मा के अनादि व अनन्त स्वरूप के समान परिलक्षित होता है क्योंकि ब्रह्माण्ड के एक भौतिक स्वरूप के अन्त के साथ ही दूसरे भौतिक कलेवर की उत्पत्ति की प्रक्रिया प्रारम्भ होने लगती है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.16. स्थिरदशा का क्या अर्थ है?

प्र.17. बिग-बैंग सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति कब हुई?

प्र.18. बिग-बैंग सिद्धान्त से पूर्व कौन सा सिद्धान्त प्रचलित था?

प्र.19. स्थिरदशा सिद्धान्त भौतिक पदार्थों के परिवर्तन के बारे में क्या कहता है?

प्र.20. आधुनिक वैज्ञानिकों का तारों के विषय में क्या कहना है?

प्र.21. स्थिरदशा सिद्धान्त की विशेषता क्या है?

1.6 स्थिर दशा सिद्धान्त की अस्वीकार्यता

स्थिरदशा सिद्धांत सन् *1950* के दशक में बहुत लोकप्रिय था परन्तु सन् *1960*ई. के दशक के प्रारम्भ में इस सिद्धान्त के विपरीत कई खोजें हुई, जिसके बाद इस सिद्धान्त पर प्रश्नचिन्ह उठने शुरू हुए। रेडियो दूरबीन की खोज के बाद इस सिद्धान्त के विपरीत अधिक मात्रा में साक्ष्य भी प्रस्तुत होने लगे। इन वैज्ञानिक अवलोकनों से पता चला कि इस सिद्धान्त द्वारा जो भविष्यवाणियां की गई थी, उनकी तुलना में अधिक रेडियो तरंगें तथा ब्रह्माण्डीय शक्तियां अन्तरिक्ष में विद्यमान हैं तथा ब्रह्माण्डीय पिण्ड भी अरबों प्रकाश वर्ष की दूरी तक स्थित हैं। इन सभी अध्ययनों के माध्यम से पता चलता है कि ब्रह्माण्ड समय के साथ परिवर्तित हो रहा है और यह गतिशीलता लिए हुए है, जो स्थिरदशा सिद्धान्त की परिकल्पना के विपरीत थी।

स्थिरदशा सिद्धांत के विरुद्ध 1963 में वैज्ञानिकों को कुछ महत्वपूर्ण साक्ष्य मिले। इन साक्ष्यों के आधार पर जब क्वासर नामक खगोलीय पिंडों के एक नए वर्ग की खोज की गई, तब इस अध्ययन से पता चला कि ये अविश्वसनीय रूप से चमकदार वस्तुएं हैं जो आकाशगंगा की चमक से *1000* गुना तक अधिक चमक सकते हैं, परन्तु आकाशगंगा के आकार की तुलना में ये बहुत छोटी वस्तुएं हैं। क्वासर तारे हमसे बहुत अधिक दूरी पर ही पाए जाते हैं, जिसका अर्थ है कि उनमें दिखने वाला प्रकाश अरबों प्रकाश वर्ष पहले उत्सर्जित हुआ था। इस सन्दर्भ में एक अन्य तथ्य यह भी है कि क्वासर तारे केवल प्रारम्भिक ब्रह्माण्ड में पाए जाते हैं। इसके बाद के अध्ययनों सेइस बात के प्रमाण मिले हैं कि ब्रह्मांड समय के साथ बदलता गया है और यह ब्रह्माण्ड परिवर्तनशील है।

उपर्युक्त सभी साक्ष्यों और निरन्तर शोध अध्ययनों से मिलने वाले निष्कर्षों के बाद सन् *1970*के दशक की शुरुआत तक ब्रह्माण्डविज्ञानियों के विशाल बहुमत द्वारा

स्थिरदशा सिद्धान्त को नकार दिया गया था। माना जाता है कि बिग बैंग सिद्धांत ही अब खगोल वैज्ञानिकों में सर्वाधिक प्रसिद्ध और सर्वमान्य सिद्धान्त है, इसी के आधार पर वर्तमान में खगोलीय शोध किए जाते हैं परन्तु वैज्ञानिकों द्वारा अभी भी तर्क दिया जाता है कि स्थिर दशा सिद्धान्त एक अच्छा सिद्धान्त है।इस विषय में प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्टीफंस हॉकिन्स का कहना है –

'The Steady State theory was what Karl Popper would call a good scientific theory: it made definite predictions, which could be tested by observation and possibly falsified. Unfortunately for the theory, they were falsified'.

अर्थात् स्थिरदशा सिद्धान्त को कार्ल पोपर द्वारा एक अच्छा वैज्ञानिक सिद्धान्त कहा गया कि यह अच्छे से भविष्यवाणियां करता है। इसके माध्यम से अनेकों महत्वपूर्ण खोजें हुई हैं, दुर्भाग्य से यह सिद्धान्त बाद में नकार दिया गया।

अभ्यास प्रश्न

प्र.22. स्थिरदशा सिद्धान्त के विपरीत साक्ष्य मिलने कब प्रारम्भ हुए?

प्र.23. क्वासर नामक पिण्ड क्या हैं?

प्र.24. स्थिरदशा सिद्धान्त को कब नकारा गया?

प्र.25. स्थिरदशा सिद्धान्त को क्यों नकारा गया?

प्र.26. स्थिरदशा सिद्धान्त के विषय में स्टीफंस हॉकिंस का क्या कहना है?

1.7 स्थिरदशा सिद्धान्त और भारतीय सृष्टि विज्ञान

इस अध्याय के अध्ययन पर आधारित बिन्दुओं का अध्ययन करने के बाद हमें ज्ञात होता है कि कुछ आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार ब्रह्माण्ड को स्थिर माना गया है। अर्थात् ब्रह्माण्ड एक स्थिर सत्ता है तथा इसका कोई भी रचयिता नहीं है और ना ही इसका कभी अन्त होगा। इसी आधार पर यदि हम भारतीय सृष्टिविज्ञान की बात करें तो यहां भी पदार्थ के परमाणुरूप को स्थिर ही माना गया है, यहां स्थिर से अर्थ उत्पत्ति और विनाश की हीनता से है। यह परमाणु सदा ही विद्यमान रहते हैं, परन्तु इनमें परिवर्तन भी समय-समय पर होते रहते हैं। ये परिवर्तन एक सीमित काल तक ही होते हैं। जिस वस्तु की उत्पत्ति होती है, उसका विनाश भी निश्चित है। यह उत्पत्ति और विनाश का क्रम भी स्थिर ही है। क्योंकि कोई नहीं जानता कि यह सृष्टि कैसे उत्पन्न हुई, और इसका रचयिता कौन है? इस सम्पूर्ण सृष्टि के कारणों को समझने के लिए भारतीय मनीषियों ने समय-समय पर कई सिद्धान्त दिए हैं परन्तु वे इन सिद्धान्तों से भी पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं हैं, इसीलिए उन्होंने इसे नेति-नेति कहकर इसकी अनन्तता को स्वीकार किया है।

दार्शनिक दृष्टि से प्रकृति का मूल स्वरूप तीन गुणों की साम्यावस्था है, ये तीन गुण हैं – सत्त्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुण। तीनों गुणों प्रकृति में सदा ही विराजमान रहते हैं, परन्तु इन तीनों के सन्तुलन में जब विकृति उत्पन्न होती है तब उस स्थिति में सृष्टि उत्पन्न मानी जाती है। अतः प्रकृति में विकृति ही सृष्टि कहलाती है। यह सृष्टि लगातार होती रहती है और नष्ट भी होती रहती है। इस प्रकार यह क्रम अनन्त काल तक चलता रहता है। सृष्टि का बनना और नष्ट होना एक नियमित प्रक्रिया है, यह परिवर्तन प्रकृति में सदा ही बना रहता है परन्तु प्रकृति कभी भी परिवर्तित नहीं रहती, केवल उसके गुणों में विकृति होती है। इस प्रकार भारतीय दार्शनिक तथा वैज्ञानिक चिन्तन एक दृष्टि में सृष्टि को नित्य मानता है और इसमें होने वाले परिवर्तनों को गुणों के असन्तुलन का परिणाम। ये सिद्धान्त पाश्चात्य वैज्ञानिकों द्वारा दिए गए स्थिरदशा सिद्धान्त से साम्यता रखते हैं।

अनादि और अनन्त का भाव ही स्थिरता है। इसी स्थिरता के आधार पर आधुनिक वैज्ञानिकों ने स्थिरदशा सिद्धान्त को प्रस्तुत किया।

अभ्यास प्रश्न

प्र.27. भारतीय सृष्टिविज्ञान के आधार पर किसे स्थिर माना गया है?

प्र.28. भारतीयों ने क्या कहकर ब्रह्माण्ड की अनन्तता को स्वीकार किया है?

प्र.29. प्रकृति क्या है?

प्र.30. प्रकृति के तीन गुण कौन-कौन से हैं?

प्र.31. भारतीय दार्शनिक मत में सृष्टि क्या है?

1.8 सारांश

आधुनिक खगोलीय वैज्ञानिकों में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के विषय में स्थिरदशा सिद्धान्त अत्यन्त ही महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। वर्तमान में इस सिद्धान्त को नकार दिया गया है, परन्तु 1950 के दशक मे यह सिद्धान्त बहुत ही प्रसिद्ध था, इसके माध्यम से खगोल विज्ञान ने कई सफलताएं प्राप्त की। यह सिद्धान्त ब्रह्माण्ड को स्थिर मानता है, तथा ब्रह्माण्ड में उत्पन्न होने वाले छोटे-बड़े परिवर्तनों को ऊर्जा के संतुलन की प्रक्रिया मानता है। यह सिद्धान्त विस्फोट सिद्धान्त का विरोधी सिद्धान्त है, जिसके अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक महाविस्फोट से हुई थी। भारतीय दार्शनिक तथा वैज्ञानिक चिन्तनों में भी परमाणु को नित्य ही माना गया है। परमाणुओं की नित्यता उनकी स्थिर अवस्था को परिभाषित करते हैं।

1.9 कठिन शब्दार्थ

प्राचीन - पुराना

आकर्षक - मोह लेने वाला

रचयिता - रचना करने वाला

बौद्धिक - बुद्धि से संबन्धित

परमात्मा - ईश्वर

अनन्तकाल - जिसका कोई अन्त न हो ऐसा समय

संचालन - प्रचालन, प्रबन्धन, चालन करना

प्रलय - अन्तिम काल

सर्वशक्तिमान - सबसे अधिक शक्ति वाला

वृत्तान्त - विवरण

सृष्टिविज्ञान - उत्पत्ति का विज्ञान

व्यक्तिगत - अपने स्तर पर

विकासक्रम - विकास का क्रम

सर्वज्ञ - सब कुछ जानने वाला

सर्वव्यापी - सभी जगह व्याप्त

खगोल - आकाश से संबन्धित

गुत्थी - पहेली

सर्वमान्य - सभी द्वारा स्वीकृत

संकुचन - सिकुड़ना

अनादि	- जिसकी कोई उत्पत्ति न हो
विद्यमान	- रहना
मान्यताप्राप्त	- स्वीकृत होना
प्रारम्भ	- शुरुआत
व्यावहारिक	- व्यवहार से संबन्धित
गतिशीलता	- नियमितता
प्रारम्भिक	- शुरुआती
विख्यात	- प्रसिद्ध
प्रसरणशीलता	- फैलाव
समक्ष	- सामने
विपरीत	- उल्टा
परिकल्पना	- कल्पना करना
घनत्व	- इकट्ठा होना, गहनता
साक्ष्य	- प्रमाण
अविश्वसनीय	- जिस पर विश्वास न किया जा सके
घनघोर	- घने
स्थूल	- बड़ा, मोटा
असीम	- जिसकी सीमा न हो

व्याप्त - फैलना

परिवर्तित - बदलाव

ईंधन - ऊर्जा

उत्सर्जित - उत्पन्न हुआ

सर्वाधिक - सबसे अधिक

भविष्यवाणियां - अनुमान पर आधारित पूर्व-सूचनाएं

हीनता - कमी

रचयिता - रचना करने वाला

नेति-नेति - इतना ही नहीं और भी

साम्यावस्था - सन्तुलन की अवस्था

विकृति - विकार उत्पन्न होना

नित्य - सर्वदा

साम्यता - समानता

स्थिरता - स्थिर अवस्था में बने रहना

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. धार्मिकबौद्धिक समुदायों का मानना है कि इस सम्पूर्ण जगत का रचयिता परमात्मा है, वही इस सृष्टि को रचता है तथा संचालित करता है।

2. परमात्मा इस सृष्टि को रचते आया है, वह सर्वव्यापी, सर्वशक्तिशाली तथा सर्वज्ञ ईश्वर ही इस सृष्टि का संचालन करता है, और अनन्तकाल तक इस सृष्टि का संचालन करता रहेगा।
3. धार्मिकों के अनुसार प्रलय के दिन ही यह सृष्टि समाप्त होगी।
4. भारतीय वैज्ञानिकों के अनुसार सृष्टिविज्ञान के विषय में प्रसिद्ध चार सिद्धान्त हैं –ब्रह्मा द्वारा सृष्टि, प्रजापति द्वारा सृष्टि, विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि तथा विराटपुरुष द्वारा सृष्टि।
5. सांख्यदर्शन प्रकृति तथा पुरुष द्वारा सृष्टि के विस्तार को परिभाषित करता है।
6. उदयनाचार्य का ग्रन्थ न्यायकुसुमाञ्जलि है।
7. कार्यायोजनधृत्यादेः पदात् प्रत्ययतः श्रुतेः।
   वाक्यात् संख्याविशेषाच्च साध्यो विश्वविदव्ययः।।
8. खगोल जगत ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में प्रमुख रूप से स्थिरदशा सिद्धान्त, विस्फोट सिद्धान्त तथा स्पन्दनशील सिद्धान्त इन तीनों को स्वीकार करता है।
9. आधुनिक खगोल वैज्ञानिकों द्वारा सर्वाधिक मान्यताप्राप्त सिद्धान्त विस्फोट सिद्धान्त है।
10. इसके अनुसार ब्रह्माण्ड महाविस्फोट के बाद फैलना प्रारम्भ हुआ और अभी भी यह फैल रहा है। परन्तु एक सीमित समय के बाद यह सिकुड़ना प्रारम्भ करेगा।
11. स्थिरदशा सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड का रचयिता कोई नहीं है, अह अनादि काल से इसी अवस्था में है, तथा इसमें अकारण ही सृष्टि होती है
12. स्थिरदशा सिद्धान्त को फ्रेड हॉयल ने अंग्रेज गणितज्ञ हरमन बांडी और अमेरिकी वैज्ञानिक थोमस गोल्ड के साथ संयुक्त रूप से मिलकर स्पष्ट किया।

13. स्थिरदशा सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड का न तो प्रारम्भिक बिन्दु है, और न ही अन्तिम बिन्दु हो सकता है। यह ब्रह्माण्ड तथा इसमें उत्पन्न आकाशगंगाएं युगों-युगों से इसी अवस्था में स्थिर हैं, अतः इनका कोई एक मूल बिन्दु नहीं हो सकता।

14. विस्फोटसिद्धान्त और स्थिरदशा सिद्धान्त एक दूसरे के विपरीत सिद्धान्त हैं।

15. स्थिरदशा सिद्धान्त के विपरीत विस्फोट सद्धान्त द्वारा स्पष्ट किया गया कि ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक बिन्दु पर अत्यधिक ऊर्जा के घनत्व के कारण हुए एक महाविस्फोट से हुआ।

16. किसी पदार्थ की स्थिति का तीनों कालों में एक समान बना रहना स्थिर कहलाता है, इस स्थिर रहने की स्थिति को स्थिरस्थिति अथवा स्थिरदशा कहते हैं।

17. बिग बैंग सिद्धांत के अनुसार ब्रह्मांड की उत्पत्ति लगभग *13.8* अरब साल पहले एक अविश्वसनीय महाविस्फोट से हुई थी

18. बिग-बैंग सिद्धान्त से पूर्व स्थिरदशा का सिद्धान्त ही अत्यन्त लोकप्रिय था।

19. स्थिरदशा सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड में भौतिक परिवर्तन छोटे-बड़े पैमाने पर होते रहते हैं, परन्तु ये सभी परिवर्तन एक निश्चित मात्रा में होते हैं, और उनकी उत्पत्ति और विनाश में सन्तुलन बना रहता है।

20. आधुनिक वैज्ञानिकों का मानना है कि पुराने तारे मर जाते हैं तथा उसी मात्रा में नए तारे जन्म लेते रहते हैं। वे पुराने तारे जिन्होंने अपने ईंधन का उपयोग कर लिया है, और चमकना बंद कर दिया है, उनका स्थान नए तारे ले लेते हैं।

21. स्थिरदशा सिद्धांत की एक विशेषता यह है, कि यह हमारे ब्रह्मांड को असीमित और अति प्राचीन मानता है, अतःइसकी उत्पत्ति का प्रश्न ही नहीं उठता।

22. स्थिरदशा सिद्धान्त के विपरीत साक्ष्य सन् 1960 के दशक में मिलने प्रारम्भ हो गए थे।

23. ये अविश्वसनीय रूप से चमकदार वस्तुएं हैं जो आकाशगंगा की चमक से *1000* गुना तक अधिक चमक सकते हैं, परन्तु आकाशगंगा के आकार की तुलना में ये बहुत छोटी वस्तुएं हैं।

24. निरन्तर शोध अध्ययनों से मिलने वाले निष्कर्षों के बाद सन् *1970*के दशक की शुरुआत तक ब्रह्मांड विज्ञानियों के विशाल बहुमत द्वारा स्थिरदशा सिद्धांत को नकार दिया गया था।

25. दूरबीन एवं अन्य वैज्ञानिक यन्त्रों की खोजों के बाद अन्तरिक्ष संबन्धित खोजों में स्थिरदशा सिद्धान्त के विपरीत साक्ष्य मिलने प्रारम्भ हो गए, इसलिए इस सिद्धान्त को बाद में नकार दिया गया।

26. स्टीवंस हॉकिंस के अनुसार *"*स्थिरदशा सिद्धान्त को कार्ल पोपर द्वारा एक अच्छा वैज्ञानिक सिद्धान्त कहा गया, कि यह अच्छे से भविष्यवाणियां करता है। इसके माध्यम से अनेकों महत्वपूर्ण खोजें हुई हैं, दुर्भाग्य से यह सिद्धान्त बाद में नकार दिया गया*"*।

27. भारतीय सृष्टिविज्ञान की बात करें तो यहां भी पदार्थ के परमाणुरूप को स्थिर ही माना गया है।

28. भारतीयों ने ब्रह्माण्ड को नेति-नेति कहकर इसकी अनन्तता को स्वीकार किया है।

29. प्रकृति तीन गुणों की साम्यावस्था है।

30. प्रकृति के तीन गुण हैं – सत्त्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुण।

31. भारतीय दार्शनिक मत में सृष्टि तीनों गुणों की विकृति को कहते हैं।

1.11 व्याख्यात्मक प्रश्न

1. स्थिरदशा सिद्धान्त को स्पष्ट करें।

2. स्थिरदशा सिद्धान्त और विस्फोट सिद्धान्त की तुलना करें।

3. स्थिरदशा के संबन्ध में भारतीय मत क्या है*?*

4. स्थिरदशा सिद्धान्त की विशेषताओं को बनाए।

5. स्थिरदशा सिद्धान्त को क्यों नकारा गया*?* स्पष्ट करें।

1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2016

2. खगोलीय पिण्डों का परिक्रमण, कोपर्निकस, व्याख्या, तिवारी, श्रवणकुमार एवं पाण्डेय रमाकान्त, वाराणसी, हिन्दी प्रकाशन समिति, सन् 1972

3. गोलपरिभाषा, झा, सीताराम, दरभङ्गा, बिहार, श्रीसीताराम पुस्तकालय, संवत् 2027

4. भारतीय वृष्टिविज्ञान परिशीलन, त्रिपाठी, देवीप्रसाद,दिल्ली, श्रीला.ब.शा.रा.सं.विद्यापीठ,सन् 2015

5. भारतीय दर्शन, उपाध्याय, बलदेव, वाराणसी, चौखम्बा ओरिएण्टिया, सन् *1986*

6. भुवनकोश विमर्श, प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स दिल्ली, वर्ष 2004

7. यजुर्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2015

ईकाई – 2 . विस्फोट सिद्धान्त

पाठ संरचना

2.1 **प्रस्तावना**

2.2 **उद्देश्य**

2.3 **बिग-बैंग सिद्धान्त**

2.4 **ब्रह्माण्ड का विस्तार**

2.4.1 **बिग-बैंग सिद्धान्त का विकास**

2.4.2 **विस्फोट सिद्धान्त की विशेषताएं**

2.5 **ब्रह्माण्ड की संरचना**

2.6 **विस्फोट सिद्धान्त तथा भारतीय सृष्टि सिद्धान्त**

2.7 **सारांश**

2.8 **कठिन शब्द**

2.9 **अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**

2.10 **व्याख्यात्मक प्रश्न**

2.11 **सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थसूची**

2.1 प्रस्तावना

सम्पूर्ण मनुष्य जाति की सबसे बड़ी जिज्ञासा है, कि सृष्टि की रचना कैसे हुई*?* और यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड किसने रचा*?*ब्रह्माण्ड के अस्तित्त्व की खोज मेंमनुष्य सदियों से उलझा रहा है। शोध एवं अनुसन्धान के आधार पर कई विद्वानों ने इस विषय पर अपने-अपने सिद्धान्त प्रस्तुत किए हैं। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के प्रश्न की खोज वैदिक काल से लेकर वर्तमान पर्यन्त मनुष्य लगातार कर रहा है, परन्तु अभी तक भी किसी एक सिद्धान्त को अन्तिम निष्कर्ष के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है। कुछ वर्ष पूर्व जिनेवा के पास भूमि के नीचे एक प्रयोगशाला में हजारों वैज्ञानिक इस प्रश्न की खोज में लगे थे। फ्रांस में स्विट्जरलैंड की सीमा के पास भूमिसे*300*फीट नीचे वैज्ञानिक वर्षो से प्रयोग कर रहे थे, जहां वैज्ञानिकों की टीम "गॉड पार्टिकल" के रहस्य को सुलझाने का प्रयास भी किया, इस "गॉड पार्टिकल" का नाम वैज्ञानिकों ने हिग्स बोसॉन दिया गया। इसी प्रकार की जिज्ञासाएं तथा खोज पहले भी होते रहे हैं।

यदि भारतीय खगोल विज्ञान की बात करें तो सर्वप्रथम वैदिक साहित्य में इस प्रकार के विषयों का व्यापक वर्णन हमें मिलता है, उसके बाद पौराणिक साहित्य में इस प्रकार की कल्पनाओं का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। वर्तमान में भी सृष्टि तथा उसकी उत्पत्ति के विषय में आधुनिक वैज्ञानिकों ने समय-समय पर महत्वपूर्ण सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया है, जो हमारी जिज्ञासा की पूर्ति में सहायक हैं। इस खगोल परम्परा में आर्यभट्ट, भास्कराचार्य, अरस्तु, टॉलेमी, पाईथागोरस इत्यादि खगोल वैज्ञानियों के नाम अग्रणी हैं। इन्होंने सूर्य, पृथ्वी, चन्द्रमा, ग्रहों, उपग्रहों आदि की गति का जो अध्ययन किया, वह आज भी तथ्यपरक एवं सटीक हैं। इस आधार पर हम यह कह सकते हैं कि खगोलशास्त्र विज्ञान की सबसे पुरानी शाखा में से एक है। विज्ञान एवं तकनीकी विकास जितना अधिक होता गया, ब्रह्माण्डीय खोज और अनुसन्धान के प्रतिउतनी ही मनुष्य

की उत्सुकता बढ़ती चली गई। पहले इस शाखा को बहुत कम महत्व दिया जाता था, क्योंकि ब्रह्माण्ड-विज्ञान के अध्ययन करने से न तो भौतिक लाभ होता था और न ही कोई आर्थिक लाभ। लेकिन बीसवीं सदी तक आते-आते यह शाखा वैज्ञानिक अविष्कारों के साथ-साथ अत्यन्त उन्नत तथा सम्पन्न होती चली गई।

ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में आधुनिक वैज्ञानिकों ने तीन प्रमुख सिद्धान्त दिए हैं। उसमें पहला है स्थिरदशा सिद्धान्त। इसके अनुसार यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड सदा से ही रहा है, और इसमें अकारण ही सृष्टि हुई है। यह सृष्टि अनादि काल से चली आ रही है, तथा अनन्त काल तक होती रहेगी। यह ब्रह्माण्ड स्थिर है, अतः ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का प्रश्न ही नहीं है। द्वितीय सिद्धान्त स्पन्दनशील सिद्धान्त है, इसके अनुसार यह जगत् फैलता है तथा एक निश्चित अन्तराल के बाद इसमें संकुचन भी होता है। विस्तार और संकुचन का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। तृतीय सिद्धान्त है विस्फोट सिद्धान्त, इसके अनुसार ब्रह्माण्ड में सर्वप्रथम महाविस्फोट हुआ। उस महाविस्फोट के कारण पदार्थ के कई परमाणु टूटकर इधर-उधर बिखर गए, उन्हीं परमाणुओं से सृष्टि की संरचना हुई।इस अध्याय में हम विस्फोट सिद्धान्त का अध्ययन करेंगे।

2.2 अध्ययन के उद्देश्य

- इस अध्ययन से हम ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के विषय में जानेंगे।
- विस्फोट सिद्धान्त को समझेंगे तथा विस्फोट का स्वरूप और कारणों का अध्ययन करेंगे।
- बिग-बैंग सिद्धान्त का अध्ययन कर इसके प्रभावों को समझेंगे।
- ब्रह्माण्ड और उसकी उत्पत्ति की व्याख्या को विस्फोट सिद्धान्त के माध्यम से जानेंगे।

2.3 बिग-बैंग सिद्धान्त

इस सिद्धान्त को विस्फोट सिद्धान्त अथवा बिग-बैंग सिद्धान्त कहा जाता है। हम जिस ब्रह्माण्ड को जानते हैं, उसके अस्तित्व और इसकी उत्पत्ति की व्याख्या के लिए खगोल वैज्ञानिकों द्वारा वर्षों से एकत्र किए गए साक्ष्यों के आधार पर ही हम किसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं। इन साक्ष्यों के अनुसार वैज्ञानिकों का मानना है कि इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का प्रारम्भ एक महाविस्फोट से हुआ, इसी महाविस्फोट परिकल्पना को बाद में बिग-बैंग सिद्धान्त कहा जाने लगा। सन् *1927*ई. में बेल्जियम के खगोलशास्त्री जॉर्जेस लेमैत्रे एक विस्तारित ब्रह्माण्ड के सिद्धान्त का प्रस्ताव करने वाले पहले व्यक्ति बने। उन्हें ही विस्फोट सिद्धान्त का जनक माना जाता है। उन्होंने सिद्धान्त दिया कि यह ब्रह्माण्ड ऊर्जा के विस्तार का एक रूप है, इसका एक मूल बिन्दु भी अवश्य होगा। इस विस्तारित ब्रह्माण्ड को उसके मूल बिन्दु पर वापस खोजा जा सकता है, इस बिन्दु को उन्होंने "प्रधान परमाणु" कहा था। इसके बाद प्रसिद्ध खगोलशास्त्री एडविन हबल ने बिग-बैंग सिद्धान्त पर अनेकों खोजें की और इस सिद्धान्त की पुष्टि की गई।

बिग बैंग ब्रह्माण्ड सम्बन्धी एकप्रसिद्ध सिद्धान्त है, जो एक सुपरनोवा महाविस्फोट के बाद इस ब्रह्माण्ड के विकास की व्याख्या करता है। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड उच्च घनत्व और तापमान की प्रारम्भिक अवस्था से विस्तारित हुआ। महाविस्फोट के समय पर प्रकाश तत्वों की प्रचुरता तथाब्रह्माण्डीय माइक्रोवेव विकिरण की बड़े पैमाने पर संरचना हुई, जिससे महाविस्फोट हुआ। उस महाविस्फोट के बाद ऊर्जा का विस्तार होने लगा, इसी स्वरूप में हमारा ब्रह्माण्ड वर्तमान पर्यन्त लगातार अपना विस्तार कर रहा है। हबल और लेमेत्रे के सिद्धान्त के अनुसार आकाशगंगा हमसे लगातार दूर जा रही है। भौतिकी के ज्ञात नियमों के उपयोग से इस महाविस्फोट का समय लगभग 13.8 अरब वर्ष पूर्व माना जाता है, इस आधार पर ब्रह्माण्ड की आयु भी

यही है। सर्वप्रथम अत्यधिक घनत्व और गुरुत्वाकर्षण शक्ति के परिणामस्वरूप ऊर्जा का महाविस्फोट हुआ। इसके बाद यह ऊर्जा फैलती चली गई और ऊर्जा के परमाणु विशाल और घने बादलों के रूप में परिवर्तित हुए, और उनमें हाइड्रोडन, लीथियम आदि गैस बनी। समय के साथ-साथ ऊर्जा के ये सभी परमाणु कण ठण्डे हुए और गुरुत्वाकर्षण के कारण उनमें संगठन हुआ और परमाणु ऊर्जा आपस में एकत्रित होने लगी। सृष्टि की यह प्रक्रिया लगातार चलती रही और एक समय के बाद इसमें विभिन्न प्रकार की सृष्टियां उत्पन्न होने लगी। इसी महाविस्फोट की घटना को वैज्ञानिकों द्वारा एक समय बाद "बिग बैंग" कहा जाने लगा। महाविस्फोट के कारण बिखरी परमाणु तथा स्थूल सामग्री को खगोलविदों ने अज्ञात डार्क मैटर कहा, और माना कि ब्रह्माण्ड में अधिकांश गुरुत्वाकर्षण क्षमता इसी डार्क मैटर का परिणाम है।

सर्वप्रथम इस सिद्धान्त का जॉर्जेस लेमेत्रे ने *1927*में अपने शोध में उल्लेख किया था। उनका मानना था कि इस विस्तृत ब्रह्माण्ड के उस प्रारम्भिक बिन्दु को खोजा जा सकता है,जहां से ब्रह्माण्ड की संरचना प्रारम्भ होती है।उस प्रारम्भिक बिन्दु को उन्होंने "प्रधान परमाणु" का नाम दिया। उनका मानना था कि हमारा ब्रह्माण्ड लगातार विस्तृत हो रहा है और पूर्व में यह एक निश्चित बिन्दु से प्रारम्भ हुआ था। 1929 ई. में एडविन हबल ने इस सिद्धान्त का विश्लेषण किया और पुष्टि की, कि आकाशगंगाएं वास्तव में अलग हो रही हैं, वे ब्रह्माण्ड में फैल रही हैं और लगातार विस्तार को धारण कर रही हैं। इस सिद्धान्त के पक्ष और विपक्ष में भी वैज्ञानिक समुदाय बंटा हुआ दिखा। कई दशकों तक पूरा खगोलवैज्ञानिक समुदाय बिग बैंग सिद्धान्त के समर्थकों और विरोधियों में बंट गया। इससे पूर्व ब्रह्माण्ड को स्थिर माना जाता था, अतः विस्फोट का सिद्धान्त ब्रह्माण्ड के अनादि और अनन्त परिणाम का विरोधी सिद्ध हुआ। परन्तु अनेकों खोजों और अनुसन्धानों के बाद मिले साक्ष्यों के आधार पर बिग-बैंग सिद्धान्त को

सार्वभौमिक रूप से स्वीकार कर लिया गया, वर्तमान में यही विस्फोट सिद्धान्त वैश्विक खगोल समुदाय में सर्वमान्य है।

2.4 ब्रह्माण्ड का विस्तार

ब्रह्मांड के विस्तार का अनुमान बीसवीं शताब्दी के शुरुआती खगोलीय अनुसन्धानों से लगाया गया था और यह बिग-बैंग सिद्धान्त का एक अनिवार्य घटक है। सन्*1912* ई. मेंवेस्टो स्लिफ़रनामक प्रसिद्ध वैज्ञानिक ने पाया कि दूर स्थित आकाशगंगाओं में दूरी बढ रही है, जिसे बाद में पृथ्वी से आकाशगंगाओं की दूरी के अनुमान के रूप में भी व्याख्यायित किया गया था।इसके बाद सन् *1922* ई.मेंअलेक्जेंडर फ्राइडमैन ने इसे सैद्धान्तिक प्रमाण प्रदान करने के लिए आइंस्टीन के समीकरणों का उपयोग किया कि ब्रह्मांड का विस्तार हो रहा है। सन् *1927* में जॉर्जेस लेमैत्रे भी स्वतन्त्र रूप से एक सैद्धान्तिक आधार पर फ्रीडमैन के समान ही निष्कर्ष पर पहुंचेऔर आकाशगंगाओं और उनकी पुनरावर्तन वेग के बीच एक रैखिक संबंध के लिए पहला सैद्धान्तिक अनुसन्धान प्रमाण प्रस्तुत किया। साथ ही सन् *1925* ई.में अमेरिकी खगोलशास्त्री एडविन हबल ने सिद्ध किया था, कि पृथ्वी से दूर आकाशगंगाओं की गति और उनकी दूरी के बीच सीधा संबंध है। अब यह हबलकेनियम के रूप में प्रसिद्ध है। बिग-बैंग केवल मात्र ब्रह्मांड को भरने के लिए बाहर की ओर बढ़ने वाले पदार्थ का विस्फोट नहीं है, यह ब्रह्माण्डीय ऊर्जा के विस्फोट का विस्तार है। हमाराअंतरिक्ष ही समय के साथ हर जगह फैलता है और सभी गतिशील बिन्दुओं के बीच भौतिक दूरी को बढ़ाता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं किबिग-बैंग अन्तरिक्ष में विस्फोट नहीं है, अपितु अन्तरिक्ष का नियमित विस्तार है, इस प्रकार हमारा ब्रह्माण्ड लगातार विस्तारित हो रहा है।

विस्फोट सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड की आयु सीमित है। वैज्ञानिकों का मानना है कि एक निश्चित समय के बाद यह ब्रह्माण्ड नष्ट हो जाएगा। ब्रह्माण्ड के विस्तार के साथ ही प्रकाश भी एक सीमित गति से यात्रा करता है।अतीत में जिस समय ब्रह्माण्ड का विस्तार प्रारम्भ हुआ था, उस तक अभी हम निश्चित रूप से नहीं पहुच पाए हैं। बिग-बैंग सिद्धान्त के अनुसार वर्तमान में हमारे ब्रह्माण्ड का विस्तार बढ़ रहा है, यह किस स्थिति तक बढेगा? इस पर भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। परन्तु ब्रह्माण्ड के बारे में हमारी बहुत प्रारम्भिक समय की समझ से पता चलता है कि भूतकाल में इसका कोई एक प्रारम्भिक बिन्दु अवश्य रहा होगा। यदि उसके बाद ब्रह्माण्ड का विस्तार भी तेजी से हो रहा है, तो इस ब्रह्माण्ड के भविष्य की अन्तिम सीमा भी निश्चित रूप से होगी।

अभ्यास प्रश्न

प्र.1. वैज्ञानिकों द्वारा गॉड पार्टिकल को क्या नाम दिया गया?

प्र.2. खगोल विज्ञान के विषय में शोध को बढावा कब से मिला?

प्र.3. ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में आधुनिक सिद्धान्तों में कौन प्रसिद्ध हैं?

प्र.4. विस्फोट सिद्धान्त को अन्य किस नाम से जाना जाता है?

प्र.5. विस्फोट सिद्धान्त का जनक किसे माना जाता है?

प्र.6. जार्ज लैमेत्रे की क्या परिकल्पना थी?

प्र.7. जार्ज लैमेत्रे ने ब्रह्माण्ड के प्रारम्भिक बिन्दु को क्या कहा?

प्र.8. विस्फोट सिद्धान्त किसकी व्याख्या करता है?

प्र.9. भौतिक नियमों के उपयोग से महाविस्फोट का समय क्या निश्चित किया गया है?

प्र.10. विस्फोट सिद्धान्त को कब स्थापित किया गया?

प्र.11. एडविन हबल ने किस सिद्धान्त को पुष्ट किया था?

प्र.12 विस्फोट सिद्धान्त को किस रूप में स्वीकार्यता मिली?

प्र.13. अलेक्जेंडर फ्राइडमैन ने किसके समीकरणों का उपयोग किया?

प्र.14. विस्फोट सिद्धान्त में किसका विस्फोट होता है?

प्र.15 विस्फोट सिद्धान्त ब्रह्माण्ड की आयु के विषय में क्या कहता है?

2.4.1 विस्फोट सिद्धान्त का विकास

विस्फोट सिद्धान्त का विकास ब्रह्माण्ड की संरचना के अवलोकन और सैद्धान्तिक विचारों से हुआ। सन् *1912* मेंवेस्टो स्लिपर ने "सर्पिलाकार नेबुला" आकाशगंगा के अध्ययन के आधार पर बताया कि लगभग सभी ऐसी नीहारिकाएं पृथ्वी से दूर जा रही हैं, पृथ्वी की पहुंच उनसे लगातार घट रही थी। उन्होंने इस तथ्य के ब्रह्माण्ड सम्बन्धी अर्थों को नहीं समझा, क्योंकि यह एक विवादास्पद विषय था तथा ब्रह्माण्ड के स्थिरदशा सिद्धान्त का विरोधी विचार था। स्थिरदशा सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड स्थिर है, यह बढता और घटता नहीं है। परन्तु इसके दस साल बादएक रूसी ब्रह्माण्ड विज्ञानी और गणितज्ञअलेक्जेंडर फ्रीडमैन ने आइंस्टीन के समीकरणों से फ्रीडमैन समीकरणों की तुलना की। तुलना के आधार पर स्पष्ट किया गया कि उस समय अल्बर्ट आइंस्टीन द्वारा समर्थित स्थिरदशा सिद्धान्त का ब्रह्माण्ड मॉडल, इस सिद्धान्त के विपरीत था कि ब्रह्माण्ड में लगातार विस्तार हो रहा है। फिर *1924* मेंएक अमेरिकी

खगोलशास्त्री एडविन हबल ने निकटतम सर्पिल नीहारिकाओं का अध्ययन किया और स्पष्ट किया कि ये आकाशगंगाएं वस्तुतः हमारी आकाशगंगा से भिन्न थी। उसके बाद उसने टेलीस्कोप के उपयोग से उन आकाशगंगाओं से दूरियों का अनुमान लगाया। सन् *1929* ई. मेंहबल ने दूरी और पुनरावर्ती वेग के बीच के संबंध की खोज की, जिसे हबल के नियम के रूप में जाना जाता है।

सन् *1927* ई. में फ्रीडमैन के समीकरणों को स्पष्ट करते हुएबेल्जियम के भौतिक विज्ञानी जॉर्जेस लेमेत्रे ने बताया कि नीहारिकाओं में अनुमानित संकुचन ब्रह्माण्ड के विस्तार के कारण हो रहा है। फिर*1931* में लेमेत्रे ने इस सिद्धान्त पर और आगे बढ़कर सुझाव दिया कि ब्रह्माण्ड के विस्तार का यदि हम अध्ययन करते हैं, तो ज्ञात होता है कि अतीत में ब्रह्माण्ड बहुत छोटा रहा होगा और एक समय पर ब्रह्माण्ड का सारा द्रव्यमान एक बिन्दु में केन्द्रित रहा होगा। इस केन्द्र बिन्दु को लेमेत्रे ने "प्रधान परमाणु" का नाम दिया। इसी परमाणु से समस्त ब्रह्माण्ड का विस्तार हुआ और यह जगत अस्तित्व में आया। 1920 और 1930 के दशक में ब्रह्माण्ड के सिद्धान्त के विषय में प्रायः सभी प्रमुख ब्रह्माण्ड वैज्ञानिकों में स्थिरदशा के सिद्धान्त की मान्यता थी, इसी कारण लेमेत्रे पर कई लोगों ने आरोप भी लगाया कि उसने बिग-बैंग सिद्धान्त को भौतिकी में धार्मिक अवधारणाओं के आधार पर परिकल्पित किया है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बादब्रह्माण्ड के विषय मेंदो अलग-अलग सिद्धान्त वैज्ञानिकों के सामने थे। एक था फ्रेड हॉयल का स्थिरदशा सिद्धान्त,जिसके अनुसार ब्रह्माण्ड सदा से ही स्थिर रहा है। दूसरा लेमेत्रे का बिग-बैंग सिद्धान्त था। तत्पश्चात् हॉयल ने मार्च *1949* में बीबीसी रेडियो के प्रसारण के दौरान लेमेत्रे के सिद्धांत को "दिस बिग बैंग आइडिया" के रूप में सन्दर्भित किया था और इस विस्फोट सिद्धान्त को मजाक में बिग-बैंग कहा था, इसी कारण यह सिद्धान्त बिग-बैंग नाम से प्रसिद्ध हो गया। इसके

कुछ वर्षों के बाद के अवलोकन सम्बन्धी साक्ष्यों के आधार परस्थिरदशा सिद्धान्त के स्थान पर वैज्ञानिक बिग-बैंग सिद्धान्त का पक्ष लेने लगे। सन् *1964*ई. में इस सिद्धान्त पुष्टि की गई और बिग-बैंग सिद्धान्त को ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और विकास का सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त के रूप में समझा जाने लगा। सन् *1968* और *1970* में रोजर पेनरोज़, स्टीफन हॉकिंग और जॉर्ज एफ. आर. एलिस ने अपने शोध पत्र प्रकाशित किए, उनमें उन्होंने स्पष्ट किया कि बिग-बैंग सिद्धान्त गणितीय विलक्षणता का महत्वपूर्ण परिणाम है। फिरसन् *1970*से *1990* के दशकों तक ब्रह्माण्ड विज्ञानियों ने बिग-बैंग सिद्धान्त को ब्रह्माण्ड की विशेषताओं को चित्रित करने और अन्य समस्याओं को हल करने के लिए प्रयोग किया। *1981* मेंएलन गुथ ने प्रारम्भिक ब्रह्माण्ड के सिद्धान्त में तेजी से अनुसन्धान करते हुए बिग-बैंग सिद्धान्त में कुछ उत्कृष्ट सैद्धान्तिक सफलताएं प्राप्त की। सन् *1990*के दशक के उत्तरार्ध से बिग-बैंग सिद्धान्त की ब्रह्मांड विज्ञान में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है, यह प्रगति दूरबीन प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटर आदि आधुनिक यन्त्रों के कारण और अधिक हुई है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.16. नीहारिकाएं पृथ्वी से दूर जा रही हैं, यह सबसे पहले किसने बताया*?*

प्र.17. दूरी और पुनरावर्ती वेग के बीच के संबन्धों की खोज किसने की*?*

प्र.18. विस्फोट सिद्धान्त को बिग-बैंग नाम किसने दिया*?*

प्र.19. ब्रह्माण्ड विज्ञान में आधुनिक प्रगति के क्या कारण हैं*?*

प्र.20. वर्तमान में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में सर्वाधिक मान्य सिद्धान्त कौन सा है*?*

2.4.2 विस्फोट सिद्धान्त की विशेषताएं

विस्फोट सिद्धान्त परमाणु तत्वों की प्रचुरता, बड़े पैमाने पर ब्रह्माण्ड की संरचना तथा दृष्टिगत परिघनताओं की विस्तृत शृंखला की एक व्यापक व्याख्या प्रस्तुत करता है। यह सिद्धान्त दो प्रमुख मान्यताओं पर निर्भर करता है- भौतिकी के नियमों की सार्वभौमिकता और ब्रह्माण्ड सम्बन्धी सिद्धान्त। भौतिक नियमों की सार्वभौमिकता प्रसिद्ध वैज्ञानिकआइन्स्टीन के सापेक्षता के सिद्धांत पर अन्तर्निहित सिद्धान्तों में से एक है। ब्रह्माण्ड सम्बन्धी सिद्धान्त के अनुसार कहा गया है, कि बड़े स्तर पर ब्रह्माण्ड सजातीय और समदैशिक है, यह प्रत्येक स्थान पर प्रत्येक दिशाओं में समान रूप से दिखाई देता है। अतः ब्रह्माण्ड व्यापक है। इस सिद्धान्त के अनुसार इन विचारों को प्रारम्भ में एक परिकल्पना के रूप में लिया गया था, परन्तु बाद में उनमें से प्रत्येक सिद्धान्त का परीक्षण करने का प्रयास किया गया। पृथ्वी से देखने पर ब्रह्माण्ड बड़े पैमाने पर समदैशिक ही प्रतीत होता है तथा यह सभी ओर एक जैसा ही दिखता है। यदि यह निश्चित ही समदैशिक है, तो ब्रह्माण्ड सम्बन्धी सिद्धान्त यही हो सकता है कि इसका कोई एक मुख्य बिन्दु निश्चित नहीं है। समदैशिक और सर्वव्यापक तत्त्व का प्रत्येक कण उसका बिन्दु हो सकता है, परन्तु एक बिन्दु होना असम्भव है। बिग-बैंग सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड का एक बिन्दु निश्चित रूप से रहा है, जहाँ से यह ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ।

बिग-बैंग सिद्धान्त के अनुसारब्रह्माण्ड अपनी प्रारम्भिक अवस्था में बहुत गर्म और बहुत सघन था, बाद में धीरे-धीरे इसका विस्तार हुआ।विस्तार के साथ ही यह ठण्डा भी होता चला गया। सामान्य सापेक्षता के सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड के विस्तार पर शोध एवं अध्ययनों से इसके प्रारम्भिक अवस्था का ज्ञान होता है, इन अध्ययनों से पता चलता है कि यह ब्रह्माण्ड एक समय में अनन्त घनत्वयुक्त था और अनन्त तापमान को समेटे हुए था। इसी घनत्व और ऊर्जा की अधिकता के कारण ही

महाविस्फोट हुआ। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड की एक और विशेषता है – गुरुत्वाकर्षण की विलक्षणता। वैज्ञानिकों का मानना है कि गुरुत्वाकर्षण की शक्ति ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को थामे हुए है।गुरुत्वाकर्षण की विलक्षणता के कारण ही सभी ब्रह्माण्डीय पिण्ड एक दूसरे पर निर्भर भी हैं और वे सभी अपनी-अपनी एक निश्चित स्थिति पर ही विचरण करते हैं।

बिग-बैंग सिद्धान्त को ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का सिद्धान्त भी माना जाता है, क्योंकि यह एक निश्चित प्रारम्भिक बिन्दु से ब्रह्माण्ड का आरम्भ मानता है। इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के समय एक सुपरनोवा विस्फोट हुआ, इसी के बाद ब्रह्माण्ड का विकास प्रारम्भ हुआ। इस घटना के बाद का जो समय अभी तक बीत चुका है, वह ब्रह्माण्ड की आयु का निर्धारण करता है। वर्तमान में वैज्ञानिकों ने बिग-बैंग सिद्धान्त के अनुरूप ब्रह्माण्ड की आयु 13.8 बिलियन वर्ष परिकल्पित की है। यह सभी निर्णय भौतिकी के सिद्धान्तों के अनुसार किए गए हैं।बिग-बैंग सिद्धान्त के शुरुआती चरण बहुत परिकल्पनाओं पर आधारित थे, क्योंकि उस समय वैज्ञानिकों के पास पर्याप्त खगोलीय डेटा उपलब्ध नहीं था।

2.5 ब्रह्माण्ड की संरचना

महाविस्फोट के बाद की एक लंबी अवधि में समान रूप से वितरित पदार्थ कण स्थूल तथा सूक्ष्म रूप दोनों रूपों में फैले। इनमें गुरुत्वाकर्षण शक्ति के प्रभाव से आपसी आकर्षण पैदा हुआ, जिसके कारण इनमें जुड़ाव पैदा हुआ और पदार्थों के निरन्तर संघटन से यह धीरे-धीरे और अधिक सघन होता चला गया। जिसके कारण सभी प्रकार के आकाशीय पिण्डों की रचना हुई। यह सभी रचनाएं आज गैस के बादल, तारे, आकाशगंगा और अन्य खगोलीय संरचनाओं के रूप में देखी जा सकती हैं। यह प्रक्रिया ब्रह्माण्ड में पदार्थ की मात्रा और पदार्थ के प्रकारों पर निर्भर करती है। इस प्रकार इस

प्रक्रिया को गर्म और ठंडा इस प्रकार से विभाजित किया जाता है। इन्हें बोरियोनिकऔर नॉन बोरियोनिक मैटर के रूप में भी जाना जाता हैं। ये विभाजन भौतिकी के सिद्धान्तों के अनुरूप पदार्थ में निहित ऊर्जा की माप के आधार पर किए गए हैं। ब्रह्माण्ड में ऊर्जा के एक रहस्यमय स्वरूप का प्रभुत्व है, जिसे डार्क एनर्जी के रूप में जाना जाता है, यह डार्क एनर्जी स्पष्ट रूप से पूरे अन्तरिक्ष में व्याप्त है। वैज्ञानिक अनुसन्धानों के अध्ययन से पता चलता है कि आज के ब्रह्माण्ड की कुल ऊर्जा घनत्व का *73%*इसी डार्क एनर्जी के रूप विद्यमान है, जो अभी भी पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं है। जब ब्रह्माण्ड बहुत सूक्ष्म था, तब यह सम्भवतः एक अंधेरी ऊर्जा से प्रभावित था, लेकिन कम स्थान पर और सब कुछ एक साथ सघन होने के कारण, उसमें गुरुत्वाकर्षण की प्रबलता थी और यह गुरुत्वाकर्षण इसके विस्तार को धीमा कर रहा था। लेकिन अन्ततःकई अरब वर्षों के विस्तार के बाद, डार्क एनर्जी के घनत्व के साथ ही सापेक्ष पदार्थ के घटते घनत्व के कारण ब्रह्मांड का विस्तार भी तेज होने लगा।

2.6 विस्फोट सिद्धान्त तथा भारतीय सृष्टि सिद्धान्त

ब्रह्माण्डोत्पत्ति के आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धान्तों में विस्फोटसिद्धान्त सर्वाधिक मान्य सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को एक बिन्दु से मानता है। इसके अनुसार ब्रह्माण्ड एक महाविस्फोट के साथ फैलता है, तथा उसके बाद यह विस्तार को धारण करता है। भारतीय वैज्ञानिक ज्ञान परम्परा के अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक हिरण्यमय अण्डे के फूटने से हुई। यह हिरण्याण्ड सर्वप्रथम दो भागों में विभाजित हुआ और इसके दोनों कपालों से पृथिव्यादि समस्त प्रकार की सृष्टि उत्पन्न हुआ। इस विषय में ऋग्वेद में मिलता है –

"हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्"

अर्थात् सर्वप्रथम एक हिरण्याण्ड में विस्फोट हुआ और उसके गर्भ से एक शक्तिशाली पुरुष उत्पन्न हुआ, और वह समस्त लोकों में व्याप्त हो गया। प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी ने अपनी पुस्तक भुवनकोशविमर्श में इस हिरण्याण्ड की तीन गतियां बताई हैं – पर्यप्लवन, प्रसर्पण और समेषण। पर्यप्लवन की गति में यह हिरण्याण्ड सर्वप्रथम अक्षभ्रमण की अवस्था अर्थात् अपनी धुरी पर घूम रहा था। फिर यह प्रसर्पण की गति को प्राप्त हुआ और इसमें गतिशीलता प्रारम्भ हुई और इसमें वृद्धि हुई। इसके बाद यह समेषण की स्थिति में आया और इसमें गम्भीर शब्दनाद के साथ इसका प्रसार प्रारम्भ हो गया।

इस प्रकार भारतीय हिरण्यगर्भ सिद्धान्त और आधुनिक विस्फोट सिद्धान्त में समानता मिल जाती है। जिसमें ब्रह्माण्ड की पर्यप्लवन स्थिति को हम आधुनिक मूल बिन्दु मान सकते हैं जिसे आधुनिक वैज्ञानिकों ने "प्रधान परमाणु" कहा। उस परमाणु में जब शब्दनाद के साथ गतिशीलता प्रारम्भ हुई तथा यह प्रसर्पण अवस्था में था। आधुनिक वैज्ञानिकों ने इस अवस्था को ही महाविस्फोट कहा है। हिरण्याण्ड की तीसरी अवस्था जिसे भारतीय ऋषियों ने समेषण अवस्था कहा है, उसमें हिरण्याण्ड का विस्तार होता है। यह महाविस्फोट के बाद के विस्तार की ओर संकेत करता है। अर्थात् ब्रह्माण्ड का विस्तार प्रारम्भ हुआ। अतः ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के संदर्भ में जो हिरण्यगर्भ सिद्धान्त के अन्तर्गत कहा गया है, प्रायः वही सिद्धान्त आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा भी प्रस्तुत किया गया है।

भारतीय दार्शनिक पद्धति के अनुसार भी प्रायः इसी से मिलता जुलता वर्णन ग्रन्थों में मिलता है। सांख्यशास्त्र के अनुसार मूल प्रकृति में पुरुष के तेज से विक्षोभ हुआ,उसी विक्षोभ के बाद सृष्टि की उत्पत्ति हुई। समस्त प्रकार के ग्रह-नक्षत्रों की रचना भी इसी विस्फोट के कारण हुई। आधुनिक विस्फोट सिद्धान्त के अनुसार यह दार्शनिक

परिकल्पना इससे मिलती-जुलती हुई है। यहां मूल बिन्दु अर्थात प्रधान परमाणु को हम प्रकृति का स्वरूप मान सकते हैं। उसमें अत्यधिक ऊर्जा के प्रभाव को हम सांख्य पुरुष की ऊर्जा के रूप में मान सकते हैं। जिस प्रकार प्रकृति का पुरुष की ऊर्जा के साथ संयोग से प्रकृति में विक्षोभ हुआ। कुछ इसी तहत आधुनिक वैज्ञानिकों का भी मानना है कि प्रधान परमाणु के पास अत्यधिक ऊर्जा की सघनता के कारण इस मूल बिन्दु पर विस्फोट हुआ। इस प्रकार भारतीय प्राचीन सिद्धान्तों के अनुरूप ही आधुनिक वैज्ञानिक भी अपनी खोजों के अनुसार निष्कर्ष तक पहुंच रहे हैं।

अभ्यास प्रश्न

प्र.21. विस्फोट सिद्धान्त किन दो मान्यताओं पर निर्भर है?

प्र.22. भौतिक नियमों की सार्वभौमिकता किस पर अन्तर्निहित है?

प्र.23. ब्रह्माण्ड सम्बन्धी सिद्धान्त क्या है?

प्र.24. महाविस्फोट किस कारण से हुआ?

प्र.25. ब्रह्माण्डीय पिण्ड किस कारण एक दूसरे पर निर्भर हैं?

प्र.26. बिग-बैंग महाविस्फोट हुए कितने वर्ष अनुमानित किए गए हैं?

प्र.27. आकाशीय पिण्डों की संरचना कैसे हुई?

प्र.28. डार्क एनर्जी क्या है?

प्र.29. हिरण्यगर्भ के अनुसार सृष्टि क्या है?

प्र.30. भुवनकोशविमर्श के अनुसार हिरण्यगर्भ की कितनी स्थितियां हैं?

प्र.31. सांख्यशास्त्र के अनुसार सृष्टि कैसे हुई?

प्र.32. सांख्य और विस्फोट सिद्धान्त में क्या समानता है?

2.7 सारांश

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के विषय में आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा कई सिद्धान्त दिए गए हैं, उन सिद्धान्तों में सर्वाधिक मान्य और प्रसिद्ध सिद्धान्त विस्फोट सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि की संरचना एक महाविस्फोट से हुई थी। उस महाविस्फोट में ब्रह्माण्ड की ऊर्जा फैलने लगी। ये ऊर्जा फैलकर अपने विस्तार को लेती गई। समय के साथ ही यह ऊर्जा फैलती गई और इसने विभिन्न प्रकार की आकाशगंगाओं का स्वरूप धारण किया और सृष्टि उत्पन्न होती गई। इस सिद्धान्त को पहले मान्यता प्राप्त नहीं थी परन्तु वैज्ञानिक शोधों और नए-नए वैज्ञानिक उपकरणों के माध्यम से किए गए अनुसन्धानों के आधार पर आज यह सिद्धान्त सर्वाधिक प्रसिद्ध है।

2.8 कठिन शब्दार्थ

जिज्ञासा	- जानने की इच्छा
अनुसन्धान	- शोध
व्यापक	- अत्यधिक विस्तृत, सम्पूर्ण
तथ्यपरक	- तथ्यों से युक्त, साक्ष्यों से युक्त
ब्रह्माण्डोत्पत्ति	- ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति
अकारण	- किसी कारण के बिना
जगत	- संसार, सृष्टि
परिकल्पना	- एक कल्पना, अनुमान
खगोलशास्त्री	- अन्तरिक्ष वैज्ञानिक

विस्तारित	- फैलता हुआ
प्रधान	- मुख्य
घनत्व	- सघनता
संगठन	- एकत्रित होना
विस्तृत	- बढ़ना
अनादि	- जिसका प्रारम्भ अज्ञात हो
अनन्त	- जिसका अन्त न हो
सार्वभौमिक	- व्यापकता से, सभी द्वारा स्वीकृत
सर्वमान्य	- सभी द्वारा माने जाने वाला
समीकरण	- सूत्रों का प्रयोग करना
पुनरावर्तन	- चक्र मे घूमना
सीमित	- निर्धारित होना
विस्तार	- फैलाव
अवलोकन	- देखना, अनुसन्धान करना
विवादास्पद	- जिस पर विवाद हो
समर्थित	- समर्थन प्राप्त
संकुचन	- सिकुड़ना
अस्तित्त्व	- जिसकी सत्ता हो

स्थिरदशा - स्थिर अवस्था में रहना

विलक्षणता - विशेष प्रकार का लक्षण

दूरबीन - दूर की वस्तुओं को देखने वाला यन्त्र

प्रचुरता - अधिकता

समदैशिक - सभी दिशाओं में समान रूप से व्याप्त

अवधि - समय

सघन - अत्यधिक घना

खगोलीय - आकाश से संबन्धित

प्रभुत्व - सत्ता

प्रबलता - अत्यधिक बल से युक्त

उपकरण - यन्त्र

सर्वाधिक - सबसे अधिक

विस्तार - फैलाव

कपाल - किसी गोल पदार्थ का आधा भाग, आधा गोला, सिर

हिरण्याण्ड - सोने का अण्डा

गतिशीलता - हलचल होना, गति होना

प्रसार - फैलना

शब्दनाद - अत्यधिक शब्द होना

सांख्यशास्त्र - छः वैदिक दर्शनों में से एक सांख्यदर्शन

प्रधान - मुख्य

विक्षोभ - उत्पत्ति, गतिशीलता

संयोग - मिलना

2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. वैज्ञानिकों द्वारा गॉड पार्टिकल को हिग्स बोसोन नाम दिया गया।
2. बीसवीं सदी तक आते-आते खगोल विज्ञान की शाखा आविष्कारों के साथ-साथ अत्यंत उन्नत तथा सम्पन्न होती चली गई।
3. ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में आधुनिक विज्ञान में तीन प्रमुख सिद्धान्त हैं – स्थिरदशा सिद्धान्त, विस्फोट सिद्धान्त तथा स्पन्दनशील सिद्धान्त।
4. विस्फोट सिद्धान्त को बिग-बैंग सिद्धान्त नाम से भी जाना जाता है।
5. विस्फोट सिद्धान्त का जनक प्रसिद्ध खगोलशास्त्री जार्जेस लैमेत्रे को माना जाता है।
6. जार्ज लैमेत्रे का मानना था कि ब्रह्माण्ड ऊर्जा के विस्तार का एक रूप है, इसका एक मूल बिन्दु भी अवश्य होगा। इस विस्तारित ब्रह्मांड को उसके मूल बिंदु पर वापस खोजा जा सकता है,
7. जार्ज लैमेत्रे ने ब्रह्माण्ड के प्रारम्भिक बिन्दु को "प्रधान परमाणु" कहा था।
8. विस्फोट सिद्धान्त एक सुपरनोवा महाविस्फोट के बाद इस ब्रह्माण्ड के विकास की व्याख्या करता है।

9. भौतिकी के ज्ञात नियमों के उपयोग से महाविस्फोट का समय लगभग 13.8 अरब वर्ष पूर्व माना जाता है, इस आधार पर ब्रह्माण्ड की आयु भी यही है।

10. जार्ज लैमेत्रे ने सन् 1927 में अपने शोध में इस सिद्धान्त का उल्लेख किया था।

11. एडविन हबल ने विस्फोट सिद्धान्त का विश्लेषण किया और पुष्टि की, कि आकाशगंगाएं वास्तव में अलग हो रही हैं, वे ब्रह्माण्ड में फैल रही हैं और लगातार विस्तार को धारण कर रही हैं।

12. विस्फोट सिद्धान्त को स्थिरदशा सिद्धान्त के विकल्प के रूप में मान्यता मिली।

13. अलेक्जेंडर फ्राइडमैन ने आइंस्टीन के समीकरणों का उपयोग किया।

14. विस्फोट सिद्धान्त में नाभिकीय ऊर्जा का विस्फोट होता है।

15. विस्फोट सिद्धान्त ब्रह्माण्ड की आयु को सीमित मानता है।

16. सन् *1912* मेंवेस्टो स्लिपर ने "सर्पिलाकार नेबुला" आकाशगंगा के अध्ययन के आधार पर बताया कि लगभग सभी ऐसी नीहारिकाएं पृथ्वी से दूर जा रही हैं।

17. हबल ने दूरी और पुनरावर्ती वेग के बीच के संबंध की खोज की।

18. विस्फोट सिद्धान्त को बिग-बैंग नाम फ्रेडहायल ने दिया।

19. ब्रह्माण्ड विज्ञान में आधुनिक प्रगति के मुख्य कारण दूरबीन, कम्प्यूटर तथा आधुनिक यन्त्र हैं।

20. वर्तमान में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में सर्वाधिक मान्य सिद्धान्त विस्फोट सिद्धान्त है।

21. यह सिद्धांत दो प्रमुख मान्यताओं पर निर्भर करता है, भौतिकी के नियमों की सार्वभौमिकता और ब्रह्माण्ड संबंधी सिद्धांत।

22. भौतिक नियमों की सार्वभौमिकता प्रसिद्ध वैज्ञानिकआइन्स्टीन के सापेक्षता के सिद्धांत पर अंतर्निहित सिद्धांतों में से एक है।

23. ब्रह्माण्ड संबंधी सिद्धांत के अनुसार कहा गया है, कि बड़े स्तर पर ब्रह्मांड सजातीय और समदैशिक है, यह प्रत्येक स्थान पर प्रत्येक दिशाओं में समान रूप से दिखाई देता है।

24. ब्रह्माण्ड एक समय में अनन्त घनत्वयुक्त था और अनन्त तापमान को समेटे हुए था। इसी घनत्व और ऊर्जा की अधिकता के कारण ही महाविस्फोट हुआ।

25. गुरुत्वाकर्षण की विलक्षणता के कारण ही सभी ब्रह्माण्डीय पिण्ड एक दूसरे पर निर्भर भी हैं।

26. बिग-बैंग सिद्धान्त के अनुरूप ब्रह्माण्ड की आयु 13.8 बिलियन वर्ष परिकल्पित की है।

27. महाविस्फोट के बाद गुरुत्वाकर्षण शक्ति के प्रभाव से आपसी आकर्षण पैदा हुआ, जिसके कारण इनमें जुड़ाव पैदा हुआ और पदार्थों के निरन्तर संघटन से यह धीरे-धीरे और अधिक सघन होता चला गया। जिसके कारण सभी प्रकार के आकाशीय पिण्डों की रचना हुई।

28. ब्रह्माण्ड की वह ऊर्जा जो आज भी अज्ञात है, वह डार्क एनर्जी कहलाती है।

29. सर्वप्रथम एक हिरण्याण्ड में विस्फोट हुआ और उसके गर्भ से एक शक्तिशाली पुरुष उत्पन्न हुआ, और वह समस्त लोकों में व्याप्त हो गया।

30. भुवनकोशविमर्श में इस हिरण्याण्ड की तीन गतियां बताई हैं – पर्यप्लवन, प्रसर्पण और समेषण।

31. सांख्यशास्त्र के अनुसार मूल प्रकृति में पुरुष के तेज से विक्षोभ हुआ उसी विक्षोभ के बाद सृष्टि की उत्पत्ति हुई।

32. जिस प्रकार प्रकृति का पुरुष की ऊर्जा के साथ संयोग से प्रकृति में विक्षोभ हुआ। कुछ इसी तहत आधुनिक वैज्ञानिकों का भी मानना है कि प्रधान परमाणु के पास अत्यधिक ऊर्जा की सघनता के कारण इस मूल बिन्दु पर विस्फोट हुआ।

2.10 व्याख्यात्मक प्रश्न

1. बिग-बैंग सिद्धान्त क्या है? विस्तार से समझाइये।
2. विस्फोट सिद्धान्त द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का वर्णन करें।
3. विस्फोट सिद्धान्त की विशेषता बताइये।
4. विस्फोट सिद्धान्त के विकास क्रम पर निबन्ध लिखिए।
5. विस्फोट सिद्धान्त तथा भारतीय सिद्धान्तों की तुलना कीजिए।

2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2016
2. खगोलीय पिण्डों का परिक्रमण, कोपर्निकस, व्याख्या, तिवारी, श्रवणकुमार एवं पाण्डेय रमाकान्त, वाराणसी, हिन्दी प्रकाशन समिति, सन् 1972
3. गोलपरिभाषा, झा, सीताराम, दरभङ्गा, बिहार, श्रीसीताराम पुस्तकालय, संवत् 2027
4. भारतीय वृष्टिविज्ञान परिशीलन, त्रिपाठी, देवीप्रसाद,दिल्ली, श्रीला.ब.शा.रा.सं.विद्यापीठ,सन् 2015
5. भारतीय दर्शन, उपाध्याय, बलदेव, वाराणसी, चौखम्बा ओरिएण्टिया, सन् *1986*

6. भुवनकोश विमर्श, प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स दिल्ली, वर्ष 2004

7. यजुर्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2015

ईकाई *3*– स्पन्दनशील सिद्धान्त

पाठ संरचना

3.1 **प्रस्तावना**

3.2 **उद्देश्य**

3.3 **स्पन्दनशील सिद्धान्त की परिकल्पना**

3.4 **स्पन्दनशील सिद्धान्त की विशेषताएं**

3.4.1 **ऊर्जा का स्पन्दन**

3.4.2 **अद्वितीयता की अनन्तता का नियम**

3.5 **स्पन्दन का चक्र**

3.5.1 **स्पन्दनशील सिद्धान्त तथा भारतीय सृष्टिविज्ञान**

3.6 **सारांश**

3.7 **कठिन शब्द**

3.8 **अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**

3.9 **व्याख्यात्मक प्रश्न**

3.10 **सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थसूची**

3.1 प्रस्तावना

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति से जुड़ी जिज्ञासाएं, प्रश्न तथा उनके उत्तरों पर विभिन्न दिशाओं में विचार करने के पश्चात् धार्मिक समुदाय ने, दार्शनिक समुदाय ने तथा वैज्ञानिक समुदाय ने हमें बहुत से सिद्धान्त दिए हैं। उन सभी के अध्ययन के पश्चात् भी हम ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति तथा उसके कारणों का स्पष्ट रूप से नहीं जान पाए हैं। इन सभी अध्ययनों के बाद शायद हम इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि ऐसे प्रश्न मानव बुद्धि तथा उसकी असीमित सम्प्रेषण क्षमताओं से उपजे हैं। इन प्रश्नों में सेप्रत्येक का उत्तर अपने साथ अनेकों और भी प्रश्नों को हमारे समक्षप्रस्तुत करता है, जिनका समग्रता में कोई संतोषजनक उत्तर देना लगभग असंभवसा प्रतीत होता है। इन प्रश्नों के उत्तर देने की चेष्टाएं तथा सिद्धान्त केवल बौद्धिक परिकल्पनाओं द्वारा ही जन्मती हैं। ये परिकल्पनाएं कभी एक निश्चित सिद्धान्त का रूप धारण नहीं कर सकती और ना ही हम इन्हें किसी सत्य की बुनियाद पर स्पष्ट कर सकते हैं क्योंकि इन्हें सिद्ध अथवा असिद्ध करने की कोई भी निर्णायक पद्धति हमारे पास नहीं है। यह भी कहा जा सकता है कि इन प्रश्नों के उत्तर में जन्मी परिकल्पनाएं हमारे विचारों को और अधिक भी उलझा सकते हैं और हम इन प्रश्नों की जिज्ञासाएं समाप्त नहीं कर सकते। जितनी भी वैज्ञानिक खोजें अभी तक इस सन्दर्भ में हुई हैं, उनमें लगातार शोध और अनुसन्धान की आवश्यकता बनी रहती है, अतः वे सिद्धान्त भी पूर्णतः सत्य नहीं हो सकते।

सृष्टि की रचना क्यों, कब और कैसे हुई?यह प्रश्न सदा से ही मनुष्यों के लिए एक आकर्षक जिज्ञासा बनी हुई है। शायद मनुष्य की बुद्धि के विकसित होने के बाद की पहली जिज्ञासा यही रही होगी कि हम कौन हैं, हमारा उद्देश्य क्या है, यह सृष्टि क्या है, यह ब्रह्माण्ड किसने बनाया, इसे संचालित कौन करता है? आदि आदि। इन्ही प्रश्नों के परिणामस्वरूप विभिन्न धार्मिक, दार्शनिक तथा वैज्ञानिक विचारकों ने इन प्रश्नों के

उत्तर हेतु कुछ सैद्धान्तिक प्रयास अवश्य किए हैं, परन्तु ये सिद्धान्त भी अन्तिम सत्य नहीं कहे जा सकते, क्योंकि इन प्रश्नों का उत्तर भी उनकी एक सीमित बौद्धिक परिकल्पना का ही प्रत्युत्तर है। यह ज्ञान हमें सरलता से हमें नहीं मिल सकता, यह एक निरन्तर चलने वाली जिज्ञासा है, जो कभी भी समाप्त होती हुई नहीं दिखती।

भारतीय ज्ञान परम्परा में जिन सिद्धान्तों का वर्णन हमें मिलता है, उनके अध्ययन से ज्ञात होता है कि हमारे ऋषि भी उस समय इन प्रश्नों के प्रति उतने ही जिज्ञासु थे जितने कि वर्तमान में हम हैं। आज आधुनिक विज्ञान ने वर्तमान में बहुत प्रसिद्धि प्राप्त की है। नए-नए उपकरणों के माध्यम से आज का वैज्ञानिक जगत नित्य निरन्तर नए-नए अनुसन्धान कर रहा है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी इस जिज्ञासा के परिणामस्वरूप तीन सिद्धान्त हमारे सामने प्रस्तुत किए हैं। उनके अनुसार पहला विस्फोट सिद्धान्त, जिसके अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति वर्षों पहले एक सुपरनोवा महाविस्फोट से हुई थी, तभी से यह ब्रह्माण्ड लगातार अपनी सीमा का विस्तार कर रहा है। इस सिद्धान्त के विपरीत और प्राचीन सिद्धान्त भी हमारे वैज्ञानिकों द्वारा विकसित किया गया कि यह ब्रह्माण्ड अनादि काल से ही अस्तित्व में है तथा यह अनन्त काल तक अपने अस्तित्व में रहेगा। इस अनादि और अनन्त की वैज्ञानिक परिकल्पना को स्थिरदशा सिद्धान्त कहा जाता है। इन दोनों सिद्धान्तों के साथ ही एक तीसरे सिद्धान्त का भी विकास समय के साथ हुआ, उस सिद्धान्त को हम स्पन्दनशील सिद्धान्त कहते हैं। इस इकाई में हम स्पन्दनशील सिद्धान्त का अध्ययन करेंगे तथा उसके माध्यम से ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति तथा उसमें होने वाले सृष्टि के विस्तार को समझने का प्रयास करेंगे।

3.2 अध्ययन के उद्देश्य

❖ प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से हम ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को समझेंगे।

- ❖ आधुनिक मत में वर्णित सिद्धान्तों को जानेंगे।
- ❖ ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति में स्पन्दनशील सिद्धान्त का भूमिका का अध्ययन करेंगे।
- ❖ स्पन्दनशील सिद्धान्त की परिकल्पना तथा उसकी विशेषता के बारे में पढेंगे।
- ❖ स्पन्दनशील सिद्धान्त काप्राचीन भारतीय सिद्धान्त के साथ तुलना का भी अध्ययन करेंगे।

3.3 स्पन्दनशील सिद्धान्त की परिकल्पना

किसी प्रकार के कम्पन को अथवा किसी पदार्थ के अस्थिर रहने की प्रक्रिया को स्पन्दन कहते हैं। खगोल विज्ञान में स्पन्दन का अर्थ विस्तार और संकुचन से है। इस प्रकार विस्तार और संकुचन की नियमितता का बना रहना स्पन्दनशील कहलाता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि हमारा ब्रह्माण्ड विस्तार और संकुचन की नियमित प्रक्रिया में रहता है अतः ब्रह्माण्ड के इसी विस्तार तथा संकुचन होने की प्रक्रिया के आधार पर ब्रह्माण्ड विज्ञानियों ने जो सिद्धान्त प्रस्तुत किया उसे स्पन्दनशील सिद्धान्त कहते हैं। इस सिद्धान्त में गुरुत्वाकर्षण ऊर्जा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। माना जाता है कि सुपरनोवा महाविस्फोट के कारण ब्रह्माण्ड फैलता है व इसका विस्तार होता है और गुरुत्वाकर्षण बल के कारण ही यह संकुचित भी होता है। अतः इस सिद्धान्त में विस्फोट और गुरुत्वाकर्षण, ये दोनों मिलकर ब्रह्माण्ड के विस्तार और संकुचन में सहायक होते हैं। स्पन्दनशील सिद्धान्त के सैद्धान्तिक पक्ष की बात करें तो हमारे ब्रह्माण्ड के प्रारम्भिक काल में एक महाविस्फोट हुआ, इस महाविस्फोट को हम बिग-बैंग सिद्धान्त के माध्यम से समझ सकते हैं। इस महाविस्फोट के बाद हमारा ब्रह्माण्ड लगातार विस्तार ले रहा है, किन्तु ब्रह्माण्ड का यह विस्तार एक सीमित सीमा तक ही होगा। सीमित सीमा तक के विस्तार के बाद गुरुत्वाकर्षण शक्ति से इस ब्रह्माण्ड का संकुचन प्रारम्भ हो जाएगा। संकुचन होते हुए यह प्रक्रिया पुनः उस बिन्दु पर सीमित हो जाएगी, जिस बिन्दु पर

महाविस्फोट हुआ था। ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण ऊर्जा के एकत्रित होने पर एक बिन्दु पर ऊर्जा का घनत्व अत्यधिक होगा, इस अवस्था में पुनः उस बिन्दु पर विस्फोट होगा और ब्रह्माण्ड पुनः फैलना प्रारम्भ कर देगा। पुनः एक सीमा तक के विस्तार के बाद यह फिर से संकुचित होगा। यह विस्तार और संकुचन का क्रम नियमित चलता रहेगा। इसी प्रक्रिया को वैज्ञानिकों ने स्पन्दनशील सिद्धान्त का नाम दिया। इस प्रकार स्पन्दनशील का अर्थ सिकुड़ने और फैलने की नियमित प्रक्रिया से है। इस सिद्धान्त को दोलायमान सिद्धान्त अथवा दोलन सिद्धान्त भी कहते हैं।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के विषय में सर्वप्रथम वैज्ञानिक जगत इसे स्थिर मानता था, और इसकी उत्पत्ति और विनाश के बारे में अनादि और अनन्त मानता था। परन्तु खगोलीय अध्ययनों में जब से आधुनिक यन्त्रों का प्रयोग होना प्रारम्भ हुआ तब से इस सिद्धान्त पर संदेह उत्पन्न होने प्रारम्भ हो गए। इसी कड़ी में दूरबीन तथा अन्य तकनीकी यन्त्रों की खोजों के बाद के अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ कि हमारी आकाशगंगा के अतिरिक्त ब्रह्माण्ड में और भी आकाशगंगाएं हैं, ये आकाशगंगाएं बड़ी तेजी से एक दूसरे से दूर जाती हुई दिखाई पड़ती हैं। वैज्ञानिक इस निष्कर्ष तक पहुंचे कि हमारे ब्रह्माण्ड का फैलाव निरन्तर हो रहा है। सन् 1916ई. में आइन्स्टाइन ने ब्रह्माण्ड की सापेक्षता का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। इसे ''जनरल थ्योरी ऑफ रिलेटिविटी''कहते हैं, इसके अनुसार ब्रह्माण्ड में जो गुरुत्वाकर्षण का खिंचाव देखा जाता है उसका कारण है कि प्रत्येक ब्रह्माण्डीय वस्तु अपने मान और आकार के अनुसार दिक्-काल में वक्रता या मरोड़ पैदा कर देती है। इस सिद्धान्त के अनुसार वस्तु द्वारा जो मरोड़ पैदा होती है वह अत्यन्त सूक्ष्म प्रक्रिया है, अतः हमें यह अनुभव नहीं हो पाता तथा यह सिकुड़न और विस्तार दिखाई नहीं देता। इसी के आधार पर अलक्जेंडर फ्रीडमैन ने वर्ष 1922 में अपने

सैद्धान्तिक खोजों के आधार पर यह स्पष्ट किया कि ब्रह्माण्ड स्थिर नहीं है अपितु यह गतिशील है।

इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड के सिकुड़न और प्रसरण की प्रक्रिया करोड़ो वर्षों के अन्तराल में होती है, इसलिए यह शीघ्रफल के रूप में दिखाई नहीं देती। डॉ. एलन संडेज को इस सिद्धान्त का प्रवर्तक माना जाता है। उनका मानना है कि आज से 120 करोड़ वर्ष पहले एक सुपरनोवा महाविस्फोट हुआ था, उस विस्फोट से ब्रह्माण्ड की समस्त ऊर्जा फैलनी प्रारम्भ हुई, तभी से यह ब्रह्माण्ड फैलता जा रहा है। 290 करोड़ वर्ष बाद गुरुत्वाकर्षण बल के कारण इसका विस्तार रुक जाएगा और इसमें संकुचन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाएगी। यह ब्रह्माण्ड संकुचित होते-होते एक अतिसूक्ष्म बिन्दुमय आकार धारण कर लेगा, उसके बाद अत्यन्त गुरुत्वाकर्षण के घनत्व के कारण इसमें पुनः विस्फोट होगा और इसका पुनः फैलाव प्रारम्भ हो जाएगा।

अभ्यास प्रश्न

प्र.1. विस्फोट सिद्धान्त क्या है?

प्र.2. विस्फोट सिद्धान्त का विपरीत सिद्धान्त कौन सा है?

प्र.3. स्पन्दन का क्या अर्थ है?

प्र.4. स्पन्दनशील सिद्धान्त क्या है?

प्र.5. स्पन्दनशील सिद्धान्त में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका किसकी होती है?

प्र.6. ब्रह्माण्ड किसके कारण फैलता है?

प्र.7. ब्रह्माण्ड का संकुचन किसके कारण होता है?

प्र.8. महाविस्फोट क्यों होता है?

प्र.9. स्पन्दनशील सिद्धान्त का दूसरा नाम क्या है?

प्र.10. सापेक्षता का सिद्धान्त किसने दिया?

प्र.11. स्पन्दनशील सिद्धान्त का प्रवर्तक किसे माना जाता है?

प्र.12. ब्रह्माण्ड के प्रसरण तथा सिकुड़न की प्रक्रिया कितने वर्षों के अन्तराल में होती है?

3.4 स्पन्दनशील सिद्धान्त की विशेषताएं

यह सिद्धान्त एक चक्रीय प्रक्रिया के अनुसार परिकल्पित होता है।चक्रीय प्रक्रिया की यही विशेषता है कि इसकी कभी भी समाप्ति नहीं होती, यह एक नियमित प्रक्रिया है। इसके अनुसारब्रह्माण्ड "बिग बैंग" से शुरू होता है और एक सीमित सीमा तक फैलने के बाद सिकुड़ने के साथ ही यह समाप्त भी होता है। बिग-बैंग के बादब्रह्माण्ड तब तक फैलता रहता है, जब तक गुरुत्वाकर्षण शक्ति इसे रोकने के लिए विवश नहीं कर लेती। इसके बाद गुरुत्वाकर्षण शक्ति इसमें संकुचन पैदा करती है और यह सिकुड़ना प्रारम्भ कर देता है। इस प्रकार अन्तिम बिंदु परब्रह्माण्ड तब तक सिकुड़ता है, जब तक कि यह एक अति सूक्ष्म गुरुत्वाकर्षण शक्ति के नियन्त्रण में नहीं आ जाता। गुरुत्वाकर्षण विलक्षणता का यह एक ऐसा अन्तिम बिन्दु है, जहां गुरुत्वाकर्षण बल अनन्त और असीमित हैं। इस अन्तिम बिन्दु तक के संकुचन के बाद फिर से एक नए बड़े विस्फोट के साथ ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति होती है। यह प्रक्रिया एक वृत्ताकार रचना के समान है, जो नियमित रहती है, इसलिए इसे चक्रीय प्रक्रिया के अनुसार परिकल्पित सिद्धान्त भी कहा गया है।

यह सिद्धान्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और अन्त के बारे में वर्तमान में पूर्ण रूप से स्वीकृत सिद्धान्त नहीं है, लेकिन अन्य सिद्धांतों की कुछ कमियों की पूर्ति यह अवश्य

ही करता है। यह सिद्धान्त प्रमुख रूप से तापीय अवस्था की समस्या को हल करता है, जिसके अनुसार माना जाता है कि ब्रह्माण्ड इतने उच्च तापमान पर कैसे शुरू होता है। चक्रीय सिद्धान्तों के अनुसारब्रह्माण्ड में सभी पदार्थ और समस्त ऊर्जा गुरुत्वाकर्षण बल से एक बिन्दु में संकुचित होते हैं तथा पुनः एक बड़े विस्फोट के लिए आवश्यक ऊर्जा पैदा करते है। स्पन्दनशील सिद्धान्त बिग-बैंग सिद्धान्त का ही एक रूपान्तर है, जिसमें ब्रह्माण्ड को विस्तार और संकुचन की क्रमिक अवधियों से गुजरना पड़ता है। इस प्रकार जब संकुचन के बाद ब्रह्माण्ड उच्च घनत्व के एक छोटे से बिन्दु पर केन्द्रित हो जाता है, तब सम्भवतः इसमें विस्फोट होता है, जिसे महाविस्फोट या बिग-बैंग कहा जाता है। इस प्रकारस्पन्दनशील सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड महाविस्फोट के द्वारा फैलता है तथा एक सीमित फैलाव के बाद पुनः संकुचित होता है, यह दोनों ही प्रक्रियाएं अन्तहीन हैं। विद्वानों का मानना है कि इस प्रकार स्पन्दित होने के लिए ब्रह्माण्ड के सम्पूर्ण घनत्व का एक बिन्दु निश्चित होना अनिवार्य है।

3.4.1 ऊर्जा का स्पन्दन

हमारा ब्रह्माण्ड असीम ऊर्जा से युक्त है, इसी ऊर्जा के परिणामस्वरूप ब्रह्माण्ड में सृष्टि होती है। स्पन्दनशील सिद्धान्त के अनुसार माना जाता है कि इस असीम ऊर्जा का कोई एक केन्द्र भी निश्चित ही होगा। वह केन्द्र ही विस्तार और संकुचन की प्रक्रिया को संचालित करता है। स्पन्दनशील सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड विस्फोट की एक अनन्त शृंखला में विस्तार प्राप्त करता है और संकुचित भी होता है। विस्तार और संकुचन का यह स्पन्दन स्वाभाविक रूप ब्रह्माण्ड के आन्तरिक गुणों और ऊर्जा के कारण ही होता है। ब्रह्माण्ड के विकास के केन्द्र में ऊर्जा के रूपान्तरण की एक अन्तहीन प्रक्रिया है, इसलिए ब्रह्माण्ड को किसी बाहरी हस्तक्षेप की भी आवश्यकता नहीं है। मेटागैलेक्सी अर्थात् ब्रह्माण्डीय पदार्थों का समूह एक गतिशील प्रणाली है। कोई भी गतिशील

प्रणाली ऊर्जा के संतुलन से ही स्थिर रहती है और गुरुत्वाकर्षण के बल से वह संचालित होती है। गुरुत्वाकर्षण को भी एक प्रकार की ऊर्जा के रूप में जाना जाता है, जो अपनी ओर खींचती है। यही गुरुत्वाकर्षणीय ऊर्जा ब्रह्माण्ड को भी संतुलित किए हुए है। अतःब्रह्माण्ड का स्पन्दन ऊर्जा की संतुलित प्रक्रिया का परिणाम है।

सैद्धान्तिक रूप से कोई भी महाविस्फोट कम या अधिक शक्तिशाली नहीं हो सकता, उस विस्फोट की ऊर्जा स्थिर है। क्योंकि ब्रह्माण्ड के द्रव्यमान की सम्पूर्ण ऊर्जा एकत्रित होकर ही फटती है। यह ऊर्जा नष्ट नहीं होती अपितु यह ऊर्जा फैलती है। महाविस्फोट के बाद ही सम्पूर्ण ऊर्जा फैलने लगती है, ऊर्जा के इसी फैलने की स्थिति को ब्रह्माण्ड का विस्तार कहा जाता है। सैद्धान्तिक रूप से कोई भी विस्फोट अगले अथवापिछले विस्फोट की तुलना में कम या अधिक शक्तिशाली नहीं हो सकता है, अतः प्रत्येक महाविस्फोट बराबर शक्तिशाली होता है। संकुचन प्रक्रिया के बाद सारी ऊर्जा एकत्रित होकर विस्फोट के रूप में फट जाती है, इसकी एक भी मात्रा नष्ट नहीं हो सकती क्योंकि उसके पास ब्रह्माण्ड से बाहर जाने के लिए कहीं और कोई स्थान नहीं है। यह स्पष्ट रूप से ऊर्जा के संरक्षण और परिवर्तन के मौलिक भौतिक नियम द्वारा निर्धारित होता है। ब्रह्माण्डीय ऊर्जा की न तो उत्पत्ति होती है और न यह ऊर्जा नष्ट होती है। यह ब्रह्माण्ड के विस्तार के साथ-साथ फैलती जाती है तथा संकुचन के साथ ही एकत्रित भी होती है।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में स्थित आकाशगंगाएं, तारे तथा अन्य ब्रह्माण्डीय पिण्ड विस्फोट के बाद फैलना प्रारम्भ करते हैं, परन्तु एक समय बाद जब वे गुरुत्वाकर्षण के बल से संकुचित होते हैं तब सभी पदार्थ तथा ऊर्जा एकत्रित होने लगती है और एक बिन्दु में ढहने लगती है। यह प्रक्रिया भी एक निश्चित परिणाम तक ही चलती है, उसके बाद पुनः एक महाविस्फोट होता है, और उस महाविस्फोट के साथ-साथ नई सृष्टि का

प्रारम्भ होता है। यह ऊर्जा के स्पन्दन का चक्र चलता रहता है। स्पन्दनशील सिद्धान्त विस्फोट सिद्धान्त की पूर्णता का सिद्धान्त है। एक ओर जहां विस्फोट सिद्धान्त विस्फोट के बाद सृष्टि की संरचना की परिकल्पना करता है, वहीं स्पन्दनशील सिद्धान्त फैली हुई ऊर्जा के पुनः एकत्रित होकर पुनः महाविस्फोट होने की परिकल्पना करता है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.13. चक्रीय प्रक्रिया क्या होती है?

प्र.14. स्पन्दनशील सिद्धान्त प्रमुख रूप से किस अवस्था की समस्या को हल करता है?

प्र.15. स्पन्दनशीलता बनी रहने के लिए क्या आवश्यक है?

प्र.16. मेटागैलैक्सी क्या है?

प्र.17. गुरुत्वाकर्षण क्या करता है?

प्र.18. महाविस्फोट के बाद ऊर्जा का क्या होता है?

प्र.19. विस्फोट सिद्धान्त की पूर्णता का सिद्धान्ति क्या है?

प्र.20 विस्फोट सिद्धान्त तथा स्पन्दनशील सिद्धान्त में क्या अन्तर है?

3.4.2 अद्वितीयता की अनन्तता का नियम

स्पन्दनशील सिद्धान्त में ऊर्जा की अद्वितीयता का वर्णन किया गया है। अद्वितीयता की प्रक्रिया के अनुसार यह सिद्धान्त अनन्तता के स्वरूप को धारण करता है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति तथा लय की प्रणाली बहुत जटिल है, इस प्रणाली के तहत स्पन्दनशील सिद्धान्त का ब्रह्माण्डीय विस्तार तथा संकुचन की परिकल्पना अद्वितीय है

क्योंकि प्रत्येक महाविस्फोट के बाद यह प्रक्रिया पुनः दोहराई जाती है। इसके अनुसार प्रत्येक महाविस्फोट के बाद उत्पन्न होने वाले पदार्थ की गुणवत्ता परिवर्तित भी हो सकती है। इसलिए माना जाता है कि इस प्रक्रिया में पदार्थ की गुणवत्ता उसकी ऊर्जा पर निर्भर करती है। जिस प्रकार एक ही परिवार में एक ही डी.एन.ए से उत्पन्न बच्चे अलग-अलग गुणवत्ता के साथ पैदा होते हैं, उसी प्रकार महाविस्फोट के बाद पदार्थों की गुणवत्ता में भी प्रत्येक में भिन्नता अवश्य रहती है।

विशिष्टता की अनन्तता के नियम से यह विशेष प्रकार का निष्कर्ष निकलता है कि प्रत्येक प्राकृतिक पदार्थ अद्वितीय है। कोई भी पदार्थ एक दूसरे के समान शक्तिशाली तथा गुणवत्तायुक्त नहीं हो सकता। इसीलिए ब्रह्माण्ड का प्रत्येक पिण्ड दूसरे पिण्ड से भिन्न है और अद्वितीय है। यह भिन्नता अनन्त और असीमित है। इस अद्वितीयता के अनुसार कोई भी दो प्राकृतिक वस्तुएं समान नहीं हो सकती। जंगल में दो पेड़ एक जैसे नहीं होते। पृथ्वी पर दो या दो से अधिक मनुष्य एक जैसे नहीं होते। उनमें भिन्नता अवश्य होती है। यही भिन्नता ब्रह्माण्ड की ऊर्जा की अद्वितीयता को प्रकाशित करती है।

3.5 स्पन्दन चक्र की अवधि

स्पन्दन चक्र की अवधि के विषय में वैज्ञानिकों का मानना है कि यह चक्र एक निश्चित अवधि तक चलता है। वह निश्चित अवधि पूर्ण होने के बाद विस्तार तथा संकुचन का यह चक्र पुनः महाविस्फोट के साथ प्रारम्भ होता है। आधुनिक युग में आकाशगंगाओं के फैलने की प्रक्रिया धीमी है, इसलिए संभावना जताई गई है कि यह चरण लगभग 12 बिलियन वर्षों तक चलेगा। वर्तमान में हमारी सभ्यता इस चक्र के मध्य के आस-पास है। जितना समय इसके फैलने में लगेगा लगभग उतना ही समय इस आकाशगंगा के संकुचन में भी लगेगा। इस प्रकार से वैज्ञानिकों का अनुमान है कि विस्तार और संकुचन का यह चक्र लगभग 50 अरब पृथ्वी वर्षों के बराबर होगा।

3.5.1 स्पन्दनशील सिद्धान्त तथा भारतीय सृष्टिविज्ञान

स्पन्दनशील सिद्धान्त आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा ब्रह्माण्ड के विस्तार और संकुचन को परिभाषित करने के लिए प्रस्तुत किया गया है। अन्य अर्थों में कहें तो यह सिद्धान्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और विनाश को परिभाषित करता है। ब्रह्माण्ड तथा इस सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति होती है तथा यह सृष्टि नष्ट भी होती है। इस सिद्धान्त को हमारे प्राचीन ऋषियों ने स्पष्ट भी किया है। प्राचीन भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा परमाणुओं के संयोग से सृष्टि को परिभाषित किया गया है। भारतीय दार्शनिक सिद्धान्तों के अनुसार पदार्थ का परमाणुरूप स्थिर है तथा वह कभी भी नष्ट नहीं होता। यही परमाणु अन्य परमाणु के साथ मिलकर सृष्टि करता है तथा प्रलय की अवस्था में स्थूल स्वरूप से परमाणुरूप में पुनः परिवर्तित हो जाता है। परमाणु के इसी स्थूल स्वरूप धारण करने को हम परमाणु का विस्तार तथा पुनः परमाणुरूप में परिवर्तित होने को संकुचन की प्रक्रिया के माध्यम से स्पष्ट कर सकते हैं।

हमारे प्राचीन ऋषियों ने ब्रह्माण्ड को स्थिर, अनादि और अनन्त नहीं माना। उनके अनुसार यह ब्रह्माण्ड एक असीमित शक्ति के द्वारा उत्पन्न होता है और नष्ट भी होता है। इसीलिए भारतीय शास्त्रों में प्रलय की परिकल्पना हमें प्राप्त होती है। ब्रह्माण्ड की इस विस्तारित तथा संकुचित होने की प्रक्रिया को प्रलय सिद्धान्त द्वारा आसानी से समझा जा सकता है। भारतीय ग्रन्थों में वर्णन मिलता है कि यह सब उत्पत्ति और प्रलय का संचालन परमात्मा करता है। परमात्मा के ही संकल्प मात्र से सृष्टि उत्पन्न होती है तथा नष्ट भी होती है। तैत्तिरीयोपनिषद् में वर्णन मिलता है कि सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ, उसके बाद क्रमशः वायु-अग्नि-जल-पृथ्वी उत्पन्न हुए –**एतस्मादात्मन आकाश सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी। पृथिव्या औषधयः। ओषधेभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः।**

अर्थात् सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ। आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी, पृथिवी से औषधियां, औषधियों से अन्न तथा अन्न से पुरुष उत्पन्न हुआ। इस प्रकार इस ऋचा में सर्वशक्तिशाली भौतिक रचना आकाश की मानी गई है। इस प्रकार समग्र सृष्टि की रचना होती है, परन्तु यह सृष्टि अनन्त नहीं है, यह प्रलय अवस्था में समाप्त भी होती है। सृष्टि के इस प्रलय के प्राकृतप्रलय कहा जाता है, इसी को महाप्रलय भी कहते हैं। पौराणिक वर्णनों के अनुसार सृष्टि का रचनाकार ब्रह्मा है, लेकिन यह ब्रह्मा भी अनन्त नहीं है। एक निश्चित समय बाद इसकी आयु पूर्ण हो जाती है। परन्तु जब ब्रह्मा की आयु पूर्ण होती है तब यह सृष्टि भी प्रलय को प्राप्त होती है।

इस महाप्रलय में सभी प्रकार के पदार्थ अपने नित्य परमाणु स्वरूप के प्राप्त कर क्रमशः विलय होते हैं। इस प्रक्रिया में पृथिवी का परमाणुरूप जल में, जल का परमाणुरूप अग्नि में, अग्नि का परमाणुरूप वायु में, वायु का परमाणुरूप आकाश में क्रमशः विलीन हो जाते हैं। यही परमाणुओं की विलीन होने की प्रक्रिया को हम ब्रह्माण्ड का संकुचन भी कह सकते हैं। इसके बाद पुनः नवीन सृष्टि की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। भारतीय विज्ञान प्रत्येक उत्पन्न पदार्थ की मृत्यु को निश्चित मानता है और जिसकी मृत्यु होती है उसकी उत्पत्ति भी निश्चित ही है। अतः उत्पत्ति और लय का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णन मिलता है कि –

जातस्य हि ध्रुवं मृत्युः ध्रुवं जन्म मृतस्य च।

अर्थात् जो पैदा हुआ है उसकी मृत्यु निश्चित है, और जो मर गया है वह पुनः जन्मता है। इस प्रकार स्पन्दनशील सिद्धान्त की साम्यता भारतीय सृष्टिविज्ञान से साम्यता अवश्य रखती है। उत्पत्ति और प्रलय का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। यही स्पन्दनशील सिद्धान्त है। भास्कराचार्य बीजगणित नामक पुस्तक में इसी सिद्धान्त को

खहर राशि (जिसमें शून्य भाजक होता है) में अविकारत्व को दृष्टान्त के रूप मेंइस प्रकार कहते हैं-

अस्मिन् विकारः खहरे न राशावपि प्रविष्टेष्वपि निःसृतेषु।

बहुष्वपि स्याल्लयसृष्टिकालेऽनन्तेऽच्युते भूतगणेषु यद्वत्।।

अर्थात् खहर राशि (जिसमें हर शून्य हो) में किसी राशि को जोडने या घटाने से शून्य हर में उसी प्रकार कोई विकार नहीं होता, जिस प्रकार प्रलय काल में भगवान अच्युत के शरीर में अनेक जीव प्रविष्ट हो जाते हैं तथा सृष्टिकाल में उनके शरीर से अनेक जीव निकलते हैं तथापि उनके शरीर में कोई विकार नहीं होता है, अर्थात् ज्यों का त्यों रहता है। यदि भगवान को मूल बिन्दु या परमाणु समझें, तो स्पन्दनशील सिद्धान्त से साम्यता मिलती है।उत्पत्ति और प्रलय का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है, यही स्पन्दनशील सिद्धान्त है।

अभ्यास प्रश्न

प्र.21. अद्वितीयता का वर्णन किस सिद्धान्त में किया गया है?

प्र.22. स्पन्दनशील सिद्धान्त के अनुसार पदार्थ की गुणवत्ता किस पर निर्भर है?

प्र.23. विशिष्टता की अनन्तता से क्या निष्कर्ष निकलता है?

प्र.24. ब्रह्माण्ड की ऊर्जा की अद्वितीयता क्या प्रकाशित करती है?

प्र.25. स्पन्दन चक्र की अवधि के विषय में वैज्ञानिकों का क्या मानना है?

प्र.26. भारतीय सृष्टिविज्ञान के अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और विनाश को कैसे दर्शाया गया है?

प्र.27. भारतीय दार्शनिकों के अनुसार परमाणु क्या है?

प्र.28. स्पन्दनशील सिद्धान्त को प्रलय सिद्धान्त से कैसे समझा जा सकता है?

प्र.29. सृष्टि के प्रलय को कौन सा प्रलय कहा जाता है?

प्र.30. पौराणिक वर्णनों के अनुसार सृष्टि का रचनाकार कौन है?

प्र.31. महाप्रलय में क्या होता है?

प्र.32. महाप्रलय की प्रक्रिया क्या है?

3.6 उपसंहार

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के संदर्भ में प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल पर्यन्त तक इस पर लगातार शोध हो रहे हैं। उन्हीं शोधों पर आधारित सिद्धान्त वैज्ञानिकों ने हमारे समक्ष प्रस्तुत भी किए हैं। इन सिद्धान्तों में स्पन्दनशील सिद्धान्त अत्यन्त प्रसिद्ध सिद्धान्त है। भारतीय ज्ञान परम्परा में देखें तो उत्पत्ति और नष्ट होने की प्रक्रिया को भारतीय विचारक मानते हैं। इसी उत्पत्ति और नष्ट होने की परम्परा को ब्रह्माण्ड पर भी लागू किया जाता है। इस प्रकार भारतीय मनीषियों का मानना है कि यह ब्रह्माण्ड भी नष्ट होता है, ब्रह्माण्ड के इस नष्ट होने की प्रक्रिया को प्रलय कहा जाता है। अतः आधुनिक स्पन्दनशील सिद्धान्त और भारतीय सृष्टिविज्ञान में साम्यता हमें मिलती है। आधुनिक वैज्ञानिकों का स्पन्दनशील सिद्धान्त भारतीय सृष्टिविज्ञान से प्रभावित है।

3.7 कठिन शब्दार्थ

जिज्ञासा	- जानने की इच्छा
समुदाय	- समूह, वर्ग
असीमित	- सीमा से रहित

क्षमता	- योग्यता, सामर्थ्य
सम्प्रेषण	- अच्छी तरह भेजना, संवाद
समग्रता	- व्यापकता
परिकल्पना	- कल्पना
बुनियाद	- मूल, जड़
संचालन	- चलाना
प्रत्युत्तर	- उत्तर देना
अनादि	- जिसका कोई आरम्भ न हो
अनन्त	- जिसका कोई अन्त न हो
कम्पन	- गतिशीलता, अस्थिरता
संकुचन	- संकीर्ण होना
विस्तार	- फैलाव
दोलन	- कम्पन होना, अस्थिरता
यन्त्र	- मशीन
दूरबीन	- दूर तक देखने वाला यन्त्र
दिक्-काल	- दिशा और समय
गतिशील	- निरन्तरता का होना
प्रवर्तक	- जनक, प्रस्तुत करने वाला

चक्रीय - वृत्ताकार, गोलाकार

विलक्षणता - विशेषता

असीमित - जिसकी कोई सीमा न हो

तापमान - ताप का स्तर

क्रमिक - क्रमशः

भौतिक - पञ्चमहाभूतों से संबन्धित

एकत्रित - इकट्ठा

अद्वितीय - जिसका कोई और विकल्प न हो, अतुलनीय

गुणवत्ता - गुणों की मात्रा

विशिष्टता - विशेषता

प्राकृतिक - प्रकृति द्वारा प्रदत्त

सृष्टिविज्ञान - सृष्टि का विज्ञान

प्रलय - मिल जाना, नष्ट होना

परमात्मा - ईश्वर

पौराणिक - पुराणों से संबन्धित

रचनाकार - रचने वाला

परमाणु - अत्यन्त सूक्ष्म तत्त्व, जो नष्ट नहीं होता

विलय - मिल जाना

साम्यता - समानता

आधुनिक - वर्तमान

समक्ष - सामने

विचारक - विचार करने वाले लोग

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति वर्षों पहले एक सुपरनोवा महाविस्फोट से हुई थी, तभी से यह ब्रह्माण्ड लगातार अपनी सीमा का विस्तार कर रहा है।
2. विस्फोट सिद्धान्त का विपरीत सिद्धान्त स्थिरदशा सिद्धान्त है।
3. किसी प्रकार के कम्पन को अथवा किसी पदार्थ के अस्थिर रहने की प्रक्रिया को स्पन्दन कहते हैं।
4. हमारा ब्रह्माण्ड विस्तार और संकुचन की नियमित प्रक्रिया में रहता है अतः ब्रह्माण्ड के इसी विस्तार तथा संकुचन होने की प्रक्रिया के आधार पर ब्रह्माण्ड विज्ञानियों ने जो सिद्धान्त प्रस्तुत किया उसे स्पन्दनशील सिद्धान्त कहते हैं।
5. स्पन्दनशील सिद्धान्त में गुरुत्वाकर्षण ऊर्जा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।
6. ब्रह्माण्ड महाविस्फोट के कारण फैलता है।
7. ब्रह्माण्ड का संकुचन गुरुत्वाकर्षण बल के कारण होता है।
8. ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण ऊर्जा के एकत्रित होने पर एक बिन्दु पर ऊर्जा का घनत्व अत्यधिक होने के कारण उस बिन्दु पर विस्फोट होता है।
9. स्पन्दनशील सिद्धान्त का दूसरा नाम दोलन सिद्धान्त या दोलायमान सिद्धान्त है।
10. सापेक्षता का सिद्धान्त अल्बर्ट आईन्सटाइन ने दिया।

11. स्पन्दनशील सिद्धान्त का प्रवर्तक एलन संडेज को माना जाता है।

12. ब्रह्माण्ड के प्रसारण तथा सिकुड़न की प्रक्रिया करोड़ो वर्षों के अन्तराल में होती है।

13. चक्रीय प्रक्रियाएक वृत्ताकार प्रक्रिया है इसकी विशेषता है कि इस प्रक्रिया की कभी भी समाप्ति नहीं होती।

14. स्पन्दनशील सिद्धान्त प्रमुख रूप से तापीय अवस्था की समस्या को हल करता है, जिसके अनुसार माना जाता है कि ब्रह्माण्ड इतने उच्च तापमान पर कैसे शुरू होता है।

15. स्पन्दनशीलता बनी रहने के लिए ब्रह्माण्ड के सम्पूर्ण घनत्व का एक बिन्दु निश्चित होना अनिवार्य है।

16. मेटागैलेक्सी अर्थात् ब्रह्माण्डीय पदार्थों का समूह एक गतिशील प्रणाली है, कोई भी गतिशील प्रणाली ऊर्जा के संतुलन से ही स्थिर रहती है, और गुरुत्वाकर्षण के बल से वह संचालित होती है।

17. गुरुत्वाकर्षणीय ऊर्जा ब्रह्माण्ड को भी संतुलित किए हुए है। अतःब्रह्माण्ड का स्पंदन ऊर्जा की संतुलित प्रक्रिया का परिणाम है।

18. महाविस्फोट के बाद ब्रह्माण्डीय ऊर्जा की न तो उत्पत्ति होती है, और न यह ऊर्जा नष्ट होती है। यह ब्रह्माण्ड के विस्तार के साथ-साथ फैलती जाती है, तथा संकुचन के साथ ही एकत्रित भी होती है।

19. विस्फोट सिद्धान्त की पूर्णता का सिद्धान्त स्पन्दनशील सिद्धान्त है।

20. विस्फोट सिद्धान्त विस्फोट के बाद सृष्टि की संरचना की परिकल्पना करता है, तथा स्पन्दनशील सिद्धान्त फैली हुई ऊर्जा के पुनः एकत्रित होकर पुनः महाविस्फोट होने की परिकल्पना करता है।

21. स्पन्दनशील सिद्धान्त में ऊर्जा की अद्वितीयता का वर्णन किया गया है।

22. स्पन्दनशील सिद्धान्त के अनुसार पदार्थ की गुणवत्ता उसकी ऊर्जा पर निर्भर करती है।

23. विशिष्टता की अनंतता के नियम से यह विशेष प्रकार का निष्कर्ष निकलता है कि प्रत्येक प्राकृतिक पदार्थ अद्वितीय है। कोई भी पदार्थ एक दूसरे के समान शक्तिशाली तथा गुणवत्तायुक्त नहीं हो सकता।

24. ब्रह्माण्ड की ऊर्जा की अद्वितीयता के अनुसार कोई भी दो प्राकृतिक वस्तुएं समान नहीं हो सकती। जंगल में दो पेड़ एक जैसे नहीं होते, पृथ्वी पर दो या दो से अधिक मनुष्य एक जैसे नहीं होते। उनमें भिन्नता अवश्य होती है, यही भिन्नता ब्रह्माण्ड की ऊर्जा की अद्वितीयता को प्रकाशित करती है।

25. स्पन्दन चक्र की अवधि के विषय में वैज्ञानिकों का मानना है कि यह चक्र एक निश्चित अवधि तक चलता है। वह निश्चित अवधि पूर्ण होने के बाद विस्तार तथा संकुचन का यह चक्र पुनः महाविस्फोट के साथ प्रारम्भ होता है।

26. भारतीय सृष्टिविज्ञान के अनुसार ब्रह्माण्ड तथा इस सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति होती है तथा यह सृष्टि नष्ट भी होती है।

27. भारतीय दार्शनिक सिद्धान्तों के अनुसार पदार्थ का परमाणुरूप स्थिर है, तथा वह कभी भी नष्ट नहीं होता। यही परमाणु अन्य परमाणु के साथ मिलकर सृष्टि करता है, तथा प्रलय की अवस्था में स्थूल स्वरूप से परमाणुरूप में पुनः परिवर्तित हो जाता है।

28. ब्रह्माण्ड की इस विस्तारित तथा संकुचित होने की प्रक्रिया को प्रलय सिद्धान्त द्वारा आसानी से समझा जा सकता है। भारतीय ग्रन्थों में वर्णन मिलता है कि यह सब उत्पत्ति और प्रलय का संचालन परमात्मा करता है।

29. सृष्टि के इस प्रलय के प्राकृतप्रलय कहा जाता है, इसी को महाप्रलय भी कहते हैं।

30. पौराणिक वर्णनों के अनुसार सृष्टि का रचनाकार ब्रह्मा है, लेकिन यह ब्रह्मा भी अनन्त नहीं है।

31. इस महाप्रलय में सभी प्रकार के पदार्थ अपने नित्य परमाणु स्वरूप के प्राप्त कर क्रमशः विलय होते हैं।

32. इस प्रक्रिया में पृथिवी का परमाणुरूप जल में, जल का परमाणुरूप अग्नि में, अग्नि का परमाणुरूप वायु में, वायु का परमाणुरूप आकाश में क्रमशः विलीन हो जाते हैं।

3.9 व्याख्यात्मक प्रश्न

प्र.1. स्पन्दनशील सिद्धान्त को स्पष्ट करें।

प्र.2. स्पन्दनशील सिद्धान्त की विशेषताए बताए।

प्र.3. स्पन्दनशील सिद्धान्त के अनुसार ऊर्जा के स्पन्दन को स्पष्ट करे।

प्र.4. स्पन्दन चक्र पर निबन्ध लिखें।

प्र.5. स्पन्दनशील सिद्धान्त तथा भारतीय सृष्टिविज्ञान की तुलना करें।

3.10 सहायक/सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2016

2. खगोलीय पिण्डों का परिक्रमण, कोपर्निकस, व्याख्या, तिवारी, श्रवणकुमार एवं पाण्डेय रमाकान्त, वाराणसी, हिन्दी प्रकाशन समिति, सन् 1972
3. गोलपरिभाषा, झा, सीताराम, दरभङ्गा, बिहार, श्रीसीताराम पुस्तकालय, संवत् 2027
4. भारतीय वृष्टिविज्ञान परिशीलन, त्रिपाठी, देवीप्रसाद,दिल्ली, श्रीला.ब.शा.रा.सं.विद्यापीठ,सन् 2015
5. भारतीय दर्शन, उपाध्याय, बलदेव, वाराणसी, चौखम्बा ओरिएण्टिया, सन् *1986*
6. भुवनकोश विमर्श, प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी, दिल्ली, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स, वर्ष 2004
7. बीजगणित, भास्कराचार्य, व्याख्याकार – झा, अच्युतानन्द, वाराणसी, चौखम्बा संस्कृत सीरिज आफिस, विद्याविलास प्रेस, सन् 1949

ईकाई *4*– प्राचीन एव आधुनिक सिद्धान्तों की तुलना

4.*1* प्रस्तावना
***4.2* उद्देश्य**
***4.3* ब्रह्माण्डोत्पत्ति के भारतीय सिद्धान्त**
***4.3.1* ब्रह्मा द्वारा सृष्टि**
***4.3.2* विराट्पुरुष द्वारा सृष्टि**
***4.3.3* विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि**
***4.3.4* प्रजापति द्वारा सृष्टि**
***4.4* ब्रह्माण्डोत्पत्ति के आधुनिक सिद्धान्त**
***4..4.1* स्थिरदशा सिद्धान्त**
***4..4.2* विस्फोट सिद्धान्त**
***4..4.3* स्पन्दनशील सिद्धान्त**
***4.5* स्थिरदशा सिद्धान्त और भारतीय सृष्टि विज्ञान**
***4.6* विस्फोट सिद्धान्त और भारतीय सृष्टि विज्ञान**
***4.7* स्पन्दनशील सिद्धान्त और भारतीय सृष्टि विज्ञान**
***4.8* सारांश**
***4.9* कठिन शब्द**
***4.10* अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**
***4.11* व्याख्यात्मक प्रश्न**
***4.12* सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थसूची**

4.1 प्रस्तावना

हम कौन हैं? हमारी उत्पत्ति का कारण क्या है? और हमारी उत्पत्ति का उद्देश्य क्या है? इन सभी जिज्ञासाओं को लेकर हमारे पूर्वजों ने लगातार विमर्श किया और सृष्टि के गूढतम रहस्यों की खोज करने के लिए कुछ सिद्धान्त भी प्रस्तुत किए।उन्हीं सिद्धान्तों के अध्ययन के आधार पर हम सृष्टि के गूढतम रहस्यों को समझने का प्रयास करते हैं। प्राचीन भारतीय सभ्यताओं में वैदिक सभ्यता सर्वप्राचीन मानी गई है, उसके बाद उपनिषदकाल, तत्पश्चात् पौराणिक काल के ग्रन्थों में सृष्टि की उत्पत्ति के अनेकों विचार हमें प्राप्त होते हैं। सृष्टि की रचना क्यों, कब और कैसे हुई?यह प्रश्न सदैव मानव जाति के लिए एक अबूझ पहेली बना रहा है। इसके अतिरिक्त इस प्रश्न की विशेषता तथा महत्व इस बात से भी है कि विज्ञान तथा धर्म, विचार पद्धतियां समान रूप से इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए उत्सुक तथा तत्पर दिखाई पड़ती हैं।ब्रह्माण्ड को देखने और समझने के बाद वैज्ञानिकों की इसके प्रति जिज्ञासा और गहरी होती चली गई। उनका मानना है कियदिब्रह्माण्डहैतोइसकाकोईरचयिताभीहोगा। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के प्रति जितनी जिज्ञासा वर्तमान में है, उतनी ही वैदिक काल में भी रही है। वैदिक साहित्य के आधार पर स्पष्ट होता हैं कि वैदिक काल में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्तों पर चर्चा एवं विमर्श व्यापकता में हुआ था। इसका प्रमाण वैदिक ऋचाओं में ब्रह्माण्डोत्पत्ति के सिद्धान्त हैं। भारतीय वाङ्मय के आधार पर ब्रह्माण्डोपत्ति के प्रमुख चार सिद्धान्त हमें प्राप्त होते हैं। जिनमें विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि, ब्रह्मा द्वारा सृष्टि, प्रजापति द्वारा सृष्टि तथा विराट् पुरुष द्वारा सृष्टि का वर्णन हमें मिलता है।

प्राचीन साहित्य का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि वैदिककालीन सृष्टिविज्ञान ही आगे जाकर तन्त्र तथा पौराणिक ग्रन्थों में विस्तार प्राप्त करते हैं। मत्स्यपुराणमें वर्णन मिलता है कि सृष्टि की रचना एक सुनहरे गर्भ में ब्रह्मा के प्रवेश कर

जाने के परिणामस्वरूप हुई, इसी गर्भ को हिरण्यगर्भ की संज्ञा दी गई है। सांख्य दर्शन सृष्टि की रचना को पुरुष तथा प्रकृति नामक दो शाश्वत तत्वों के आधार पर स्पष्ट करने का प्रयास करता है। इसके अनुसार पुरुष शुद्ध चेतन स्वरूप है तथा प्रकृति सत्व-रज-तम नामक त्रिगुणों से युक्त है। सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व प्रकृति के तीनों गुण साम्यावस्था में रहते हैंतथा एक सन्तुलन की स्थिति में शान्त अवस्था में रहते हैं, परन्तु सृष्टि के उत्पन्न होते ही इन गुणों में विकार उत्पन्न हो जाता है और ये तीनों गुण मिलकर सृष्टि की रचना करते हैं। सृष्टि की उत्पत्ति से सम्बन्धित ये सभी सिद्धान्त वैदिक वाङ्मय में बीजरूप में प्राप्त होते हैं।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति से जुड़े प्रश्न तथा उनके उत्तरों पर विचार करने के पश्चात् शायद हम इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि ये प्रश्न मानव बुद्धि तथा उसकी अथाह सम्प्रेषण क्षमताओं से उपजते हैं। इन प्रश्नों का कोई भी उत्तर अपने साथ अनेक प्रश्नों को साथ ले आता है जिनका समग्रता में कोई संतोषजनक उत्तर देना लगभग असंभव-सा दिखता है।आधुनिक विज्ञान भी ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में विस्तार से बात करता है, वर्तमान में आधुनिक खगोलविदों द्वारा तीन प्रमुख सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया गया है। ये विस्फोट सिद्धान्त, स्थिरदशा सिद्धान्त तथा स्पन्दनशील सिद्धान्त हैं। इन सभी के अध्ययन के आधार पर इस अध्याय में हम आधुनिक और प्राचीन सिद्धान्तों की तुलना करेंगे।

4.2 अध्ययन का उद्देश्य

इस अध्याय में वर्णित विषयों के अध्ययन से हम निम्न विषयों को जान सकेंगे।

- ❖ सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में प्राचीन सिद्धान्तों का अध्ययन करेंगे।
- ❖ प्राचीन तथा आधुनिक सिद्धान्तों को समझेंगे।

❖ प्राचीन तथा आधुनिक सिद्धान्तों का तुलनात्मक अध्ययन करेंगे।

❖ सृष्टि के गूढतम रहस्यों को समझने का प्रयास करेंगे।

4.3 ब्रह्माण्डोत्पत्ति के भारतीय सिद्धान्त

तैत्तिरीय उपनिषदके अनुसार सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ। पश्चात् आकाश से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी, पृथिवी से औषधियां, औषधियों से अन्न, अन्न से पुरुष उत्पन्न हुआ। यही क्रम प्रायः संस्कृत साहित्य के अन्य वैज्ञानिक तथा दार्शनिक ग्रन्थों में भी मिलता है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु एवं आकाश ये पञ्चमहाभूत सृष्टि की उत्पत्ति का मूल माने गए हैं। सत्त्व, रज और तम इन तीन गुणों की साम्यावस्था का नाम प्रकृति है, इन तीन गुणों के आपसी सम्मेलन से प्रकृति में विकार उत्पन्न होता है, यही विकार सृष्टि कहलाती है। ये सर्वप्रथम पञ्चमहाभूतों में परिणत होकर समग्र सृष्टि का सृजन करते हैं। यही पञ्चमहाभूत सम्पूर्ण भारतीय दार्शनिक परम्परा में सृष्टि प्रक्रिया के प्रमुख सिद्धान्त भी हैं। सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्वमीमांसा तथा वेदान्त ये छः वैदिक और बौद्ध, जैन तथा चार्वाक् आदि अवैदिक दर्शन, सभी इन पञ्चमहाभूतों पर विचार अवश्य ही करते हैं। वैदिक ब्रह्माण्डोत्पत्ति सिद्धान्त का विस्तृत वर्णन वेदान्त दर्शन में सृष्टि के सात आवरणों के माध्यम से मिलता है, जिसे दशाङ्गुलन्याय नाम से भी जाना जाता है। इसके अनुसार पृथ्वी से दशगुना जल, जल से दशगुना अग्नि, अग्नि से दशगुना वायु, वायु से दशगुना आकाश, आकाश से दशगुना अहंकार, अहंकार से दशगुना महत्तत्त्व, महत्तत्त्व से दशगुना मूलप्रकृति और यह मूलप्रकृति भगवान के एक पाद में है। उपर्युक्त परिकल्पनाओं के अतिरिक्त भी वैदिक साहित्य में अन्य सिद्धान्त प्रमुखता से मिलते हैं। पुरुष सूक्त तथा नासदीय सूक्त ये दोनों सृष्टि विषयक प्रसिद्ध वैदिक सूक्त हैं तथा ये ब्रह्माण्डोत्पत्ति सिद्धान्त को विस्तार से परिभाषित करते हैं। नासदीय सूक्त सृष्टि से पूर्व के पक्षों पर ध्यानाकर्षित करता है तथा

यह सूक्त वैदिक चिन्तन की उस पराकाष्ठा को दर्शाता है जिसमें सृष्टि के कारण विद्यमान हैं।

वैदिक तथा पौराणिक वाङ्मय के अध्ययन के आधार पर स्पष्ट होता है कि भारतीय साहित्य वाङ्मय में ब्रह्माण्डोत्पत्ति का वर्णन पर्याप्त मात्रा में हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के जो प्रमाण प्रायः प्राप्त होते हैं, उन सभी प्रमाणों के विमर्श के आधार पर ब्रह्माण्ड एवं उसकी उत्पत्ति को मुख्य चार सिद्धान्तों के द्वारा प्रतिपादित किया जा सकता है। ''भुवनकोशविमर्श'' नामक पुस्तक में प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी जी ने ब्रह्माण्डोत्पत्ति के विषय में इन सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया है। वे सिद्धान्त निम्न हैं –

5. ब्रह्मा द्वारा सृष्टि
6. विराट्पुरुष द्वारा सृष्टि
7. विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि
8. प्रजापति द्वारा सृष्टि

4.3.1 ब्रह्मा द्वारा सृष्टि

नासदीयसूक्त में वर्णन मिलता है कि सृष्टि से पूर्व कुछ भी नहीं था पश्चात् स्वयमेव शुद्धचैतन्य परब्रह्म की सत्ता उत्पन्न हुई। इसी परब्रह्म ने संकल्पमात्र से सृष्टि की रचना की। सृष्टिरचना में सर्वप्रथम सत्य की उत्पत्ति हुई तत्पश्चात् क्रमशः आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी उत्पन्न हुए। ब्रह्मा का वर्णन श्रीमद्भागवतमहापुराण में भी प्राप्त होता है। श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवान विष्णु के मन में सृष्टि की जिज्ञासा उत्पन्न हुई। तत्पश्चात् भगवान विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। इसी ब्रह्मा ने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की। ब्रह्माण्डपुराण के अनुसार ब्रह्मा ने सर्वप्रथम हिरण्याण्ड को उत्पन्न किया, इस

हिरण्याण्ड का आवरण जल था। जल का तेज, तेज का वायु, वायु का आकाश क्रमशः आवरण थे, इन पञ्चमहाभूतों का आवरण महत्तत्व था, तथा महत्तत्त्व अव्यक्त से आवृत्त था। कुछ इसी प्रकार का वर्णन तैत्तिरीयोपनिषद् में भी मिलता है। पौराणिक साहित्य देखने पर हमें प्राप्त होता है कि ब्रह्मा इस सम्पूर्ण सृष्टि का कर्ता है। पौराणिक साहित्य में ब्रह्मा, विष्णु और महेश इन त्रिदेवों की कल्पना इसी सन्दर्भ में की गई है। त्रिदेवकल्पना में सत्व-रज-तम इन तीन गुणों के अनुरूप ब्रह्मा रजोगुणयुक्त होकर विश्व का सृजन करता है, विष्णु सत्त्वगुणसम्पन्न होकर होकर सृष्टि का पोषण करते हैं तथा शिव तमोगुणयुक्त स्वरूप धारण कर सृष्टि का नाश करते हैं। यहाँ ब्रह्मा को सृष्टि का कर्ता, विष्णु को पालनकर्ता तथा शिव को संहारकर्ता के रूप में रखा गया है। पौराणिक साहित्य के अनुसार प्रायः ब्रह्मा ही सृष्टिकर्ता हैं, उन्हीं से यह सृष्टि उत्पन्न हुई है।

4.3.2 विराट्पुरुष द्वारा सृष्टि

संस्कृत साहित्य परम्परा में विराट्पुरुष का वर्णन अनेक स्थानों पर मिलता है। सर्वप्रथम ऋग्वेद के पुरुषसूक्त में विराट्पुरुष का वर्णन मिलता है –**"पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्"**। इस प्रकार ऋग्वेद में विराट्पुरुष के सर्वकालत्व तथा सर्वव्यापकत्व का वर्णन मिलता है। विराट्पुरुष का वर्णन श्रीमद्भगवद्गीता के एकादश अध्याय में भी प्राप्त होता है। इसी विराट्पुरुष से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ। इसी ब्रह्माण्ड में भूर्भुवादि चतुर्दशलोक, उन लोकों में अनेकों सौर-परिवार, उन सौर परिवारों में अनेकों ग्रह-उपग्रह, उनमें अनेकों सृष्टियां तथा उनमें अनेक प्राणी फिर जीव और अजीव सहित समस्त चराचर जगत् की रचना हुई। वैदिक साहित्य में विराट्पुरुष को "सहस्रशीर्षा पुरुष" कहते हैं, अर्थात् सहस्रों सिरों वाला पुरुष। विराट्पुरुष के सिर, पैर, भुजाएं आदि अंग सहस्रों की संख्या में हैं, इसी विराट् पुरुष से समस्त सृष्टि उत्पन्न होती है तथा इसी में समाहित हो जाती है। यह विराट्पुरुष सर्वव्यापक है और तीनों कालों का

नियन्ता भी है। ऋग्वेद का पुरुषसूक्त इसी विराट् पुरुष का विस्तार से वर्णन करता है, यह विराट् पुरुष एक से अनेक के रूप में सृष्टि का विस्तार करता है। पुरुषसूक्त के अनुसार समस्त द्यौ, आकाश, दिशाएं, जीव जगत् इसी विराट्पुरुष द्वारा उत्पन्न हैं।

4.3.3 विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि

"विश्वेषु कर्म व्यापारो यस्य स विश्वकर्मा" अर्थात् विश्व का सृजन करना जिसका कार्य है वही विश्वकर्मा है। विश्वकर्मा को पौराणिक साहित्य में सृजनकर्ता कहा गया है। विश्वकर्मा का अर्थ ही विश्व का कर्ता होता है। वैदिक साहित्य में स्पष्ट रूप से उल्लेख मिलता है कि यह सम्पूर्ण सृष्टि परमेश्वर द्वारा निर्मित हुई है। इसी परमेश्वर के गुणों की संज्ञा देवता नाम से प्रसिद्ध है। ये देवता ही परमेश्वर की आज्ञा से सृष्टि करते हैं। विश्वकर्मा, सविता, इन्द्र, विष्णु, वरुण आदि देवता परमेश्वर की आज्ञा से विभिन्न कार्यों का संपादन करते हैं। इन्हीं देवताओं में से एक विश्वकर्मा भी हैं।

अथर्ववेद का उपवेद स्थापत्यवेद है। स्थापत्य साहित्य में विश्वकर्मा प्रमुख आचार्य के रूप में भारतीय ज्ञानाकाश में सूर्य की भाँति विद्यमान हैं। स्थापत्यशास्त्र के अनुसार विश्वकर्मा ही सृष्टि के निर्माता हैं, इस सम्पूर्ण चराचर जगत की उत्पत्ति विश्वकर्मा द्वारा हुई है। स्थापत्यशास्त्र वर्तमान में वास्तुशास्त्र के नाम से भी जाना जाता है। अपराजितपृच्छा, समराङ्गणसूत्रधार आदि वास्तुशास्त्रीय प्रमुख ग्रन्थों में विश्वकर्मा को ही सृष्टिनिर्माता के रूप में रखा गया है। वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में विश्वकर्मा की चर्चा विस्तार से की गई है परन्तु इस विचार का बीज मुख्य रूप से वैदिक साहित्य में ही हमें दृष्टिगोचर होता है।

4.3.4 प्रजापति द्वारा सृष्टि

प्रजा के पति अर्थात् प्रजा के स्वामी को प्रजापति कहा गया। सर्वप्रथम ऋग्वेद में प्रजापति का वर्णन प्राप्त होता है - **"हिरण्यगर्भः समवर्ततााग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्"** अर्थात् परमात्मा से सर्वप्रथम प्रजापति उत्पन्न हुए और वे उत्पन्न होते ही सभी लोकों के स्वामी बन गए। यही प्रजापति वैदिक श्रुतियों में हिरण्यगर्भ नाम से भी प्रसिद्ध हुए। पौराणिक साहित्य में प्रजापति को ब्रह्मा की पहली उत्पत्ति मानी जाती है, आगे चलकर यही प्रजापति विभिन्न प्रकार की सृष्टियों का सृजन करते हैं। महाभारत के मोक्षधर्म में इक्कीस तथाहरिवंशपुराण में तेरह प्रजापतियों का वर्णन प्राप्त होता है, इसके अनुसार पितामह ब्रह्मा ने सर्वप्रथम लोकों के कर्ता प्रजापतियों का सृजन किया तत्पश्चात् इन प्रजापतियों ने लोकों की रक्षा की और नई सृष्टि उत्पन्न की।

4.4 ब्रह्माण्डोत्पत्ति के आधुनिक सिद्धान्त

ग्रहों, तारों, आकाशगंगाओं, जीव-जगत्, पदार्थ और ऊर्जा के अन्य सभी रूप ब्रह्माण्ड में समाहित हैं। सर्वप्रथम आधुनिक खगोलशास्त्र के मुख्य सिद्धान्त दो प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिकों प्लेटो तथा अरस्तू ने प्रस्तुत किए। आधुनिक संदर्भ में दो प्रमुख सिद्धान्त प्रसिद्ध थे, इसमें पहला भूकेन्द्रिक सौरपरिवार तथा दूसरा सूर्यकेन्द्रिक सौरपरिवार ये दो सिद्धान्त प्रसिद्ध हैं। इसी सिद्धान्त के आधार पर दूसरी शताब्दी में टॉलमी द्वारा विस्तार से भू-केन्द्रिक सिद्धान्त प्रस्तुत किया था। भारतवर्ष के महान वैज्ञानिक आर्यभट्ट ने सर्वप्रथम पृथ्वी को ही ब्रह्माण्ड का केन्द्र माना, परन्तु उन्होंने ब्रह्माण्ड को स्थिर माना, और कहा कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है। उनका यह सिद्धान्त खगोल जगत में "भू-भ्रमण सिद्धान्त" नाम से प्रसिद्ध है।

द्वितीय महत्वपूर्ण सिद्धान्त यूरोप के वैज्ञानिक निकोलस कोपरनिकस ने प्रस्तुत किया। यह भू-केन्द्रिक सिद्धान्त के विपरीत सूर्य केन्द्रिक सिद्धान्त था। सूर्य-केन्द्रिक सिद्धान्त के अनुसार सूर्य सौरपरिवार का केन्द्र है, पृथ्वी तथा अन्य ग्रह सूर्य के चारों

ओर घूमते हैं। कोपरनिकस के सिद्धान्त का भी यूरोप में पर्याप्त विरोध हुआ। इसके बाद दुनियां के अलग-अलग कोनों में खगोल विज्ञान में अनेकों खोजें हुई। जर्मनी के जोहांस केपलर ने ग्रहों की गतियों का स्पष्टीकरण दिया तथा इटली के वैज्ञानिक गैलीलियो ने दूरबीन की खोज की तथा अनेकों खोजें हुई, जो आज भी निरन्तर जारी हैं। ब्रह्माण्ड को समझने के लिए प्रमुख रूप से निम्न आधुनिक सिद्धान्तों का अध्ययन करना आवश्यक है।

4. स्थिरदशा सिद्धान्त
5. विस्फोट सिद्धान्त
6. स्पन्दनशील सिद्धान्त

*4.*4.1 स्थिरदशा सिद्धान्त

ब्रह्माण्ड में न सिकुड़न दिखाई पड़ती है और न ही विस्तार दिखाई पड़ता है। व्यवहारिक रूप में यही दिखाई भी पड़ता है, इस प्रकार जो भी आकाश को देखेगा वह यही समझेगा कि यह स्थिर है। उस स्थिति में ब्रह्माण्ड को स्थिर कह सकते हैं।अल्बर्ट आइन्स्टाइन को इस सिद्धान्त का जनक माना जाता है। उनका मानना था कि ब्रह्माण्ड स्थिर है और सदैव स्थिर दशा में ही रहता हैऔर यह ब्रह्माण्ड करोड़ों वर्षों से स्थिर है। आइन्स्टाइन के इस सिद्धान्त को बीसवीं सदी के ब्रह्माण्ड विज्ञानी फ्रेड हॉयल ने अंग्रेज गणितज्ञ हरमान बांडी और अमेरिकी वैज्ञानिक थोमस गोल्ड के साथ संयुक्त रूप से मिलकर स्पष्ट किया। यह सिद्धान्त स्थिरदशा सिद्धान्त तथा स्थायी दशा सिद्धान्त के नाम से विख्यात है। इसके अनुसार न तो ब्रह्माण्ड का आदि है और न ही इसका कभी अन्त होगा। यह सदैव ही स्थिर दशा में विद्यमान रहा है और रहेगा भी। यह समयानुसार अपरिवर्तनशील है, यद्यपि इस सिद्धान्त में प्रसरणशीलता समाहित है, परन्तु फिर भी

ब्रह्माण्ड के घनत्व को स्थिर रखने के लिए पदार्थ इसमें स्वतः रूप से उत्पन्न और परिवर्तित होता रहता है।

*4.*4.2 विस्फोट सिद्धान्त

आधुनिक सिद्धान्तों में सर्वाधिक मान्य और प्रख्यात यह सिद्धान्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को विस्फोट द्वारा सिद्ध करता है। विस्फोट सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड में सर्वप्रथम विस्फोट हुआ, उस विस्फोट से ही ब्रह्माण्ड में सृष्टि उत्पन्न हुई। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन हब्बल ने किया। उनका मानना था कि ब्रह्माण्ड फैल रहा है तथा उन्होंने यह तर्क दिया कि ब्रह्माण्ड में आकाशगंगाएं लगातार एक दूसरे से दूर जा रही हैं, अतः अतीत में किसी समय ये आकाशगंगाएं अवश्य ही एक साथ रही होंगी। उनका मानना था कि दस से पंद्रह अरब वर्ष पूर्व ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण द्रव्यराशि एक स्थान पर एकत्रित थी, उस समय ब्रह्माण्ड का घनत्व असीमित था, तथा सम्पर्ण ब्रह्माण्ड अति सूक्ष्म बिन्दु में समाहित था। किसी अज्ञात कारण से इसी सूक्ष्म बिन्दु में विस्फोट हुआ और उस विस्फोट से द्रव्य इधर-उधर छिटक गया। इसी स्थिति में अकारण ही दिक्-काल की भी उत्पत्ति हुई। इस घटना को खगोलविदों द्वारा ब्रह्माण्डीय विस्फोट का नाम दिया जाता है। एक अंग्रेज विज्ञानी सर फ्रेड हॉयल ने इस सिद्धान्त की आलोचना करते समय मजाक में "बिग-बैंग"इस शब्द का प्रयोग किया था, इसीलिए इस सिद्धान्त को बिग-बैंग सिद्धान्त भी कहा जाता है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के सिद्धान्तों में विस्फोट सिद्धान्त सर्वाधिक मान्यता प्राप्त सिद्धान्त है। एक ओर जहां स्थिरदशा सिद्धान्त में पदार्थो का सृजन निरन्तर प्रक्रिया है, वहीं विस्फोट सिद्धान्त के अनुसार पदार्थों का सृजन अकस्मात् हुआ।

*4.*4.3 स्पन्दनशील सिद्धान्त

स्पन्दनशील का अर्थ सिकुड़ने और फैलने की नियमित प्रक्रिया से है, इसके अनुसार ब्रह्माण्ड फैलता रहता है तथा सिकुड़ता रहता है। इस सिद्धान्त को दोलायमान सिद्धान्त भी कहते हैं। इसी फैलने और सिकुड़ने की अवस्था को स्पन्दनशील कहते हैं। यह फैलने और सिकुड़ने की लगातार स्थिति बनी रहती है। वर्तमान में हमारा ब्रह्माण्ड फैल रहा है, परन्तु एक सीमित अवस्था में फैलने के बाद इसमें सिकुड़न आ जाएगी। इसी सिद्धान्त को स्पन्दनशील सिद्धान्त कहा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड के सिकुड़न और प्रसरण की प्रक्रिया करोड़ो वर्षों के अन्तराल में होती है। डॉ. एलन संडेज को इस सिद्धान्त का प्रवर्तक माना जाता है। उनका मानना है कि आज से 120 करोड़ वर्ष पहले एक विस्फोट हुआ तभी से यह ब्रह्माण्ड फैलता जा रहा है। 290 करोड़ वर्ष बाद गुरुत्वाकर्षण बल के कारण इसका विस्तार रुक जाएगा और इसके बाद इसमें संकुचन की प्रक्रिया शुरू हो जाएगी। यह ब्रह्माण्ड संकुचित होते-होते अनन्त रूप से सिकुड़ते हुए एक अतिसूक्ष्म बिन्दुमय आकार धारण कर लेगा, उसके बाद अत्यन्त गुरुत्वाकर्षण के कारण ही इसमें पुनः विस्फोट होगा और इसमें पुनः फैलाव प्रारम्भ हो जाएगा। यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहेगी, इसी सिद्धान्त को स्पन्दनशील सिद्धान्त कहा जाता है।

अभ्यास प्रश्न

प्र. 1. भारतीय वाङ्मय के आधार पर सृष्टि की उत्पत्ति के कितने सिद्धान्त बताए गए हैं?

प्र. 2. तीन गुणों के नाम बताइये।

प्र. 3. आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा सृष्टि की उत्पत्ति के कितने सिद्धान्त बताए गए हैं?

प्र. 4. तैत्तिरीयोपनिषद् के अनुसार सर्वप्रथम क्या उत्पन्न हुआ?

प्र. 5. भारतीय दर्शन के आधार पर सृष्टि का मूल किसे माना गया है?

प्र. 6. सांख्य के अनुसार प्रकृति क्या है?

प्र. 7. दशाङ्गुल न्याय क्या है?

प्र. 8. नासदीय सूक्त में क्या वर्णन मिलता है?

प्र. 9. श्रीमद्भागवत् के अनुसार सृष्टि का वर्णन क्या है?

प्र. 10. पुरुषसूक्त के अनुसार सृष्टि कैसे उत्पन्न हुई?

प्र. 11. विश्वकर्मा को क्या कहा जाता है?

प्र. 12. वैदिक श्रुतियों में हिरण्यगर्भ को क्या कहा गया?

प्र. 13. स्थिरदशा किसे कहते हैं?

प्र. 14. विस्फोट सिद्धान्त सृष्टि किस प्रकार मानता है?

प्र. 15. स्पन्दनशील सिद्धान्त क्या है?

4.5 स्थिरदशा सिद्धान्त और भारतीय सृष्टि विज्ञान

स्थिरदशा सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड एक स्थिर सत्ता है तथा इसका कोई भी रचयिता नहीं है, और ना ही इसका कभी अन्त होगा। इसी प्रकार पर यदि हम भारतीय सृष्टिविज्ञान की बात करें तो यहां भी पदार्थ के परमाणुरूप को स्थिर ही माना गया है, यहाँस्थिर से उत्पत्ति और विनाश का अभाव है। यह परमाणु सदा ही विद्यमान रहते हैं, परन्तु इनमें परिवर्तन भी समय-समय पर होते रहते हैं। ये परिवर्तन एक सीमित काल तक ही होते हैं। जिस वस्तु की उत्पत्ति होती है, उसका विनाश भी निश्चित है। यह उत्पत्ति और विनाश का क्रम भी स्थिर ही है। क्योंकि कोई नहीं जानता कि यह सृष्टि कैसे उत्पन्न

हुई, और इसका रचयिता कौन है? इस सम्पूर्ण सृष्टि के कारणों को समझने के लिए भारतीय मनीषियों ने समय-समय पर कई सिद्धान्त दिए हैं। परन्तु वे इन सिद्धान्तों से भी पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं हैं, इसीलिए उन्होंने इसे नेति-नेति कहकर इसकी अनन्तता को स्वीकार किया है।

दार्शनिक दृष्टि से प्रकृति का मूल स्वरूप तीन गुणों की साम्यावस्था है, ये तीन गुण हैं – सत्त्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुण। तीनों गुण प्रकृति में सदा ही विराजमान रहते हैं, परन्तु इन तीनों के सन्तुलन में जब विकृति उत्पन्न होती है तब उस स्थिति में सृष्टि उत्पन्न मानी जाती है। अतः प्रकृति में विकृति ही सृष्टि कहलाती है। यह सृष्टि लगातार होती रहती है, और नष्ट भी होती रहती है। इस प्रकार यह क्रम अनन्त काल तक चलता रहता है। सृष्टि का बनना और नष्ट होना एक नियमित प्रक्रिया है, यह परिवर्तन प्रकृति में सदा ही बना रहता है। परन्तु प्रकृति कभी भी परिवर्तित नहीं रहती, केवल उसके गुणों में विकृति होती है। इस प्रकार भारतीय दार्शनिक तथा वैज्ञानिक चिन्तन एक दृष्टि में सृष्टि को नित्य मानता है, और इसमें होने वाले परिवर्तनों को गुणों के असन्तुलन का परिणाम। ये सिद्धान्त पाश्चात्य वैज्ञानिकों द्वारा दिए गए स्थिरदशा सिद्धान्त से साम्यता रखते हैं। अनादि और अनन्त का भाव ही स्थिरता है। इसी स्थिरता के आधार पर ही आधुनिक वैज्ञानिकों ने स्थिरदशा सिद्धान्त को प्रस्तुत किया।

4.6 विस्फोट सिद्धान्त तथा भारतीय सृष्टिविज्ञान

ब्रह्माण्डोत्पत्ति के आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धान्तों में विस्फोटसिद्धान्त सर्वाधिक मान्य सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को एक बिन्दु में से मानता है। इसके अनुसार ब्रह्माण्ड एक महाविस्फोट के साथ फैलता है तथा उसके बाद यह विस्तार को धारण करता है। भारतीय वैज्ञानिक ज्ञान परम्परा के अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक

हिरण्यमय अण्डे के फूटने से हुई। यह हिरण्याण्ड सर्वप्रथम दो भागों में विभाजित हुआ और इसके दोनों कपालों से पृथिव्यादि समस्त प्रकार की सृष्टि उत्पन्न हुई। इस विषय में ऋग्वेद में मिलता है –

"हिरण्यगर्भः समवर्ततााग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्"

अर्थात् सर्वप्रथम एक हिरण्याण्ड में विस्फोट हुआ और उसके गर्भ से एक शक्तिशाली पुरुष उत्पन्न हुआ और वह समस्त लोकों में व्याप्त हो गया। प्रसिद्ध ज्योतिर्विदप्रो.देवी प्रसाद त्रिपाठी जी ने अपनी पुस्तक भुवनकोशविमर्श में इस हिरण्याण्ड की तीन गतियां बताई हैं – पर्यप्लवन, प्रसर्पण और समेषण। पर्यप्लवन की गति में यह हिरण्याण्ड सर्वप्रथम अक्षभ्रमण की अवस्था अर्थात् अपनी धुरी पर घूम रहा था। फिर यह प्रसर्पण की गति को प्राप्त हुआ और इसमें गतिशीलता प्रारम्भ हुई और इसमें वृद्धि हुई। इसके बाद यह समेषण की स्थिति में आया और इसमें गम्भीर शब्दनाद के साथ इसका प्रसार प्रारम्भ हो गया।

इस प्रकार भारतीय हिरण्यगर्भ सिद्धान्त और आधुनिक विस्फोट सिद्धान्त में समानता मिल जाती है। जिसमें ब्रह्माण्ड की पर्यप्लवन स्थिति को हम आधुनिक मूल बिन्दु मान सकते हैं जिसे आधुनिक वैज्ञानिकों ने "प्रधान परमाणु" कहा। उस परमाणु में जब शब्दनाद के साथ गतिशीलता प्रारम्भ हुई तथा यह प्रसर्पण अवस्था में था। आधुनिक वैज्ञानिकों ने इस अवस्था को ही महाविस्फोट कहा है। हिरण्याण्ड की तीसरी अवस्था जिसे भारतीय ऋषियों ने समेषण अवस्था कहा है, उसमें हिरण्याण्ड का विस्तार होता है। यह महाविस्फोट के बाद के विस्तार की ओर संकेत करता है। अर्थात् ब्रह्माण्ड का विस्तार प्रारम्भ हुआ। अतः ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के सन्दर्भ में जो हिरण्यगर्भ सिद्धान्त

के अन्तर्गत कहा गया है, प्रायः वही सिद्धान्त आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा भी प्रस्तुत किया गया है।

भारतीय दार्शनिक पद्धति के अनुसार भी प्रायः इसी प्रकार का वर्णन ग्रन्थों में मिलता है। सांख्यशास्त्र के अनुसार मूल प्रकृति में पुरुष के तेज से विक्षोभ हुआ और उसी विक्षोभ के बाद सृष्टि की उत्पत्ति हुई। समस्त प्रकार के ग्रह-नक्षत्रों की रचना भी इसी विस्फोट के कारण हुई। आधुनिक विस्फोट सिद्धान्त के अनुसार यह दार्शनिक परिकल्पना इससे मिलती-जुलती हुई है। यहां मूल बिन्दु अर्थात् प्रधान परमाणु को हम प्रकृति का स्वरूप मान सकते हैं। उसमें अत्यधिक ऊर्जा के प्रभाव को हम सांख्य पुरुष की ऊर्जा के रूप में मान सकते हैं। जिस प्रकार प्रकृति का पुरुष की ऊर्जा के साथ संयोग से प्रकृति में विक्षोभ हुआ। कुछ इसी तहत आधुनिक वैज्ञानिकों का भी मानना है कि प्रधान परमाणु के पास अत्यधिक ऊर्जा की सघनता के कारण इस मूल बिन्दु पर विस्फोट हुआ। इस प्रकार भारतीय प्राचीन सिद्धान्तों के अनुरूप ही आधुनिक वैज्ञानिक भी अपनी खोजों के अनुसार निष्कर्ष तक पहुंच रहे हैं।

4.7 स्पन्दनशील सिद्धान्त तथा भारतीय सृष्टिविज्ञान

स्पन्दनशील सिद्धान्त आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा ब्रह्माण्ड के विस्तार और संकुचन को परिभाषित करने के लिए प्रस्तुत किया गया है। अन्य अर्थों में कहें तो यह सिद्धान्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और विनाश को परिभाषित करता है। ब्रह्माण्ड तथा इस सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति होती है तथा यह सृष्टि नष्ट भी होती है। इस सिद्धान्त को हमारे प्राचीन ऋषियों ने स्पष्ट भी किया है। प्राचीन भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा परमाणुओं के संयोग से सृष्टि को परिभाषित किया गया है। भारतीय दार्शनिक सिद्धान्तों के अनुसार पदार्थ का परमाणुरूप स्थिर है, तथा वह कभी भी नष्ट नहीं होता। यही परमाणु अन्य

परमाणु के साथ मिलकर सृष्टि करता है, तथा प्रलय की अवस्था में स्थूल स्वरूप से परमाणुरूप में पुनः परिवर्तित हो जाता है। परमाणु के इसी स्थूल स्वरूप धारण करने को हम परमाणु का विस्तार तथा पुनः परमाणुरूप में परिवर्तित होने को संकुचन की प्रक्रिया के माध्यम से स्पष्ट कर सकते हैं।

हमारे प्राचीन ऋषियों ने ब्रह्माण्ड को स्थिर, अनादि और अनन्त नहीं माना। उनके अनुसार यह ब्रह्माण्ड एक असीमित शक्ति के द्वारा उत्पन्न होता है, और नष्ट भी होता है। इसीलिए भारतीय शास्त्रों में प्रलय की परिकल्पना हमें प्राप्त होती है। ब्रह्माण्ड की इस विस्तारित तथा संकुचित होने की प्रक्रिया को प्रलय सिद्धान्त द्वारा आसानी से समझा जा सकता है। भारतीय ग्रन्थों में वर्णन मिलता है कि यह सब उत्पत्ति और प्रलय का संचालन परमात्मा करता है। परमात्मा के ही संकल्प मात्र से सृष्टि उत्पन्न होती है तथा नष्ट भी होती है। तैत्तिरीयोपनिषद् में वर्णन मिलता है कि सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ, उसके बाद क्रमशः वायु-अग्नि-जल-पृथ्वी उत्पन्न हुए –

एतस्मादात्मन आकाश सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी। पृथिव्या औषधयः। ओषधेभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः।

अर्थात् सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ। आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी, पृथिवी से औषधियां, औषधियों से अन्न तथा अन्न से पुरुष उत्पन्न हुआ। इस प्रकार इस ऋचा में सर्वशक्तिशाली भौतिक रचना आकाश की मानी गई है। इस प्रकार समग्र सृष्टि की रचना होती है, परन्तु यह सृष्टि अनन्त नहीं है, यह प्रलय अवस्था में समाप्त भी होती है। सृष्टि के इस प्रलय को प्राकृतप्रलय कहा जाता है, इसी को महाप्रलय भी कहते हैं। पौराणिक वर्णनों के अनुसार सृष्टि का रचनाकार ब्रह्मा है,

लेकिन यह ब्रह्मा भी अनन्त नहीं है। एक निश्चित समय बाद इसकी आयु पूर्ण हो जाती है। परन्तु जब ब्रह्मा की आयु पूर्ण होती है तब यह सृष्टि भी प्रलय को प्राप्त होती है।

इस महाप्रलय में सभी प्रकार के पदार्थ अपने नित्य परमाणु स्वरूप के प्राप्त कर क्रमशः विलय होते हैं। इस प्रक्रिया में पृथिवी का परमाणुरूप जल में, जल का परमाणुरूप अग्नि में, अग्नि का परमाणुरूप वायु में, वायु का परमाणुरूप आकाश में क्रमशः विलीन हो जाते हैं। यही परमाणुओं की विलीन होने की प्रक्रिया को हम ब्रह्माण्ड का संकुचन भी कह सकते हैं। इसके बाद पुनः नवीन सृष्टि की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। भास्कराचार्य बीजगणित नामक पुस्तक में इसी सिद्धान्त को खहर राशि (जिसमें शून्य भाजक होता है) में अविकारत्व को दृष्टान्त के रूप मेंइस प्रकार कहते हैं-

अस्मिन् विकारः खहरे न राशावपि प्रविष्टेष्वपि निःसृतेषु।

बहुष्वपि स्याल्लयसृष्टिकालेऽनन्तेऽच्युते भूतगणेषु यद्वत्।।

अर्थात् खहर राशि (जिसमें हर शून्य हो) में किसी राशि को जोडने या घटाने से शून्य हर में उसी प्रकार कोई विकार नहीं होता, जिस प्रकार प्रलय काल में भगवान अच्युत के शरीर में अनेक जीव प्रविष्ट हो जाते हैं तथा सृष्टिकाल में उनके शरीर से अनेक जीव निकलते हैं तथापि उनके शरीर में कोई विकार नहीं होता है, अर्थात् ज्यों का त्यों रहता है। यदि भगवान को मूल बिन्दु या परमाणु समझें, तो स्पन्दनशील सिद्धान्त से साम्यता मिलती है।उत्पत्ति और प्रलय का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है, यही स्पन्दनशील सिद्धान्त है।

भारतीय विज्ञान प्रत्येक उत्पन्न पदार्थ की मृत्यु को निश्चित मानता है, और जिसकी मृत्यु होती है उसकी उत्पत्ति भी निश्चित ही है। अतः उत्पत्ति और लय का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णन मिलता है कि –

जातस्य हि ध्रुवं मृत्युः ध्रुवं जन्म मृतस्य च।

अर्थात् जो पैदा हुआ है उसकी मृत्यु निश्चित है, और जो मर गया है वह पुनः जन्मता है। इस प्रकार स्पन्दनशील सिद्धान्त की साम्यता भारतीय सृष्टिविज्ञान से साम्यता अवश्य रखती है। उत्पत्ति और प्रलय का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। यही स्पन्दनशील सिद्धान्त है।

अभ्यास प्रश्न

प्र. 16. स्थिरदशा का अर्थ क्या है?

प्र. 17. स्थिरदशा को प्राचीन भारतीय सिद्धान्त के अनुसार कैसे समझेंगे?

प्र. 18. स्थिरता का क्या अर्थ है?

प्र. 19. विस्फोट सिद्धान्त की भारतीय सिद्धान्तों से क्या साम्यता है?

प्र. 20. सांख्य के अनुसार विस्फोट की समानता क्या है?

प्र. 21. स्पन्दनशील सिद्धान्त को भारतीय सिद्धान्तों के आधार पर परिभाषित किस प्रकार किया जा सकता है?

4.8 सारांश

ब्रह्माण्ड के विषय में प्राचीन भारतीय तथा आधुनिक विज्ञान के अनेकों सिद्धान्त वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं। आधुनिक और प्राचीन भारतीय सिद्धान्तों की बात करें तो उनमें साम्यता अवश्य ही दिखती है। आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा सृष्टि के विषय में स्थिरदशा, विस्फोट, स्पन्दनशीलता ये तीन सिद्धान्त दिए गए हैं। प्राचीन भारतीय सृष्टिप्रक्रिया के अध्ययन के आधार पर हम देखते हैं कि परमाणुओं का नित्यत्त्व स्थिर है, यह स्थिरदशा सिद्धान्त से साम्यता रखता है। द्वितीय आधुनिक सिद्धान्त

विस्फोट सिद्धान्त के अनुसार समग्र सृष्टि एक महान विस्फोट से उत्पन्न हुई। इसकी साम्यता के विषय में यदि बात की जाए तो प्रकृति की साम्यावस्था में सृष्ट्युत्पत्ति के कारणस्वरूप त्रिगुणों के परस्पर टकराने से जो विकार उत्पन्न होते हैं वह विस्फोट सिद्धान्त से साम्यता रखता है। तृतीय और महत्वपूर्ण आधुनिक सिद्धान्त स्पन्दनशील है। स्पन्दनशील सिद्धान्त भौतिक प्रकृति को अनित्य मानता है, इसके अनुसार सृष्टि में विस्तार और संकुचन एक नियमित प्रक्रिया है। विस्तार के समय सृष्टि उत्पन्न होती है और संकुचन सृष्टि के विनाश की प्रक्रिया है। भारतीय मत में भी सृष्टि को उत्पत्ति और विनाश के सहित ही माना गया है। अतः स्पन्दनशील सिद्धान्त सृष्टि की उत्पत्ति और विनाश के सिद्धान्त से साम्यता रखता है। उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर हम कह सकते हैं कि आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धान्त प्राचीन भारतीय सिद्धान्तों के साथ साम्यता रखते हैं।

4.9 कठिन शब्दार्थ

जिज्ञासा	- जानने की इच्छा
विमर्श	- विचार-चिन्तन
गूढतम	- अत्यन्त रहस्यमयी
अबूझ	- अनसुलझी
रचयिता	- रचना करने वाला
व्यापकता	- अधिक विस्तार सीमा
वैदिक ऋचा	- वेदों के मन्त्र
साम्यावस्था	- स्थिर अवस्था

खगोलविद	- ब्रह्माण्ड विज्ञानी
परिणत	- परिवर्तन
पराकाष्ठा	- अत्यन्त तीव्रता
सृजन	- रचना, उत्पत्ति
सर्वकालत्व	- सभी कालों में विद्यमान
सर्वव्यापकत्व	- सभी स्थानों में विद्यमान
चराचर	- चर और अचर
स्थापत्य	- स्थापना से संबन्धित
भूकेन्द्रिक	- भूमि को केन्द्र में रखकर
सूर्यकेन्द्रिक	- सूर्य को केन्द्र में रखकर
विपरीत	- उल्टा
अपरिवर्तनशील	- जिसमें परिवर्तन नहीं होता
अकारण	- विना कारण के
अकस्मात्	- अचानक
सिकुड़ना	- संकुचित होना
रचयिता	- रचना करने वाला
अक्षभ्रमण	- धुरी पर घूमना
असीमित	- सीमा से रहित

नवीन - नया

साम्यति - समानता

समग्र - सम्पूर्ण

4.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. भारतीय साहित्य वाङ्मय के आधार पर ब्रह्माण्डोपत्ति के प्रमुख चार सिद्धान्त हमें प्राप्त होते हैं। जिनमें विश्वकर्मा द्वारा सृष्टि, ब्रह्मा द्वारा सृष्टि, प्रजापति द्वारा सृष्टि तथा विराट् पुरुष द्वारा सृष्टि का वर्णन हमें मिलता है।
2. सत्व-रज-तम नामक तीन गुण हैं।
3. आधुनिक खगोलविदों द्वारा तीन प्रमुख सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया गया है – ये विस्फोट सिद्धान्त, स्थिरदशा सिद्धान्त तथा स्पन्दनशील सिद्धान्त हैं।
4. तैत्तिरीय उपनिषद् के अनुसार सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ।
5. पृथ्वी-जल-तेज-वायु-आकाश ये पञ्चमहाभूत सृष्टि की उत्पत्ति का मूल माने गए हैं।
6. सांख्य के अनुसार सत्त्व, रज और तम इन तीन गुणों की साम्यावस्था का नाम प्रकृति है।
7. दशाङ्गुलन्याय के अनुसार पृथ्वी से दशगुना जल, जल से दशगुना अग्नि, अग्नि से दशगुना वायु, वायु से दशगुना आकाश, आकाश से दशगुना अहंकार, अहंकार से दशगुना महत्तत्त्व, महत्तत्त्व से दशगुना मूलप्रकृति और यह मूलप्रकृति भगवान के एक पाद में है।
8. नासदीयसूक्त में वर्णन मिलता है कि सृष्टि से पूर्व कुछ भी नहीं था पश्चात् स्वयमेव शुद्धचैतन्य परब्रह्म की सत्ता उत्पन्न हुई।

9. श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवान विष्णु के मन में सृष्टि की जिज्ञासा उत्पन्न हुई तत्पश्चात् भगवान विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। इसी ब्रह्मा ने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की।

10. पुरुषरूक्त के अनुसार सृष्टि का रचनाकार विराट्पुरुष है।

11. विश्वकर्मा को पौराणिक साहित्य में सृजनकर्ता कहा गया है। विश्वकर्मा का अर्थ ही विश्व का कर्ता होता है।

12. प्रजापति वैदिक श्रुतियों में हिरण्यगर्भ नाम से भी प्रसिद्ध हुए।

13. जब ब्रह्माण्ड में न सिकुड़न दिखाई पड़ती है और न ही विस्तार दिखाई पड़ता है, उस स्थिति को स्थिरदशा कहा जाता है।

14. विस्फोट सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि एक महाविस्फोट से उत्पन्न हुई।

15. स्पन्दनशील का अर्थ सिकुड़ने और फैलने की नियमित प्रक्रिया से है, इसके अनुसार ब्रह्माण्ड फैलता रहता है, तथा सिकुड़ता रहता है।

16. स्थिर से अर्थ उत्पत्ति और विनाश का अभाव है

17. प्राचीन भारतीय सिद्धान्त के अनुसार प्रकृति स्थिर है, तथा पञ्चमहाभूतों के परमाणु भी स्थिर हैं।

18. अनादि और अनन्त का भाव ही स्थिरता है।

19. भारतीय सृष्टिविज्ञान के आधार पर हिरण्यगर्भ में विस्फोट होने से यह सृष्टि उत्पन्न हुई। आधुनिक विज्ञान भी सृष्टि का कारण विस्फोट को ही मानता है।

20. सांख्य के अनुसार तीनों गुणों की साम्यावस्था प्रकृति है, और प्रकृति में विकार उत्पन्न होने से सृष्टि उत्पन्न होती है, यही प्रकृति का विकार प्रकृति का विस्फोट कहलाता है।

21. भारतीय परम्परा के अनुसार उत्पत्ति और प्रलय का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। इसी प्रकार स्पन्दनशील सिद्धान्त में भी विस्तार और संकुचन नियमित प्रक्रिया है।

4.11 विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्र. 1. सृष्टिविज्ञान के प्राचीन भारतीय सिद्धान्तों की व्याख्या कीजिए।

प्र. 2. सृष्टिविज्ञान के आधुनिक सिद्धान्तों का वर्णन करें।

प्र. 3. स्थिरदशा सिद्धान्त की भारतीय सृष्टिविज्ञान के संदर्भ में तुलनात्मक व्याख्या करें।

प्र. 4. विस्फोट सिद्धान्त की भारतीय सृष्टिविज्ञान के संदर्भ में तुलनात्मक व्याख्या कीजिए।

प्र. 5. स्पन्दनशील सिद्धान्त की भारतीय सृष्टिविज्ञान के संदर्भ में तुलनात्मक व्याख्या करें।

प्र. 6. भारतीय सृष्टि विज्ञान और आधुनिक सिद्धान्तों के आधार पर निबन्ध लिखें।

4.12 सन्दर्भ/सहायक ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2016
2. खगोलीय पिण्डों का परिक्रमण, कोपर्निकस, व्याख्या, तिवारी, श्रवणकुमार एवं पाण्डेय रमाकान्त, वाराणसी, हिन्दी प्रकाशन समिति, सन् 1972
3. गोलपरिभाषा, झा, सीताराम, दरभङ्गा, बिहार, श्रीसीताराम पुस्तकालय, संवत् 2027
4. भुवनकोश विमर्श, प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स दिल्ली, वर्ष 2004

5. यजुर्वेद, संस्कृत साहित्य प्रकाशन वर्ष 2015

6. राजवल्लभवास्तुशास्त्रम्, डॉ श्रीकृष्ण जुगनू, परिमल प्रकाशन, वर्ष 2005

7. श्रीमद्भागवतपुराणम्, वेदव्यास,गोरखपुर, गीताप्रेस, संवत् 2059

8. श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2048

वैदिक सृष्टि विज्ञान में प्रमाणपत्र
द्वितीयपत्र
खण्ड 3.ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्य

इकाई-1 आकाशगंगा

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 विषय – परिचय
*1.*4. आकाश गंगा
1.5 सारांश
*1.*6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
*1.*7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
*1.*8 सहायक पाठ्य सामग्री
*1.*9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना–

सृष्टि विज्ञान से सम्बन्धित द्वितीय प्रश्नपत्र ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्य नामक तृतीय खण्ड की *आकाशगंगा नामक* पहली इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकते हैं कि सृष्टि विज्ञान में क्या है। सृष्टि प्रक्रिया में आकाशगंगा का स्थान एवं भूमिका क्या है। ब्रह्मण्ड के स्थूल सदस्यों में आकाशगंगा किसे कहते हैं। ये भी इस इकाई के अन्तर्गत हम जान पायेंगे।

1.2 उद्देश्य–

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्

- आप वैदिक सृष्टि की संरचना एवं ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्यों के बारे में जान पायेंगे।
- आकाशगंगा किसे कहते हैं ये बोध कर पायेंगे।
- आकाशगंगा का सृष्टि प्रक्रिया में क्या महत्व है, बता सकेंगे।
- ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत इसके स्वरूप को जान पायेंगे।

1.3 विषय–परिचय

किसी भी स्थिति को समझने के लिए उसके घटकों को समझना भी आवश्यक है। ऐसा भी कह सकते हैं कि समष्टिगत रूप को समझने के लिए उसके प्रत्येक व्यष्टिगत रूप (इकाई) को समझना आवश्यक होगा। यदि हम आधे से अधिक मात्रा में व्यष्टिगत इकाइयों को समझ जाते हैं तो समष्टि को समझना सरल हो जाता है। अगर हम किसी व्यक्ति के शरीर की स्थूल कोशिकाओं को आधे से अधिक जानकारी प्राप्त हो सकती है। इसलिए ब्रह्माण्ड रूपी शरीर को समझने के लिए इसके व्यष्टिगत रूप को समझना आवश्यक होगा। सर्वप्रथम हम पृथ्वी से ही विचार करते हैं। पृथ्वी गोल है इसलिए इसको ''भूगोल'' कहते हैं। प्राचीन काल में ग्रहों की गणनाएँ पृथ्वी को ध्यान में रखकर की गईं। इसलिए लोगों ने इस सिद्धान्त को भूकेन्द्रिय सिद्धान्त कह दिया। आज भी आकाश की स्थिति, परिस्थिति का ज्ञान पृथ्वी को ही ध्यान में रखकर किया जाता है। भारतीय प्राचीन ज्योतिषशास्त्र में यह धारणा स्पष्ट थी कि ग्रहों के केन्द्र में पृथ्वी नहीं है। पृथ्वी के बाहर उनका केन्द्र है। इस गणना में इसे मात्र ग्रह केन्द्र के रूप में स्वीकार किया गया। इसी संदर्भ में आचार्य भाष्कर (द्वितीय) कह रहे हैं कि ''यस्मिन्न वृत्ते भ्रमति ..... नास्ति मध्ये ....मध्ये''।

आधुनिक विज्ञान में यह धारणा कोपरनिकस से प्रारम्भ होती है कि केन्द्र में पृथ्वी नहीं सूर्य है। पृथ्वी अपने अक्ष (कक्षा) पर भ्रमण करती है तथा वर्ष प्रमाण से वह सूर्य की परिक्रमा करती है। प्राचीन भारत में ग्रहों का भ्रमण प्रतिवृत्त में माना जाता है जिसका केन्द्र

ग्रह–केन्द्र के नाम से भी जाना जाता है। ग्रहों का स्पष्ट मान कक्षावृत्त में लिया जाता है जिसके केन्द्र में पृथ्वी है। इसी को ध्यान में रखकर लोगों ने भूकेन्द्रीय सिद्धान्त कह दिया। इस प्रकार ग्रहों को स्पष्ट करने के लिए दो केन्द्रों की आवश्यकता समझ में आती है। पृथ्वी अपने अक्ष (कक्षा) पर भ्रमण करती है तथा वर्ष प्रमाण से वह सूर्य की परिक्रमा करती है। प्राचीन भारत में ग्रहों का भ्रमण प्रतिवृत्त में माना जाता है जिसका केन्द्र ग्रह–केन्द्र के नाम से जाना जाता है। ग्रहों का स्पष्ट मान कक्षावृत्त में लिया जाता है। जिसके केन्द्र में पृथ्वी है। इसी को ध्यान में रखकर लोगों ने भूकेन्द्रीय सिद्धान्त कह दिया। इस प्रकार ग्रहों को स्पष्ट करने के लिए दो केन्द्रों की आवश्यकता समझ में आती है। आधुनिक खगोल सिद्धान्तकारों के अनुसार सभी ग्रह दीर्घवृत्ताकार कक्षा में भ्रमण करते हैं। भारतीय ज्योतिष की उच्चनीय परिकल्पना भी दीर्घवृत्ताकार परिकल्पना से भिन्न नहीं है। मात्र समझने का फेर है। सम्प्रति ग्रहों की गति के विषय में केपलर के तीन सिद्धान्त सर्वसामान्य है। जिनकी पुष्टि न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त से होती है।

गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त की चर्चा भी न्यूटन के कई सौ वर्ष पूर्व भारतीय ज्योतिष के ग्रन्थों में उपलब्ध होती है।

''आकृष्टशक्तिश्च मही तथा यत्
खस्थं गुरु स्वाभिमुखं स्वशक्त्या
आकृष्यते तत्पततीव भाति
समे समन्वात् क्व पतत्वियं खे।।

हमारे सौर–परिवार में ग्रहों के अतिरिक्त धूमकेत्वादि सदस्य भी हैं। इनकी कक्षायें प्रायः परवलयाकार होती हैं। ये प्रायः हमारे सौर–परिवार के नियमों से नियमित नहीं होते हैं। इसलिए इनको सौर–परिवार के दानव की संज्ञा दी गई है।

ये हमारे सौर–परिवार में प्रवेश करके सूर्य का चक्कर लगाते पुनः सुदूर चले जाते हैं। कई धूमकेतु निश्चित समय में पुनः आते हैं। जब ये धूमकेतु सूर्य के निकट पहुँचते हैं तो इनके पुच्छ भाग में भग्नता आ जाती है। ये भग्नांश कभी–कभी भूमि के वायुमण्डल में प्रवेश कर जाते हैं। अधिकतम तो घर्षण के कारण भस्मीभूत हो जाते हैं तथा कुछ कभी–कभी भूमि पर भी गिरते हैं। इसे ही उल्कापात कहते हैं। उल्कापिण्डों के पतन से पृथ्वी में गड्डे हो जाते हैं।

घात–प्रतिघात के कारण ये पिण्ड लौह एवं पाषाणमय हो जाते हैं।

अन्य ग्रहपिण्डों में भी उल्कापात होते हैं। आकाशगंगा (मिल्की) वे कहते हैं। इसी आकाशगंगा में कुछ–कुछ स्थानों पर निहारवत कुछ पदार्थों का समुदाय दृष्टिगोचर होता है। यह पदार्थ वाष्पमय होता है जिसे हम नीहारिका कहते हैं। नीहारिका के सदृश आकाश में वृहद प्रकाशपुंजों का समाहार दिखाई देता है। ये सभी प्रकाशपुंज आकाशगंगा के ही सदस्य हैं। सम्प्रति इनको कुछ विभिन्न रूपों में देखा जाता है जो इस प्रकार हैं–

1. आकाशगंगा
2. नीहारिका
3. तारे व तारापुंज
4. सौर परिवार

अब हम आकाशगंगा के स्वरूप के बारे में विस्तृत रूप से जानेंगे।

1.4 आकाशगंगा

हमारे सूर्य के सदृश (समान) असंख्य तारों एवं तारक पुंजों का समुदाय जहाँ दिखाई देता है उसी को आकाश गंगा कहते हैं। हमारी पृथ्वी को अपनी एक आकाशगंगा या मन्दाकिनी है जिसे दुग्ध मेखला (मिल्की–वे) कहते हैं। इस आकाश गंगा की विशिष्टता यह है कि इससे होकर एक सम्पूर्ण वृत में प्रकाश की धारा प्रवाहमान दिखाई देती है। आकाशगंगा ब्रह्माण्ड की एक मनोहर वस्तु है। पृथ्वी से देखने में यह उक्त प्रकाश धारा आकाश में दिखाई देती है। वास्तव में यह असंख्य तारों के टिमटिमाने से बनी है।

पाश्चात्यों ने इस प्रकाश धारा को ''मिलकी वे'' (दुग्ध–मेखला) की संज्ञा दी। यह नाम आकाशगंगा का व्यापक रूप से प्रयुक्त हुआ। आकाशगंगा ने पृथ्वीस्थ सभी लोगों को इतना अधिक मोहित किया कि लोगों ने इसे विभिन्न काल्पनिक कथाओं एवं सुन्दर–सुन्दर नामों से संजोया। मध्य एशिया के यकूत लोगों ने इसे ईश्वर का पदचिन्ह कहा, एस्किमो लोगों ने धवल भस्म का मार्ग बताया। यूनानी लोगों ने इसे स्वर्ग ले जाने वाला मार्ग कहा तो चीन के लोगों ने इसे स्वर्ग की नदी तथा हिब्रू लोगों ने प्रकाश की नदी कहा। प्राचीन भारतीय लोगों ने इसे स्वर्गगंगा, आकाशगंगा, मन्दाकिनी, देवगंगा, क्षीरनदी, आकाश नदी, आकाशयज्ञोपवीत आदि नामों से जाना। खगोलशास्त्रियों की गणना के अनुसार हमारे ब्रह्माण्ड में सहस्त्रों अरब आकशगंगाएँ हैं। प्रति आकाशंगंगा में अनुमानतः हजारों अरब तारायें होते हैं। हमारी आकाशगंगा में हमारा सौर परिवार तो एक कोने में बिन्दु मात्र दिखाई देता है। कल्पना करें जैसे पूरे विश्व में एक गाँव और पुनः पुनः गाँव में मेरा परिवार जैसी स्थिति में कोई व्यक्ति अपने अस्तित्व का अनुभव

करता है। वैसे ही ब्रह्माण्ड में हमारा सौर–परिवार भी है। आकाशगंगा का व्यासमान प्रायः 100000 प्रकाश वर्ष है। आकाशगंगा में तीन प्रकार की ताराओं की श्रेणियाँ हैं। पहली श्रेणी में वे आते हैं जो आकाशगंगा के सर्पिलों और नाभि में स्थित हैं। सूर्य भी इसी में समाहित है, इसे मन्दाकिनी गुच्छ कहते हैं। इसके बाहर प्रभामण्डलीय तारे हैं। यहाँ बहुत से तारों ने एक छोटी मन्दाकिनी का रूप भी लिया है। इनको हम गोलाकार तारागुच्छ कहते हैं। इनमें बहुत पुराने तारे पाए जाते हैं। इन गोलाकार तारागुच्छ कहते हैं। इनमें बहुत पुराने तारे भी पाये जाते हैं। इन गोलाकार गुच्छों से दूर करोड़ों तारे हैं तो आकाशगंगा के बाहरी भाग में छिटके पड़े हैं। ये तारे भी आकाशगंगा के ही अंग हैं।

हमारी आकाशगंगा का केन्द्र के द्वारा इसका अध्ययन सम्भव नहीं है। जो कुछ हमें ज्ञात है वह रेडियो दूरबीन के द्वारा हुआ है। हमारे सूर्य से लगभग 32000 प्रकाशवर्ष दूर हमारी आकाशगंगा का केन्द्र है। यह केन्द्र का भाग गैस की घूमती हुई पट्टी जैसा दिखाई देता है। इस घूमती हुई पट्टी अर्थात् केन्द्र भाग में अनेक बड़ी क्रियाएँ होती रहती हैं। यहाँ नित्य नूतन तारे पैदा होते रहते हैं। इस भाग में करोड़ों तारे लुब्धक जैसे चमकदार दिखाई देते हैं। इसी से अनुमान किया जा सकता है कि आकाशगंगा का केन्द्र भाग कितना प्रकाश की किरणों से ओतप्रोत है। मेरीलैंड विश्वविद्यालय के डॉ0 जोसफ वेवर का कहना है कि हमारी आकाशगंगा के केन्द्र को एक ब्लैकहोल (कृष्णविवर) अनुशासित करता है। उन्होंने परीक्षण में पाया कि केन्द्र से प्रभावशाली गुरुत्वाकर्षण की लहरें निर्गत हो रही है। आकार में आकाशगंगा विभिन्न प्रकार की दिखाई देती हें। कोई दीर्घवृत्ताकार कोई सर्पिलाकार और कोई विषमाकार की दिखाई देती है। ब्रह्माण्ड में विस्फोट के बाद पदार्थों का विस्तार हुआ। अन्तरिक्ष में गैस से भरे खरबों प्रायद्वीप बने। गैस के ये प्रायद्वीप अपनी ही गति के कारण घूमने लगे। मन्द गति से घूमने वालों का आकार गोल हुआ। शेष वलयाकार रूपों में परिणित हुए। तीव्रगति से घूमने वाले प्रायद्वीप का आकार चपटी तश्तरी (डिस्क) की तरह हो गया। इसके किनारे सर्पिली भुजाएँ निकली। इसके पश्चात् इनका आकार ''सर्पिलाकार'' दिखाई देने लगा। इस प्रकार विभिन्न प्रकार की आकाशगंगाएँ अस्तित्व में आईं।

1.5 अभ्यास प्रश्न

1. ब्रह्माण्ड के कितने स्थूल सदस्य हैं?
2. दुग्ध मेखला किसे कहा जाता है?
3. किलकी वे से क्या तात्पर्य है?
4. सूर्य से कितने प्रकाशवर्ष दूर आकाशगंगा का केन्द्र है?
5. आकाशगंगा का व्यासमान कितना है?

1..6 सारांश

यह सम्पूर्ण दृश्यवत् जगत सृष्टि के उषः काल में अव्यक्त से प्रकट होता है और उसी अव्यक्त की सत्ता में महारात्रि के आते ही विलीन हो जाता है। भारतीय चिन्तनधारा के अनुसार चतुर्दश लोकों की समष्टि का ही नाम ब्रह्माण्ड है। जिसका नियमन सत्यलोक से होता है। ये लोक भौतिक शरीर के लिए अगम्य हैं। इन लोकों में गमन सूक्ष्म शरीर से ही सम्भव है। आधुनिक विज्ञान के अनुसार जहाँ लाखों आकाशगंगायें भ्रमण एवं प्रसरणशील हैं उसे ब्रह्माण्ड कहा जाता है। एक अर्थ में हम इसे अन्तरिक्ष भी कह सकते हैं। क्योंकि ''अन्तर्मध्ये भृक्षाणी नक्षनाणि यस्य दन्तरिक्षमिति'' अर्थात् जिसके मध्य में ग्रह नक्षत्र, तारे व तारे समूह विद्यमान रहते हैं उसे अन्तरिक्ष कहते हैं। कुछ लोग इसे इसी आधार पर ब्रह्माण्ड भी कहते हैं।

1.7 अभ्यासात्मक प्रश्नों के उत्तर

1. चार स्थूल सदस्य हैं।
2. दुग्धमेखला आकाशगंगा को कहा जाता है।
3. आकशगंगा को ही कहा जाता है।
4. सूर्य से लगभग 32000 प्रकाशवर्ष दूरी में आकाशगंगा का केन्द्र है।
5. आकाशगंगा का व्यासमान प्रायः 100000 प्रकाश वर्ष है।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- सूर्य सिद्धान्त
- ब्रह्माण्ड और सौर परिवार
- भारतीय ज्योतिष
- ऋग्वेद सायण भाष्म
- उपयोगी पुस्तक
- ब्रह्माण्ड और सौर परिवार

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. ब्रह्माण्ड का परिचय दीजिये।

2. आकाशगंगा का विस्तृत स्वरूप का उल्लेख कीजिये।

इकाई–2 नीहारिका

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 विषय – परिचयनीहारिका

*2.*4. नीहारिका में तारे कैसे बनते हैं

*2.*5 सारांश

*2.*6 अभ्यास प्रश्न

*2.*7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

*2.*8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

*2.*9 सहायक पाठ्य सामग्री

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

यह इकाई वैदिक सृष्टि विज्ञान से सम्बन्धित द्वितीय प्रश्नपत्र की तृतीय खण्ड की द्वितीय इकाईहै। इससे पूर्व में आपने ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्यों में से आकाशगंगा के बारे मे ज्ञान अर्जित किया। इसी क्रम में अब हम ब्रह्माण्ड के द्वितीय सदस्य नीहारिका के विषय में अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अन्तर्गतहम अध्ययन करेंगे कि नीहारिका क्या है, साथ ही ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत इस का स्वरूप व महत्व के विषय में भी जानेंगे।

2.2 उद्देश्य

- इसइकाई के अध्ययन के पश्चात् आप ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्यों के विषय में जान पायेंगे।
- साथ ही आप निहारिका के विषय म बोध कर पायेंगे।
- निहारिका क्या है? किसे कहते हैं? उसका आकार प्रकार किस प्रकार से है? स्वरूप के विषय में अवगत हो सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सृष्टि प्रक्रिया में ब्रह्माण्ड के विषय मे बोध कर पायेंगे।

2.3 नीहारिका

आकाश में जो नीहारवत् तारों के पुंज दिखाई देते हैं, उन्हें ही नीहारिका कहते हैं। ये तारों की तरह प्रकाशित होतेहैं परन्तु ये तारे नहीं हैं क्यों कि इन का आकार तारों की तरह नहीं है। सामान्य तया आकाश में दो नीहारिकाएँ स्पष्ट रूप से दिखाई देतीहैं। जिन्हें देवयनी और त्रिभुजनाम से जानाजाता है।दूरदर्शक यंत्र के माध्यम से दसकरोड़ से अधिक नीहारिका ओं का ज्ञान वैज्ञानिकों को प्राप्त हुआ है। आकाश में छोटी–बड़ी अर्थात् सभी प्रकार की नीहारिका येंदिखाई देती हैं। जो नीहारिकाएँ ग्रहों के सदृश गोला कार होती हैं उन्हें ग्रहीय नीहारिका कहते हैं। इननीहारिकाओं का व्यास प्रायः 7 खरबमील के आसन्न होता है। इनके मध्य में एक प्रचण्डतेज से युक्त तारा होता है। उसी के चारोंतरफ अन्य लघुतारेभ्रमण करते हैं। इनका एक चक्र भ्रमण लगभग पाँचहजार वर्षों में पूर्ण होता है। कुछ नीहारिकायें तो इतनी विशाल होती हैं उनकी तुलना आकाश गंगा से की जा सकती है। अधिकतर नीहारिकाएँ समुदाय में रहती हैं।इन्हीं को नीहारिका पुंज कहते हैं। इनपुंजों में 2 से 5 सौ तक नीहारिकाएँ होती हैं। निरन्तर वेध करने से ज्ञात हुआ कि नीहारिकाएँ अधिकवेग से भागती हैं।जैसे–जैसे ये भागती हैं तो इनकी गतियाँ बढ़ जातीहैं।

नीहारिकाओं का प्रकाश हमतक एक करोड़ वर्ष के पश्चात् पहुँचता है। लेकिन ये नीहारिकाएँ भी 900 मील प्रतिसेकेण्ड की गति से दूरभाग रही हैं। जिन नीहारिकाओं का प्रकाश हम तक पाँच करोड़

वर्षों में पहुँचता है वे हमसे 4500 मील प्रतिसेकेण्ड के वेग से दूरभाग रही हैं। इसी आधार पर कह सकते है कि एक अरब चालीस करोड़ वर्षों में विश्वकाव्या स दुगुना हो जायेगा।

नीहारिकाओं के सन्दर्भ में पौराणिक एवं वैदिक साहित्य में चतुर्दश लोगों की व्याख्या करते हुए एक वर्णन मिलता है। जिसमें यह कहा गया है भूलोक स्वर्लोक से आबद्ध है। इस आबद्धताको यह कहते हुए स्वीकार किया गया है कि आकर्षण शक्ति के कारण ही भूलोक स्वर्लोक की परिक्रमा करता है। यहाँ स्वर्लोक कोसूर्यलोककहागयाहै। कह सकतेहैंकिभूलोक (पृथ्वी) सूर्य के चारोंओर घूमतीहैपरन्तुस्वर्लोक (सूर्यमण्डल) पूर्णरूप से परमेष्टी मण्डल के आकर्षण के कारण अपनी कक्षामें घूमतेहुए पूरेसौर परिवार के साथ आकाशगंगा की परिक्रमा कर रहा है।वैदिक एवं पौराणिक साहित्य के आधार पर महापहोपाध्याय गिरिधर शर्माचतुर्वेदी जी स्पष्टव्याख्या करते हुए कहते हैं कि भूलोक स्वर्लोक से स्वर्लोक से जनलोक और जनलोक से सत्यलोक आबद्ध है। इन लोकों के मध्य में जो अन्तराल है वही क्रमशः भुव–मह–तपलोक कहे गयेहैं। शुक्ल यजुर्वेद में परमेष्ठीलोक का धातानाम से भी व्यवहार मिलता है। प्राचीन वैदिक आचार्य स्वीकार करते हैं कि सभी ग्रह, नक्षत्र तारों की उत्पत्तिपरमेष्ठी–लोक से हुईहै।

आधुनिक वैज्ञानिक इसी परमेष्ठी (धाता) लोक को स्पायरलनौबुला (काश्यपी नीहारिका) के रूप में स्वीकार करते हैं तथा मानते हैं कि सूर्य सहित सभी ग्रहों की उत्पत्ति आकाशगंगा के एक पार्श्व मेंस्थित काश्यपी नीहारिका से हुईहै।

2.4 नीहारिका में तारे कैसे बनते हैं –

नीहारिकायें धूल और गैसों से बनी होती हैं| ज्यादात्तर हाइड्रोजन और हीलयम | एक नीहारिका में धूल और गैसें बहुत फैली हुई होती हैं | लेकिन गुरुत्वाकर्षण धीरे – धीरे धूल और गैस के गुच्छों को एक साथ खींचना शुरू कर देता है | जैसे-जैसे ये गुच्छे बड़े होते जाते हैं , इनका गुरुत्वाकर्षण और मजबूत होता जता है | आखिर में धूल और गैस का झुरमुट इतना बड़ा हो जाता है कि वह अपने ही गुरुत्वाकर्षण से ढह जाता है |

पतन के कारण बादल के केन्द्र में सामग्री गर्म हो जाती है और यह गर्म कोर एक तारे की शुरुआत होती है | अधिकांश नीहारिकायें विशाल आकार की होती हैं| कुछ सैकड़ों प्रकाश वर्ष व्यास के हो सकते हैं | ओरियन नेबुला आकाश में सबसे चमकीला नीहारिका है और जो पूर्ण चन्द्रमा के कोणीय व्यास के दुगुनाक्षेत्र में व्याप्त है,इस नोबुला को नग्न आँखों से देखा जासकता है| पृथ्वी के आकार के एक नेबुला का कुल द्रव्यमान केवल कुछ किलोग्राम होता है |

नेबुला अक्सर तारे बनाने वाले क्षेत्र होते हैं | इन क्षेत्रों में गैस धूल , और अन्य सामग्रीयों के निर्माण एक साथ मिलकर सघन क्षेत्रों का निर्माण करते हैं ,जो आगे के पदार्थों को आकर्षित करते हैं |

नीहारिकाएं कहाँ है –तारों के बीच के स्थान में नीहारिकाएं मौजूद होती हैं- जिन्हें अन्तरतारकीय स्थान के रूप में भी जाना जाता है | पृथ्वी के निकटतम ज्ञात नीहारिका को हेलिक्स नेबुला कहा जाता है | यह एक मरते हुए तारे का अवशेष है |

सम्भवत: सूर्य जैसा एक | यह पृथ्वी से लगभग 700 प्रकाश वर्ष दूर है | इसका मतलब है कि अगर आप प्रकाश की गति से भी यात्रा कर सकते हैं , तब भी आपको वहां पहुँचने में 700 साल लगेंगे|

ओरियन नेबुला क्या है – ओरियननेबुला मिल्की वे में स्थित एक फैलती नीहारिका है ,जो ओरियन नक्षत्र के दक्षिण में है | यह सबसे चमकीले नेबुला में से एक है | रात के आसमान में देखा जा सकता है | यह 1,344 प्लस 20 प्रकाश वर्ष दूर है |

और पृथ्वी से सबसे नजदीक की नीहारिका है | इसका द्रव्यमान सूर्य से लगभग 2,000 गुना अधिक है | पुराने ग्रन्थ अक्सर ओरियन नेबुला को ग्रेट नेबुला के रूप में संदर्भित करते हैं |

ओरियन नेबुला सबसे अधिक फोटो खिंचवाने वाली और यह सबसे गहन अध्ययन वाली खगोलीय वस्तु में से एक है | इसने हमें नेबुला के बारे में बहुत कुछ बताया है कि गैस और धूल के बादलों से तारे और ग्रह प्रणाली कैसे बनती है |

खगोल- विदों ने नेबुला के भीतर प्रोतोप्लानेटरी डिस्क और भूरे रंग के बौनों , गैस की तीव्रता अशांत गतियों का अध्ययन किया है | नेबुला में बड़े पैमाने परसितारों के प्रभाव को सीधे देखा गया है |

2.5 *सारांश*

नीहारिका (Nebula)अंतरतारकीय माध्यम (इन्टरस्टेलर स्पेस) मेंस्थित ऐसे अंतर तारकीय बादल को कहते हैं जिसमें धूल, हाइड्रोजन गैस, हीलियम गैस और अन्य आयनीकृत्य (आयोनाइज्ड) प्लाज्मा गैसें उपस्थित हों।पुराने जमाने में ''निहारिका'' खगोल में दिखने वाली किसी भी विस्तृत वस्तु को कहते थे।आकाशगंगा (हमारी गैलेक्सी) से परेकिसी भी गैलेक्सी को नीहारिका ही कहा जाता था।बाद में जब एडविनहबल के अनुसन्धान से यह ज्ञात हुआ कि यह गैलेक्सियाँ हैं, तोनामबदलदियेगये।उदाहरण के लिए एड्रोमेडागैलेक्सी (देवयानी मन्दाकिनी) कोपहले एण्ड्रोमेडानेब्युला के नाम से जानाजाता था।नीहारिकाओं में अक्सर तारे और ग्रहीय मण्डल जन्म लेते हैं, जैसे

कि चीलनीहारिका में देखागयाहै। यह नीहारिका नासा द्वारा खींचे गए पिलर्सऑफक्रियेशन अर्थात् ''सृष्टि के स्तम्भ'' नामक अतिप्रसिद्ध चित्र में दर्शाई गई है। इन क्षेत्रों में गैस धूल और अन्य सामग्री की संरचनायें परस्पर एक साथ जुड़कर बड़े ढेरों की रचना करती हैं, जो अन्य पदार्थों को आकर्षित करताहै, एवं क्रमशः सितारों का गठन करने योग्य पर्याप्त बड़ा आकार ले लेता है। माना जाता है कि शेषसामग्री एव ंग्रहप्रणाली अन्य वस्तुओं का गठन करती है। इस मत का प्रतिपादन पुराण भी करते हैं। ब्रह्माण्ड पुराण मे कहा गया है कि ''चन्द्र त्रृक्षः ग्रहाः सर्वेविज्ञेयाः सूर्यसम्भवाः'' इसी सन्दर्भमें ऋग्वेद में वर्णन मिलता है कि काश्यपी नीहारिका से ही सूर्य की उत्पत्ति हुई यथा ''काश्यपोदेवसूर्योत्पत्तिः''। आज विज्ञान इसी सन्दर्भ में नूतन अनुसन्धान के क्षेत्र में कटिबद्ध रूप से संलग्न है अर्थात् नीहारिकाओं की खोज निरन्तर चल रही है।

2.6 *अभ्यासप्रश्न*

1. *आकाश में नीहारवत् जो तारा पुंज दिखाई देते हैं उन्हें कहतेहैं–*
   (क) नीहारिका (ख) नक्षत्रमण्डल (ग) आकाशगंगा (घ) कोई नहीं
2. *देवयानी और त्रिभुज नाम किसकाहै–*
   (क) आकाशगंगा (ख) नीहारिका (ग) उपग्रह (घ)कोईनहीं
3. *नीहारिकाओं का प्रायः व्यास होता है–*
   (क) 7 खरबमील (ख) 10 अरबमील (ग) 5 अरबमील (घ)कोईनहीं
4. *नीहारिकाओं का प्रकाश हम तक पहुँचता है–*
   (क) 4500 प्रतिमील (ख) 500 प्रतिमील
   (ग) 5000 प्रतिमील (घ)कोईनहीं

2.7 अभ्यासप्रश्नों के उत्तर

प्र01– क, प्र02– ख प्र03– क प्र04– क

2.8 सन्दर्भग्रन्थसूची

1. सूर्यसिद्धान्त
2. ब्रह्माण्डऔरसौर–परिवार
3. भारतीय ज्योतिष
4. ऋग्वेदसायण भाष्य

2.9 उपयोगीपुस्तक

ब्रह्माण्ड और सौर परिवार

2.10 निबन्धात्मकप्रश्न

प्र01– नीहारिका की परिभाषा दीजिये।

प्र02– नीहारिका के स्वरूप का वर्णन कीजिये।

प्र03– नीहारिकाओं के प्रकार व स्वरूप का उल्लेख कीजिये।

इकाई –3 *तारे एवं तारापुंज*

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 विषय – परिचय

3.4. तारों की उत्पत्ति एवं विनाश

3.5 तारों का तापमान

3.6 सारांश

3.7 अभ्यास प्रश्न

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.*10* सहायक पाठ्य सामग्री

3.11 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना.

सृष्टि विज्ञान से सम्बन्धित द्वितीय प्रश्नपत्र के ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्य नामक तृतीय खण्ड की*तारे व तारे पुंज नामक तीसरी* इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकते हैं कि सृष्टि विज्ञान में क्या है। सृष्टि प्रक्रिया में *तारों*का स्थान एवं भूमिका क्या है। ब्रह्मण्ड के स्थूल सदस्यों में आकाशगंगा किसे कहते हैं। ये भी इस इकाई के अन्तर्गत हम जान पायेंगे।

3..2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्

- आप वैदिक सृष्टि की संरचना एवं ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्यों के बारे में जान पायेंगे।
- *तारे व तारे पुंज*किसे कहते हैं ये बोध कर पायेंगे।
- *तारों*का सृष्टि प्रक्रिया में क्या महत्व है, बता सकेंगे।
- ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत इसके स्वरूप को जान पायेंगे।

3.3 विषय–परिचय तारे एवं तारापुंज

हम रात्रि में तारों से भरे आकश को देखते हैं। इनमें से कुछ बड़े, कुछ छोटे, कुछ पीले, कुछ नीले दिखाई देते हैं। आकाशगंगा का लगभग 98 प्रतिशत भाग तारों से बना है, शेष 2 प्रतिशत भाग में खगोलीय गैस और बहुत ही अधिक घने रूप में छाई धूल है। खगोल में ऐसे तारे अपवाद रूप में हैं जो अलग–थलग अकेले पड़े हों। ऐसे तारों की संख्या 25 प्रतिशत से अधिक नहीं है। युग्म तारे खगोल में लगभग 33 प्रतिशत हैं, शेष सभी प्रकार के तारे बहुसंख्यक हैं। इन समस्त तारों का वर्गीकरण इनकी द्युति, वर्ग, ताप एवं स्वरूप आदि का ज्ञान भौतिक लक्षणों के द्वारा प्राप्त होता है। तारों में कोई अधिक तीव्र प्रकाश वाला तथा कोई मन्द प्रकाश वाला दिखाई देता है। इसी को तारों का कान्तिमान कहते हैं। मुख्यतः कान्तिमान के द्वारा ही भौतिकशास्त्र में तारों का अध्ययन होता है।

हमारी आकाशगंगा में कितने तारे हैं, इसका अनुमान करना प्रायः कठिन है तथापि कह सकते हैं कि हमारी आकाशगंगा में लगभग एक खरब तारे हैं। इससे कुछ अनुमान कर सकते हैं कि हमारी आकाशगंगा कितनी बड़ी है। हमारी आकाशगंगा का व्यास प्रायः एक लाख प्रकाश वर्ष है। इससे हमें ज्ञात होता है कि प्रकाश की किरणें आकाशगंगा के एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक पहुँचने में एक लाख वर्ष समय लेती हैं। जबकि सूर्य की किरणे पृथ्वी तक पहुँचने में आठ मिनट का समय लेती हैं। हमारा सूर्य भी एक तारा है। यह आकाशगंगा के केन्द्र में

स्थित न होकर प्रायः केन्द्र से तीस हजार प्रकाश वर्ष दूर किनारे पर स्थित है। यह अपने परिवार के साथ आकशगंगा में 43 हजार मील प्रति घंटे की गति से भ्रमण कर रहा है। एक अन्य प्रसंग में खगोलशास्त्रियों का अनुमान है कि हमारा सूर्य 220 किमी0 प्रति सेकेंड की गति से आकाशगंगा की परिक्रमा कर रहा है। यह परिक्रमा सूर्य लगभग 25 करोड़ वर्षों में पूर्ण करता है। खगोलविदों का अनुमान है कि हमारी पृथ्वी प्रायः एक हजार करोड़ वर्षों में अस्तित्व में आई। अतः कह सकते हैं कि अभी तक हमारी पृथ्वी ने सूर्य के परिवार के सदस्य के रूप में आकाशगंगा के मात्र 40 ही चक्कर लगाए हैं। आकाशगंगा में तारों का बिखराव सब जगह समान रूप से नहीं है। कहीं तारे गुच्छों के रूप तथा कहीं अलग–अलग तारापुंजों के रूप में दिखाई देते है। इन तारागुच्छों में हजारों तारे होते हैं। कुछ तारा गुच्छ खुले हुए तथा कुछ तारा गुच्छ गोलाकार होते हैं। आधुनिक खगोलविदों ने प्रायः तीन सौ गोलाकार तारागुच्छों की और करीब डेढ़ हजार बिखरे हुए तारापुंजों की खोज की है। इनमें भी गोलाकार तारागुच्छ अधिक पुरातन एवं खुले बिखरे हुए तारापुंज नवीन लगते हैं। खगोलशास्त्री यह भी अनुमान करते हैं कि खुले हुए तारे या तारे गुच्छ गोलाकार तारागुच्छाकृति की ओर गतिमान हैं।

3.4 तारों की उत्पत्ति एवं विनाश

तारों की उत्पत्ति आकाशगंगा में विद्यमान हाइड्रोजन एवं हीलियम गैसों के संगठन से होती है। अन्ततः इन दोनों गैसों की सघनता लघु मेघों के रूप में परिणत होती हैं। हम जानते हैं कि आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से सारे पदार्थ प्रायः 209 मूल तत्वों से बने हैं। जो मूल तत्व हमारी पृथ्वी पर पाए जाते हैं वे तारों एवं मन्दाकिनियों में भी पाए जाते हैं। विश्व द्रव्य में हाइड्रोजन एवं हीलियम गैसों की प्रधानता है। पृथ्वी के वायुमण्डल से ये हल्की गैसें काफी पहले उड़ गई हैं। अतः पृथ्वी पर आज भारती तत्व कुछ अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की द्रव्यराशि में हाइड्रोजन एवं 15.9 प्रतिशत हीलियम गैसें हैं। शेष सभी तत्वों के प्रमाणों की मात्रा 0.2 प्रतिशत सम्मिलित रूप में है। हाइड्रोजन तारों का ईंधन है। हाइड्रोजन के परमाणुओं का संगठन होकर जब यह हीलियम में रूपान्तरित होती है तो तब ताप नाभिकीय भीषणतम ऊर्जा का उत्सर्जन होता है। इन्हीं दो गैसों की संघटनता–जो मेघों के रूप में परिवर्तित होती है, के आकार बढ़ने के अनन्तर उनमें गुरुत्वाकर्षण के कारण ये गैसीय विशाल मेघखंड

उत्तरोत्तर संकुचित एवं घनीभूत होकर तारों का रूप धारण करते हैं। यह प्रक्रिया प्रायः एक अरब वर्ष तक चलती है। इस अवस्था में तारों का तापमान 173 डिग्री सेंटीग्रेड से आरम्भ होकर एक करोड़ सेंटीग्रेड तक होता है। धीरे–धीरे गैसीय पिण्ड का आन्तरिक तापमान और घनत्व बढ़ता जाता है। परिणामतः यह पिण्ड प्रज्ज्वलित होकर सम्पूर्ण तारे का रूप धारण कर लेता है। तारों के आन्तरिक प्रभाव में वृद्धि होने से गैसीय पदार्थों का निपात अवरुद्ध हो जाता है। इस स्थिति में तारों में विरुद्धधर्मी दो वलयों के मध्य ऐसा सामंजस्य होता है कि पहला वलय गर्भ की ओर संकुचित होता है और दूसरा वलय परिधि की ओर फैलता है, जैसे इस समय हमारा सूर्य सन्तुलित अवस्था में है। हमारे सूर्य की उत्पत्ति प्रायः 46 अरब वर्ष पहले हुई है। अभी हमारा सूर्य अपनी कुमारावस्था में आगे बढ़ रहा है। भविष्य में भी ऊर्जा का विमोचन अपने यथाक्रम प्रमाण से ही करेगा। तारों के मध्य भाग जिसको हम क्रोड भी कहते हैं, के संकुचित होने से आवरण का तथा विकसित होने से विकृत ऊर्जा का प्रभाव न्यून होता है। आवरण के क्षेत्रफल के बढ़ने से तारे रक्तदानव अवस्था में प्रवेश करते हैं। उस समय तारों का स्वरूप लाल होता है। आज से पाँच हजार अरब वर्षों के बाद हमारा सूर्य भी रक्तदानव अवस्था में होगा। उस समय सूर्य की बाहरी परिधि का प्रसारण बुध, शुक्र, पृथ्वी की कक्षा से बाहर तक होगा। मंगल की कक्षा भी प्रभावित होगी। तब इन ग्रहों का अस्तित्व भी नष्ट हो जाएगा। हो सकता है कि पृथ्वी मात्र दग्ध हो अर्थात् कह सकते हैं कि पृथ्वी की जैविक सृष्टि तो पूर्ण नष्ट हो जाएगी। जिन तारों का द्रव्यमान सूर्य के समान होता है उन तारों की अन्तिम परिणति श्वेतवामन के रूप में होती है। यदि सूर्य की तुलना में तारे का द्रव्यमान अधिक हो तो उस तारे का अन्त रोचक हो सकता है। प्रायः इस प्रकार के तारों का क्रोड भाग अधिक संकुचित होता चला जाता है तथा इस संकुचन क्रिया से तापमान उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है तथा बाहरी कवच में संकुचित ऊर्जा के कारण विस्फोट होता है। इसी विस्फोट को खगोलशास्त्रियों ने 'सुपरनोवा विस्फोट' की संज्ञा दी है। सुपरनोवा विस्फोट के बाद क्रोड भाग अत्यधिक सम्पीडित होकर अपरिमित घनत्व को प्राप्त होता है। अत्यधिक संघनित द्रव्य का यह पिण्ड 'न्यूट्रान तारा' कहलाता है। घूमते हुए यह तारा रेडियो तरंगों को उत्पादित करता है। इसी को आधुनिक खगोलशास्त्री 'पल्सार' के नाम से जानते हैं। हमारी आकाशगंगा में अभी तक पाँच ही 'सुपरनोवा' विस्फोट खोजे गए हैं। वैज्ञानिकों का तर्क है कि सुपरनोवा की घटनाएँ हमारी आकाशगंगा में प्रति शताब्दी दो या तीन

तक हुआ करती है। अच्छी दूरबीनों द्वारा अन्य आकाशगंगाओं के तारों में विस्फोट देखा जा सकता है। अभी तक देखे गए ऐसे विस्फोटों की संख्या 500 से अधिक है। हाल ही में सन् 1987 में आकाशगंगा के निकट हमपड़ोसी मैजेलन के बड़े मेघ में एक 'सुपर नोवा' देखा गया था। सैंडुलीक नामक नीले महादानवी तारे के विस्फोट से यह घटना घटी और इसका निरीक्षण वैज्ञानिक अभी तक करते रहते हैं। इसके खोज की एक रोचक घटना है। 23 फरवरी 1987 की रात में 2 बजे की बात होगी। चिली की लास कंपानास वेधशाला में 'इयन शेल्टन' थकने के कारण अब निरीक्षण कार्य समाप्त करके घर जाने की जल्दी में थे। उन्होंने सोचा, जाने से पहले आकाश दर्शन की अपनी फोटोग्राफिक प्लेट को देखूँ जो अभी–अभी तैयार होकर आई है। शेल्टन ने प्लेट पर नजर डाली तो एक चमकदार अन्य धुंधले तारों के बीच एक तारा दिखाई दिया। यह तारा कहाँ से दिखाई दिया अथवा कहाँ से आया। कहीं मेरी फोटोग्राफी में त्रुटि तो नहीं हैं। शेलटन ने वेधशाला के बाहर आकर देखा तो सचमुच एक चमकदार तारा वहाँ पर दिखाई दे रहा है जहाँ दूरबीन से दिखाई दिया था। इसके पश्चात् इसका नाम शेल्टन सुपरनोवा या सुपरनोवा 1987 A कहा गया। यह हमसे लगभग 1,70,000 वर्ष पहले हुआ था। बाद में पता चला कि यहाँ सैंडुलीक तारा था जो अब नहीं रहा।

यदि किसी तारे का द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान से 2.5 गुणा से अधिक हो तो वह तारा श्वेतवान या न्यूट्रान तारा नहीं बनेगा बल्कि उसकी परिणति कुछ और ही तरह की होती है। ब्रह्माण्ड में कुछ ऐसे तारे मौजूद हैं जो इतने घने एवं आकुंचित हैं कि इनकी सतह पर मुक्ति वेग (पलायन वेग) प्रकाश के वेग से अधिक है। अतः प्रकाश किरणें उनकी सतह से बाहर नहीं जा सकती हैं, तो वे हमें नहीं दिखाई देंगे। ऐसे ही तारों को ब्लैक होल या कृष्ण विवर कहते हैं। ब्लैक होल के रूप में परिणत वे तारे होते हैं जो इतने भारी हैं कि उनका संकुचन श्वेतबटु (श्वेतवामन) या न्यूट्रान तारे के रूप में नहीं हो सकता है। यह स्थिति तब पैदा हो सकती है जब सुपरनोवा का बचा हुआ गर्म भाग सूर्य की मात्रा के दुगुने से काफी अधिक हो। ऐसे तारे के आकुंचन को कोई शक्ति रोक नहीं सकती और वह संकुचित होते–होते अन्त में कृष्ण विवर (ब्लैक होल) बन जाता है। उदाहरणस्वरूप कह सकते हैं कि जिस तारे का द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान से 2.5 गुने से अधिक होता है वही कृष्ण विवर बनेगा तथा इस कृष्ण विवर का व्यासमान 20 किमी0 से कम होगा। अतः अन्त में सारांश रूप में कह सकते हैं कि जिन तारों का द्रव्यमान सूर्य के

समान या कुछ कम होता है उनकी अन्तिम परिणति श्वेतवामन के रूप में होती है। जिनका द्रव्यमान कुछ अधिक परन्तु सूर्य के दुगुने द्रव्यमान से कम हो तो ऐसे तारों की परिणति सुपरनोवा के रूप में होती है। जिनका द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान से 2.5 गुने से अधिक हो तो उनकी परिणति ब्लैक होल के रूप में होती है। ये अवस्थाएँ तारों की अंतिम अवस्थाएँ होती हैं।

3.5 तारों का तापमान

वर्ण विश्लेषण यंत्र से, सवर्ण शोधक उपाय से एवं फोटो चित्रों से, तारों के वर्णों का ज्ञान होता है। वर्ण ही उनके पृष्ठीयताप के सूचक हैं। वर्ण भेद की दृष्टि से ओ, बी, ए, एफ, जी, के, एम, आर, एन, एस तारों के भेद स्वीकृत हैं। ये आंग्लभाषा के अक्षर क्रमशः *न्यूनतम* ताप के द्योतक हैं। जैसे 'ओ' नामक तारे का पृष्ठीय तापमान सर्वाधिक 50000 सेंटीग्रेड से 100000 डिग्री
सें.ग्रे. तक होता है। 'बी' वर्ग के तारों का पृष्ठीय तापमान 15000 डिग्री सें.ग्रे. के आसपास रहता है। 'ए' वर्ग के तारों का पृष्ठीय तापमान 11000 डिग्री सें.ग्रे. के आसपास रहता है। 'एफ' वर्ग के तारों का पृष्ठीय तापमान 1500 डिग्री सें.ग्रे. के आसपास होता है। वर्तमान ध्रुवतारा इसी वर्ग का तारा है। 'जी' वर्ग के तारों का पृष्ठीय तापमान 6000 डिग्री सें0ग्रे0 के आसपास होता है। हमारा सूर्य इसी वर्ग का तारा है। 'के' वर्ग के तारों का पृष्ठीय तापमान 4500 डिग्री सें.ग्रे. के आसन् होता है। हमारे रोहिणी और स्वाती नक्षत्र इसी वर्ग में आते हैं। 'एम' वर्ग के तारे लाल वर्ण के होते हैं, इनका पृष्ठीय (सतह) तापमान 3500 डिग्री सें.ग्रे. के आसन्न (आसपास) होता है। आर्द्रा और ज्येष्ठा नक्षत्र इसी वर्ग में आते हैं। आकाशगंगा में इनसे भी कम पृष्ठीय तापमान वाले तारे हैं। जैसे 'एन' वर्ग के तारे का पृष्ठीय तापमान 3000 डिग्री सें.ग्रे. से भी कम रहता है। कुछ तारे ऐसे भी खोजे गए जिन्हें 'शीतल' तारा कहा गया क्योंकि अन्यों की अपेक्षा इनका पृष्ठीय तापमान काफी न्यून होता है। 'एस' वर्ग में ये तारे आते हैं। इनका पृष्ठीय तापमान 800 डिग्री सें.ग्रे. के आसपास होता है।

आकाशगंगा के तारों को उपर्युक्त वर्णक्रम में बाँटा गया है। इनसे भी न्यून पृष्ठीय तापमान वाले तारे पाए जाते हैं। सूक्ष्मता के लिए खगोलशास्त्रियों ने प्रत्येक वर्ग के तारों को पुनः 10 उपवर्गों में बाँटा है। सम्प्रति इन उपवर्गों को G1, G2, G3, G4, G5, G6, G7, G8, G9, G10 के रूप में दर्शाया जाता है। वास्तविक रूप में

खगोलशास्त्रियों ने हमारे सूर्य को G2 वर्ग का तारा कहा है। यह रही तारों के पृष्ठीय तापमान की बात, परन्तु तारों का गर्भीय तापमान प्रायः 20000000 डिग्री सें.ग्रे. के तुल्य होता है। तारों के तापक्रम बढ़ने के साथ–साथ वर्णक्रम क्रमशः पीला, श्वेत नीला आदि होता जाता है। अतयधिक तप्त तारे नीले वर्ण में दिखाई देते हैं। सरल रूप से हम निम्न प्रकार से भी तारों के वर्ण को समझ सकते हैं–

वर्ण	तापमान
लाल	प्रायः 3000 डिग्री सें.ग्रे. तक के तारे
नारंगी	3000 डिग्री सें.ग्रे. से 5000 डिग्री सें.ग्रे. तक के तारे
पीला	5000 डिग्री सें.ग्रे. से 6000 डिग्री सें.ग्रे. तक के तारे
श्वेत पीले	6000 डिग्री सें.ग्रे. से 8000 डिग्री सें.ग्रे. तक के तारे
श्वेत	8000 डिग्री सें.ग्रे. से 10000 डिग्री सें.ग्रे. तक के तारे
नीले श्वेत	15000 डिग्री सें.ग्रे. से अधिक के तारे
नीले	25000 डिग्री सें.ग्रे. अधिक के तारे

तेजस्विता के आधार पर तारों की सूची संलग्न है। सारणी में व्याघ नामक तारे का आभासिक कान्तिमान 1.45 है। केवल आरम्भ से चार तारों का आभासिक कान्तिमान ऋणात्मक है। इस सारणी में जैसे–जैसे तारों की द्युतिता न्यून होती है वैसे–वैसे तारों का कान्तिमान अधिकाधिक धनात्मक होता है। स्पष्टता के लिए सारणी देखेंगे। सारिणी में प्रायः मुख्य एवं बहुत कम तारों को दिया गया हैं। इस *सारणी में सूर्य (तारा) को नहीं दर्शाया गया है। सूर्य का कान्तिमान इतना कम है कि इस कान्तिमान के कोई भी तारे नहीं दिए गए हैं। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं कि आकाशीय कान्तिमान बढ़ते क्रम में है अर्थात् जिन तारों का कान्तिमान अधिक है वे ऋण में दिखाए गए हैं। उत्तरोत्तर जिनका कान्तिमान कम होता गया उनको धन में दर्शाया गया है। हमारे सूर्य का कान्तिमान +4.7 है। यह G2 वर्णक्रम का तारा है। इससे भी कम कान्तिमान वाले तारे को +10.0, +15.0 आदि क्रम में दिखाया जा सकता है। तेजस्वी तारों की एक छोटी सूची–*

पाश्चात्य नाम	वर्णक्रम श्रेणी	आभासीय कान्तिमान	दैर्घ्यप्रकाश वर्षों में	परम कान्तिमान
सिरियस	ए–1	–1.5	8.7	+1.5

कैनोपस	एफ θ प्रथम ए	−0.73	1174	−4.4
एल्फोसेन्टॉरी	जी 2 पंचम	−0.27	4.3	+4.1
आर्कट्यरस	के 2 तृतीय	−0.06	36	−0.3
वीगा	ए पंचम	+0.04	26	+0.05
कैपेला	जी θ	+0.09	42	−0.06
रिगल	बी 8 प्रथम ए	+0.15	900	−6.4
प्रोसिऑन	एफ 5 चतुर्थ पंचम	+0.37	11.3	+2.7
एशर्नार	बी 3 पंचम	+0.53	85	−2.7
बीटासेण्टॉरी (हडर)	बी θ 5 पंचम	0.66	456	−3.3
बीटलज्यूस	एम 2 प्रथम ए बी	+0.7	310	+2.9
अलटेयर	ए 7 चतुर्थ पंचम	+0.80	16.6	+2.3
बीटलज्यूस	के 5 तृतीय	+0.85	68	−0.7
एल्फाक्रूसिस (एक्रक्स)	बी θ .5 पंचम	+0.87	359	−3.2
एण्टेरिज	एम 1 प्रथम बी	+0.98	326	−2.6
स्पाइका	बी 1 पंचम	+1.00	258	−2.4
फोमैल्हॉट	ए 3 पंचम	+1.16	22	+2.0
पोलक्स	के θ तृतीय	+1.16	36	+1.0
डैनेव	ए 2 प्रथम ए	+1.26	1826	−4.8
वीटा क्रूसिस	बी θ.5 चतुर्थ	+1.31	424	−3.5
रैगुलस	बी 7 पंचम	+1.36	84	−0.7
अढर	बी 2 द्वितीय	+1.49	489	−3.0
कैस्टर	ए θ	+1.59	46	+1.0
शोला	बी 2 चतुर्थ	+1.62	274	−1.3
वैलाट्रिक्स	बी 2 तृतीय	+1.64	359	−1.3

3.6 सारांश-

आकाशमें कई ऐसे स्वरुप हमें दिखतेहैं, जिनका अवलोकन कर उनके बारे में हमें जानने की इच्छा होती हैं| टिमटिमाते हुए असंख्य तारें भी उन स्वरूपों में से एक हैं, जिनके बारे में हमें जानने की जिज्ञासा होती हैं हम पृथ्वी के सापेक्ष तो उसे देखते हैं , परन्तु वही तारे नजदीक से कैसे दिखाई देते हैं , उनका स्वरुप कैसा होता है , उनका इकाई के अध्ययन के बाद बोध कर पायेंगे |

3.7 बोधात्मक प्रश्न

1. तारे स्वयं प्रकाशित उष्ण गैस की द्रव्यमात्रा से भरपूर विशाल है |

{क} ग्रह पिण्ड {ख} खगोलीय पिण्ड {ग} गैलेक्सी{घ} गैस पिण्ड

2. आकाश गंगा का लगभग कितना भाग तारों से बना है |

{क} 95 प्रतिशत {ख} 96 प्रतिशत {ग}97 प्रतिशत {घ } 98 प्रतिशत

3. तारों का निर्माण किन दो गैसें से मिलकर होता है |

{ क} हाइड्रोजन एवं हिलयम {ख } हाइड्रोजन एवं नाइट्रोजन {ग} नाइट्रोजन आक्सीजन

4. तारों का गर्भीय तापमान होता है |

{ क}2000000० {ख }20000000० { ग }200000०{घ} 20000०

3.8 पारिभाषिक शव्द

तारा – तारास्वयं प्रकाशित उष्ण गैस की द्रव्यमात्रा से भरपूर विशाल खगोलीय पिण्ड

तारा पुंज - तारों के प्रकाश को तारापुंज कहते हैं |

खगोलीय पिण्ड – खगोल में स्थित ग्रहपिण्ड को खगोलीय पिण्ड कहते हैं |

वेध शाळा – वह स्थान जहाँ यंत्रों के द्वारा वेध किया जाता है|

3.9 वोध प्रश्नों के उत्तर –

1. ख

2. घ

3.क

4. ख

3.10 *सन्दर्भ ग्रन्थ सूची*

- *सूर्य सिद्धान्त*
- *ब्रह्माण्ड और सौर परिवार*
- *भारतीय ज्योतिष*
- *ऋग्वेद सायण भाष्म*
- *उपयोगी पुस्तक*
- *ब्रह्माण्ड और सौर परिवार*

3.11 निबन्धात्मकप्रश्न –

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिये

1. तारों को परिभाषित करते हुए उत्पति के विषय में लिखिए –

2. तारों के महत्व को बताये

इकाई-4 सौर परिवार

इकाई की संरचना

4.1 *प्रस्तावना*

4.2 *उद्देश्य*

4.3 *विषय – परिचय*

4.*4.*सौर–परिवार की उत्पत्ति

4..*4.1* वैज्ञानिकों की दृष्टि में सौर–परिवारोत्पत्ति-

4.4.2 बफन की संघर्षण परिकल्पना-

4.4.*3* चैमबरलेन एवं मोल्टन की ग्रहाणु परिकल्पना

4.4.*4* जीन्सजेफ्रीज की ज्वारीय परिकल्पना

4.4.*5* रसेल की युग्मतारा परिकल्पना

4.4.*6* फ्रेडहायल की नवतारा परिकल्पना

4.*5* नीहारिका–ग्रहाणु परिकल्पनाओं में तुलना

4.*5.1 सूर्य*

4.*5.2* पृथ्वी का भौतिक स्वरूप

4.*5.3* भूपटल

4.*5.4* भूपटल में रासायनिक योग

4.*5.5* भूपटल के अणुओं का योग

4.*5.6* पृथ्वी का अन्तर्भाग

4.*6 सारांश*

4.*7 अभ्यास प्रश्न*

4.*8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर*

4.*9 संदर्भ ग्रन्थ सूची*

4.*10 सहायक पाठ्य सामग्री*

4.*11 निबन्धात्मक प्रश्न*

4.1 प्रस्तावना–

सृष्टि विज्ञान से सम्बन्धित द्वितीय प्रश्नपत्र के ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्य नामक तृतीय खण्ड की आकाशगंगा नामक पहली इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकते हैं कि सृष्टि विज्ञान में क्या है। सृष्टि प्रक्रिया में सौर- परिवार का स्थान एवं भूमिका क्या है। ब्रह्मण्ड के स्थूल सदस्यों में सौर परिवार किसे कहते हैं। ये भी इस इकाई के अन्तर्गत हम जान पायेंगे।

4.2 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्
- आप वैदिक सृष्टि की संरचना एवं सौर – परिवार के बारे में जान पाएंगे
- सौर-मण्डल किसे कहते हैं ये बोध कर पायेंगे।
- सौर-परिवार का सृष्टि प्रक्रिया में क्या महत्व है, बता सकेंगे।
- ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत इसके स्वरूप को जान पायेंगे।

4.3 विषय–परिचयसौर–परिवार

सूर्य का परिवार ही सौर–परिवार कहा जाता है। इसी को सौरमण्डल भी कहते हैं। इस ब्रह्माण्ड में असंख्य सूर्य हैं तथा असंख्य ही सौर–परिवार भी विद्यमान हैं। इन सारे सौर–परिवारों में हमारा सौर–परिवार अलग तरह का है क्योंकि अभी तक जीवन हमारे ही सौर–परिवार में दिखाई देता है। ऐसा नहीं कि अन्य सौर–परिवार जीवनविहीन हैं परन्तु अभी तक ऐसे अन्य सौर–परिवार का अन्वेषण नहीं हुआ जिसमें जीवन हो। अवश्य निकट भविष्य में हमारे सौर–परिवार का साथी खोज निकलेगा। इस प्रक्रिया में वैज्ञानिक सतत प्रत्नशील हैं। प्रत्येक सौर–परिवार का संचालक उसका सूर्य (तारा) होता है। हमारा सूर्य नौ ग्रहों के परिवार का मुखिया है। ये ग्रह हैं– बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेप्च्यून और प्लूटो। इन ग्रहों के कम–से–कम 65 उपग्रह, सैकड़ों क्षुद्रग्रह हैं। सूर्य के ही परिवार में धूमकेतुओं और उलकापिंडों को भी माना जाता है।

चित्र 1. – सौर मंडल

हमारी आकाशगंगा के केन्द्र प्रायः 30000 से लेकर 33000 प्रकाश वर्ष दूर एक कोने में हमारा सौर–परिवार स्थित है। गैस और धूल (अन्तरिक्ष धूल) की घूमने

वाली पट्टी, जिसे आदि सौर नीहारिका भी कह सकते हैं, इसका जन्म हुआ। इसी घूमने वाली पट्टी से ग्रहमण्डल के सभी सदस्यों की उत्पत्ति हुई। ग्रहों के लिए प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द 'प्लैनेट' ग्रीक शब्द 'प्लेनेटेस' से निकला है। इसका अर्थ होता है घुमक्कड़ या यायावर। आकाश में हमेशा स्थिर दिखाई देने वाले तारों से अलग ये ग्रह अपनी स्थिति बदलते रहते हैं इसीलिए इन्हें 'प्लेनेट' या घुमक्कड़ कहा जाता है। ग्रहों का विभाजन आन्तरिक एवं बाह्य ग्रहों के रूप में किया गया है। बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल को आन्तरिक ग्रह तथा बृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेप्च्यून और प्लूटो बाह्य ग्रह हैं। पृथ्वी आन्तरिक ग्रहों में सबसे बड़ी और घनी है। सभी आन्तरिक ग्रह घने चट्टानों से बने हैं और इन्हें पार्थिव ग्रह कहा जाता है क्योंकि ये पृथ्वी के समान हैं। आन्तरिक ग्रहों में मात्र पृथ्वी और मंगल के ही उपग्रह हैं। बाह्य ग्रहों का एक बड़ा उपग्रहीय परिवार भी है। ये प्रायः हाइड्रोजन और हीलियम गैस से बने हैं। इनको बार्हस्पत्य या जोवियन कहते हैं क्योंकि ये सभी ग्रह प्रायः बृहस्पति के ही समान हैं। जोव ग्रीक भाषा बृहस्पति को ही सूचित करता है। भारत में इसे गुरु कहा गया है। सौर–परिवार में सबसे भारी गुरुत्व बल वाला ग्रह यही है इसलिए इसे गुरु कहा गया। सभी बाह्य ग्रह तीव्र गति से घूमते हैं। इनका घना वातावरण भी है। ये आन्तरिक ग्रहों की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म तत्वों से बने हैं। बाह्य ग्रहों में से प्लूटो अपने आप में इनसे कुछ भिन्न है क्योंकि यह आन्तरिक ग्रहों की तरह घना समझा जाता है। ये सारे ग्रह सूर्य की परिक्रमा दीर्घवृत्ताकार कक्षा में करते हैं जिसकी अवधारणा पूर्व काल में हमारे आचार्यों ने ग्रहों के उच्च और नीच को प्रदर्शित करते हुए की थी।

4.4 सौर–परिवार की उत्पत्ति

सौर–परिवार की उत्पत्ति ही नहीं अपितु ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति 'हिरण्याण्ड' से ही हुई। इस सन्दर्भ में शतपथ ब्राह्मण कहता है कि– आपो ह वा इदमग्रे सलिलमेवास। ता अकामयन्त कथं नु प्रजायेमहि इति। ता अश्राम्यन् तास्तपोऽयतप्यन्त। तासु तपस्तप्यमानासु हिरण्यांडं सम्बभूव। तददं यावत् संवत्सरस्य बेला, तावत् पर्यप्लव, ततः संवत्सरे पुरुषः सम्भवत्। सः प्रजापतिः। अर्थात् 'आपः' निश्चय ही आरम्भ में सलिलावस्था में ही था। इसमें स्वयंभू ब्रह्म द्वारा कामना हुई कैसे हम प्रजारूप फैलें। उन्होंने श्रम किया। उन्होंने तप तपा। उन तपती हुई आपों में हिरण्याण्ड उत्पन्न हुआ। यह हिरण्याण्ड एक वर्ष तक परिप्लव (चक्र में तैरना) करता रहा। तब संवत्सर बीत जाने पर पुरुष प्रकट हुआ। इस वचन में हिण्यगर्भ की पर्यप्लवन रूपी गति का स्पष्ट निर्देश

मिलता है। हिरण्याण्ड संवत्सर पर्यन्त तैरता रहा। यह काल गणना किन नियमों पर आधारित थी, एक ज्ञातव्य विषय है। कह सकते हैं कि ब्रह्म के संवत्सर पर्यन्त वह तैरता रहा। इस तरह का वर्णन वायुपुराण में भी मिलता है।

चित्र. 2 – सौर परिवार

यथा– अन्तस्तस्मिंस्त्विमे लोका अन्तर्विश्वमिदं जगत्।
चन्द्रादित्यौ सनक्षत्रौ सग्रहौ सह वायुना।।
लोकालोकं च यत्किंचिच्चाण्डे तस्मिन् समर्पितम्।
आपोर्दशगुणाभिस्तु बाह्यतोऽण्डं समावृतम्।।

अर्थात्– अन्दर उसके ये लोक, अन्दर सम्पूर्ण जगत्, चन्द्र, आदित्य, नक्षत्र, ग्रह, वायु के साथ उसमें थे। प्रकाश और अन्धकार से युक्त जो कुछ था, उस अण्ड में था। आपों से जो दश गुणा थे, बाहर से अण्ड आवृत था। क्या यह महद् अण्ड एक ही था? क्या उस एक ही अण्डे से अनगिनत सूर्य, चन्द्र, ग्रह, तारे आदि उत्पन्न हुए? क्या सम्पूर्ण सृष्टि एक ही प्रजापति से उत्पन्न हुई? इन सभी प्रश्नों का उत्तर विष्णुपुराण में उपलब्ध होता है। यथा–

अण्डानां तु सहस्त्राणां सहस्त्राण्ययुतानि च।
ईदृशानां तथा तत्र कोटि–कोटि शतानि च।।

अर्थात् सहस्त्रों (हजारों) अण्डों के हजारों, दश हजारों अण्डे थे। ऐसे अण्डे वहाँ करोड़ों–करोड़ों सौ में थे। पुनः इसी प्रकार का प्रसंग वायुपुराण में मिलता है। यथा–

अण्डानामीदृशानां तु कोट्यो ज्ञेयाः सहस्त्रशः।
तिर्यगूर्ध्वमधस्ताच्च कारणस्यायमात्मनः।।

अर्थात् ऐसे अण्डे सहस्त्रों करोड़ थे। ये तिर्यक, उर्ध्व (ऊपर) और अध (नीचे) थे। इन्हीं अंडों का फल ये दूरस्थ सृष्टियाँ (Galaxies) हैं। इस विचार की पुष्टि के लिए पं0 भगवद्दत्त महोदय ने अपनी पुस्तक वेद विद्या निदर्शन में 'डच' ज्योतिषी का मत उद्धृत किया। यथा–

The total number of stars in galactic system including the most distant and faint ones it estimated by the dutch astronamer Kapteyn, to whom we .....Most careful study of the Milky way to be about 40 billions.

अर्थात् हमारी एक सृष्टि (Galaxy) में तारों की संख्या करोड़ों से भी अधिक है। वस्तुतः करोड़ों सृष्टियाँ (Galaxy) उत्पन्न की। इस प्रकार सिद्ध होता है कि भारतीय चिन्तनधारा के ही अनुरूप वैज्ञानिक चिन्तनधारा भी आगे बढ़ी और विकसित हुई।

4.4.1 *वैज्ञानिकों की दृष्टि में सौर–परिवारोत्पत्ति-*

हमारे सौर–परिवार में दो प्रकार के ग्रह हैं– एक आन्तरिक और दूसरे बाह्य। आन्तरिक ग्रहों का निर्माण गुरु{ भारी } पदार्थों से हुआ है जबकि बाह्य ग्रहों में भारी पदार्थों की मात्रा अधिक नहीं है तथा आन्तरिक ग्रहों की अपेक्षा बाह्य ग्रहों के उपग्रहों की संख्या भी अधिक है। इस सन्दर्भ में वैज्ञानिक भी एक मत नहीं हैं। वैज्ञानिकों के भी दो वर्ग हैं जो दो पृथक्–पृथक् प्रकार से सौर–परिवार की उत्पत्ति मानते हैं, यथा–

(अ) एकरूपतावादी एकपैतृक परिकल्पना (Unifarmitacan and Uniparental Hypothesis)– एकपैतृक परिकल्पना के अनुसार सौमण्डल की उत्पत्ति एक ही वृहद् पिण्ड के मन्दक्रमिक परिक्रमा के विकास से हुई। इस सिद्धान्त में माना गया है कि सौर–परिवार की उत्पत्ति नीहारिका के मन्द क्रमिक परिभ्रमण से हुई। एक एकरूपतावादी परिकल्पना के कुछ विद्वान् एवं मत इस प्रकार हैं–

1. *काण्ट महोदय की नीहारिका परिकल्पना।*
2. *लाप्लास महोदय की नीहारिका परिकल्पना।*
3. *वाइजेकर की नीहारिका परिकल्पना।*
4. *अल्फवेन की विद्युत् चुम्बकीय परिकल्पना।*
5. *कुइवर की नीहारिका परिकल्पना।*
6. *उल्कापिण्ड परिकल्पना।*

अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में मुख्य रूप से पश्चिमी विद्वानों के अनुसार पृथ्वी एवं अन्य ग्रहों के उद्गम की वैज्ञानिक व्याख्या प्रारम्भ होती है। पश्चिमी विद्वानों के अनुसार इस शताब्दी से वैज्ञानिकों ने प्रत्येक परिकल्पना का विवेचन प्रारम्भ किया। खगोल विद्या का विकास मुख्य रूप से मनगढ़न्त कल्पनाओं के लिए अच्छा नहीं रहा। इसका श्रेय सर्वप्रथम जर्मन दार्शनिक काण्ट को जाता है जिन्होंने सन् 1755 में एक पुस्तक लिखी कि– ''मुझे पदार्थ दो मैं सृष्टि की रचना कर दूँगा''। इस पुस्तिका में आपने पृथ्वी एवं आकाशीय पिंडों की उत्पत्ति के बारे में लिखा, परन्तु एक दार्शनिक की प्रस्तुत कृति की ओर वैज्ञानिकों का ध्यान 40 वर्ष बाद आकृष्ट हुआ। काण्ट के सिद्धान्त से प्रायः मिलता–जुलता परन्तु गणित की दृष्टि से उससे कई अच्छा एक

नवीन सिद्धान्त प्रसिद्ध फ्रांसीसी खगोलज्ञ और गणितज्ञ लाप्लास (Laplace) ने उपस्थिति किया। काण्ट और लाप्लास दोनों ने ही सौर–परिवार की उत्पत्ति नीहारिका सिद्धान्त (नव्युलर हाईपाथिसिस) के आधार पर की। ये लोग मानते थे कि सूर्य और ग्रहों उपग्रहों की उत्पत्ति एक वृहद् नीहारिका से हुई। यह नीहारिका गैस एवं अति सूक्ष्म विश्व धूल मेघ कणों से बनी है। सूर्य गैस के गोले के रूप में नीहारिका के मध्य में स्थित है। केन्द्राकर्षण शक्ति के कारण यह नीहारिका इसके चारों तरफ घूमती है। नीहारिका में स्थित छोटे–छोटे कणों में संघर्ष होने लगा, जिससे कणों ने सिमट कर छोटी–छोटी नीहारिकाओं का रूप ले लिया। यही नीहारिकाएँ ग्रह और उपग्रह बने। यह सिद्धान्त लगभग 200 वर्ष तक निर्विवाद रहा। इसके पश्चात् इस पर प्रश्न उठने लगे। लाप्लास के नीहारिका परिकल्पना के अनुसार ग्रहों का निर्माण सौरपरिवार के बाहरी भाग से प्रारम्भ होना चाहिए तथा सबसे अंतिम में बुध ग्रह का निर्माण होना चाहिए। लाप्लास के अनुसार ग्रहों के निर्माण करने वाले वलय एक ही समतल धरातल में होंगे। इसलिए ग्रहों की कक्षाओं का झुकाव शून्य होना चाहिए परन्तु ऐसा नहीं है। दूसरी आपत्ति यह कि एक पिंड के चारों तरफ घूमता हुआ दूसरा कोई पिण्ड लें। उसकी दूरी और वेग पर एक साथ विचार करें तो कोणीय वेग प्राप्त हो जाता है। कोणीय वेग का स्थानान्तर तो हो सकता है परन्तु नाश नहीं, यह एक सिद्धान्त है। इसलिए सूर्य और ग्रहों का जो कोणीय संवेग है वह पहले गैस अभ्र (गैसीय) में ही केन्द्रित रहा होगा। इस समय सौर तन्त्र का तारा कोणीय सम्वेग बड़े ग्रहों में ही है, जबकि लाप्लास के अनुसार सूर्य में ही अधिकांश भाग होना चाहिए था।

इस कठिनाई को दूर करने के लिए हम सूर्य के चुम्बकीय क्षेत्र पर विचार कर सकते हैं। स्वीडन के वैज्ञानिक एच. आल्वेन (H. Alfven) का मत है कि ग्रहों की उत्पत्ति के पश्चात् चुम्बकीय बल के कारण सौर–घूर्णन मन्द पड़ गया और कोणीय सम्वेग सूर्य के मूल अभ्र से हट कर अवशिष्ट भाग में स्थानान्तरित हो गया। कुछ विद्वानों के विचारों में ग्रहों, उपग्रहों की रचना उल्काओं एवं उल्का कणों के सम्मीलन से हुई। इस विचारधारा के प्रवर्तकों में बेल्जियम निवासी निगन्दे एवं श्मिड़ महोदय का नाम प्रमुख है। इसके पश्चात् अब हम प्रलयवादी द्विपैतृक सिद्धान्तों की विवेचना करेंगे।

(आ) प्रलयवादी द्विपैतृक परिकल्पना (Calaclysmic fiparental hypothesis)– इस परिकल्पना के अनुसार हमारे सौर–परिवार की उत्पत्ति दो तारों के संघर्ष एवं विस्फोट आदि प्रलयकारी परिणाम से

हुई है। इस वर्ग में भी विभिन्न वैज्ञानिकों के मत एवं परिकल्पनाएँ निम्नलिखित हैं, इनमें से विशेष मतों की अलग से व्याख्या की गई है–

1. बफन की संघर्षण (भिड़न्त) परिकल्पना।
2. चेम्बरलेन एवं मोल्टन महोदय की ग्रहाणु परिकल्पना।
3. जीन्सजेफ्रीज की ज्वारीय परिकल्पना।
4. रसेल एवं लिटिलिटन की युग्मतारा पकिल्पना।
5. रासगन की विखण्डन परिकल्पना।
6. ए.सी. बनर्जी महोदय की 'सिफीड' परिकल्पना।
7. फ्रेडहायल की नवतारा परिकल्पना।

इन सिद्धान्तों के अनुसार सौर–परिवार की उत्पत्ति में प्रायः दो सहायक है। इसलिए इनको अर्थात् इन सिद्धान्तों के समूह को द्विपैतृक सिद्धान्त कहा गया। इनमें से विशेषकर महत्व रखने वाले सिद्धान्तों की सामान्य चर्चा अधोलिखित रूप से की गई है।

4.4.2 बफन की संघर्षण परिकल्पना-

सर्वप्रथम काण्ट महोदय से भी पूर्व सन् 1745 में फ्रांसदेशीय जार्जकातेदबफन महोदय ने एक वैज्ञानिक परिकल्पना प्रस्तुत की। इस परिकल्पना के अनुसार एक विशाल तारे की सूर्य के साथ जबरदस्त भिड़न्त हुई। इस संघर्षण से सूर्यांश पदार्थ विखंडित होकर सुदूर तक गया। इस सूर्यांश पदार्थ के द्वारा ही हमारे ग्रह एवं उपग्रह बने। इस प्रकार सौर–परिवार की उत्पत्ति हुई।

4.4.3 चैमबरलेन एवं मोल्टन की ग्रहाणु परिकल्पना

अमेरिकन विद्वान चैम्बरलेन और मोल्टन का कहना है कि सूर्य के समीप दूसरे तारे के आने से सूर्य में बड़ी उथल–पुथल मची होगी और सूर्य में गुरुत्वाकर्षण के कारण बड़ी–बड़ी उत्ताल तरंगे उठी होंगी। इसके कारण ही बहुत सारा सूर्यांश पदार्थ आकाश में जा गिरा होगा। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार चन्द्रमा में ज्वार आ जाता है। सूर्य से पृथम् हुआ यह सूर्यांश पदार्थ पहले आग के गोले की भाँति ही गर्म रहा होगा। शनैः–शनैः यह पदार्थ ठंडा होने लगा और सूर्य के आकर्षण में घूमते हुए इस पदार्थ ने ही ग्रह उपग्रहों का रूप धारण कर लिया।

4.4.4 जीन्सजेफ्रीज की ज्वारीय परिकल्पना

1919 ई. सन् में सर जीन्स महोदय ने ज्वारीय परिकल्पना का प्रतिपादन किया। 1919 ई0 वर्ष में जेफ्रीज महोदय ने जीन्स महोदय की परिकल्पना में संशोधन किया। इस परिकल्पना के अनुसार

आदिकालीन स्थिति में सूर्य एक गैसीय पिंड था। एक तारा घूमता हुआ सूर्य के समीप आया। इस घूमते हुए तारे के कारण सूर्य में ज्वार की उत्पत्ति हुई अर्थात् सूर्य में ज्वार रूप में उभार आया। कालान्तर में वह तारा घूमता हुआ विलीन हो गया। सूर्य और तारे के मध्य में जो पदार्थ उत्पन्न हुए थे वे 'सिगार' की आकृति में थे। ज्वारीय पदार्थों के पिण्ड धीरे–धीरे सूर्य के आकर्षण में आए और आकर सूर्य के चारों और घूमने आरम्भ हुए। इस प्रकार धीरे–धीरे सौर–परिवार की उत्पत्ति हुई।

4.4.5 रसेल की युग्मतारा परिकल्पना

श्री एच.एन. रसेल महोदय के अनुसार आदि काल में हमारे सूर्य के चारों तरफ एक तारा घूम रहा था। कुछ समय पश्चात् एक विशालकाय तारा घूमते हुए तारे के बाहर से गुजर रहा था। उसके आकर्षण से जो सूर्य का चक्कर लगा रहा था उससे वायव्य पदार्थ पृथक् हुआ। ये वायव्य पदार्थ ही सूर्य के चारों तरफ घूमते हुआ सौर–परिवार के रूप में परिणत हुआ।

4.4.6 फ्रेडहायल की नवतारा परिकल्पना

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के गणितज्ञ प्रो. फ्रेडहायल महोदय ने सन् 1939 ईस्वीय वर्ष में 'नेचर ऑफ दि यूनिवर्स' नामक एक निबन्ध लिखा। इसमें उन्होंने सौर–परिवार की उत्पत्ति की व्याख्या एक नूतन ढंग से की। इनके अनुसार सूर्य के समीपस्थ सुपरनोवा तारे में विस्फोट हुआ। उस विस्फोट के परावर्तन शक्ति के कारण सुपरनोवा तारे का केन्द्र भाग 'क्रोड' सूर्य के आकर्षण से बाहर निकल गया और वहाँ स्थित अवशिष्ट गैसीय मेघ (वायव्य पदार्थ) सूर्य के चारों तरफ घूमने लगा। इसी वायव्य पदार्थ ने सौर–परिवार का रूप धारण कर लिया।

4.5 नीहारिका–ग्रहाणु परिकल्पनाओं में तुलना

चित्र 3.– निहारिका

4.5.1–सूर्य

ऋग्वेद में सूर्यादि ग्रहों के उत्पत्ति के सन्दर्भ में विस्तृत व्याख्या करते

नीहारिका परिकल्पना	ग्रहाणु परिकल्पना
(क) सौर–परिवार की उत्पत्ति एक ही तारे से हुई।	(क) सौर–परिवार की उत्पत्ति दो तारों के संघर्षण से हुई।
(ख) आदि अवस्था में गैसीय पदार्थ विद्यमान था।	(ख) ग्रहाणु आदि ठोस अवस्था में थे।
(ग) आरम्भ में ऊष्मा अवस्था थी।	(ग) आरम्भ में शीतलावस्था थी।
(घ) तापमान क्रमशः न्यूनता की ओर आया।	(घ) तापमान क्रमशः बढ़ा।
(ङ) आदि अवस्था में वायुमण्डल था।	(ङ) आदि अवस्था में वायुमण्डल नहीं था।

हुए कहा गया है | कि सूर्य पूरे संसार की आत्मा है। यही जीवन को देने वाला है। सूर्य के बिना पृथ्वी में जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। यह सूर्य स्वयं जल कर हमें जीवन शक्ति प्रदान करता है। सूर्य से आने वाली ताप की मात्रा यदि कुछ ही परिवर्तित हो जाए तो पृथ्वी में जीवन का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। ताप की वृद्धि होने पर हम जल जाएँगे और ताप की न्यूनता होने पर ठंड से सिकुड़ कर मर जाएँगे। इसलिए सूर्य जगत् की आत्मा है। सूर्य को हम आदि में उत्पन्न होने के कारण आदित्य कहते हैं। आदित्य को ही सूर्य भी कहा गया है।

चित्र – 4 सूर्य

पृथ्वी–अन्तरिक्ष–द्यु की सृष्टि के पश्चात् द्यु स्थान में आदित्य की उत्पत्ति स्वीकार की गई। प्रजापति ने अपने सृजन कामना के अनन्तर वायु के सहयोग से अन्तरिक्ष के के मिथुनीभाव से सूर्य की उत्पत्ति हुई और अन्तरिक्ष में आप एवं अग्नि की मायास्वरूप वायु का स्वतंत्र अस्तित्व है इसलिए सूर्य में पार्थिवांश की बात निराधार हो जाती है। आदित्य में वायु, आपः तथा अग्नि का पूर्णतः समावेश होता है। इस रश्मिपुंज रूपी आदित्य में 'आपः' की सत्ता विद्यमान रहती है। जैसा कि शतपथ ब्रात्ण में कहा गया है कि आदित्य आपः का अधिष्ठान है जहाँ वह तपता है। वैदिक विज्ञान में ईश्वर की मूल आद्या भौतिक शक्ति को, जो त्रिकाल सत् है, अदिति प्रतीक से प्रतिष्ठित किया गया है। सृष्टि उत्पत्ति की ईश्वरीय कामना को वहन करने हेतु जब मूल आद्या शक्ति रचना के प्रधान चरण में नियोजित होती है तो उसकी वैदिक संज्ञा अप् या आपः है। कह सकते हैं कि वैदिक विज्ञान में

सृष्टि रचना हेतु नियोजित मूल शक्ति का प्रथम रूप या परिणाम 'आपः' कहा गया है। सूर्य में प्राण वायु, अग्नि, आपः का समावेश है परन्तु सूर्य में पार्थिवांश नहीं के बराबर है। इस पार्थिवांश के सन्दर्भ में एक योरोपीय वैज्ञानिक का मत निम्नांकित है, यथा–

The earth's density is same four times as great as the sun's since the mean density of the earth is 5.5 times that of water. That of the sun (taking the density of water as unity) is 1.4 already. We are beginning to glimpse the fact that the sun cannot be in a solid state for the constituent materials are on the everage much less dense. Then these solid materials of which the earth is compased.

The Sun's mean density which is only one quarter of the earth's and since the time of sacchi and lockyear it has been realised and repeatedly confirmed that the sun is a wholly gaseaus globe.

पृथ्वी का घनत्व सूर्य के घनत्व से प्रायः 4 गुना अधिक है। यदि पानी का घनत्व 1 माने तो पृथ्वी का घनत्व 5.5 होगा। इसी आधार पर सूर्य का घनत्व 1.4 है और गुरु का 1.3 है। घनत्व से स्पष्ट प्रतीत होता है कि सूर्य ठोस पिण्ड नहीं अपितु हल्की गैसों से बना है। अब हमें ठीक ढंग से समझने के लिए पृथ्वी को समझना होगा। पृथ्वी का व्यास प्रायः 12700 किमी0 है और इसका भार लगभग 66000000000000 टन है। सूर्य का व्यास पृथ्वी के व्यास से 109 गुना अधिक है। सूर्य इतना बड़ा है कि इसमें हमारी पृथ्वी जैसे 12 लाख पिण्ड समा सकते हैं परन्तु सूर्य पृथ्वी से 13 लाख गुणा भारी नहीं है, क्योंकि सूर्य हल्की गैसों से बना है। अर्थात् सूर्य का घनत्व पृथ्वी से कम है तथापि सूर्य पृथ्वी से प्रायः 330000 गुणा भारी है। यह हमसे प्रायः 149600000 किलोमीटर दूर है। ज्योतिष में इस दूरी को खगोलीय इकाई के रूप में ग्रहण किया जाता है। इस दूरी को एक मानकर अन्य ग्रहों की दूरियाँ नापी जाती हैं।

सूर्य की उत्पत्ति के विषय में ऋग्वेद के दशम मण्डल में एक ऋचा की व्याख्या में 'वैदिक सृष्टि' उत्पत्ति रहस्य' नामक पुस्तक में डॉ. विष्णुकान्त वर्मा महोदय ने कहा है कि सूर्य की उत्पत्ति के समय ही समस्त नक्षत्रों की उत्पत्ति होती है। उस समय कुछ लोक (सृष्टियाँ) जोड़े में उत्पन्न होते हैं जिन्हें राशियाँ (MULTIPLE STARS) कहते हैं। समस्त लोकों की उत्पत्ति हाइड्रोजन–हीलियम नामक युगल गैसों के साहचर्य से होती है। तत्व मीमांसक इस सूर्य को जब मूल शक्ति अदिति के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुआ देखते हैं तब ही यह समझना

चाहिए कि वे समस्त लोगों के उद्भव को ठीक प्रकार से देख रहे हैं। ऋग्वेद की ही एक अन्य ऋचा में कहा गया है कि किस प्रकार मूल आद्या शक्ति प्रकृति से आदि सृष्टि काल में प्रकट हुए महासूर्य हिरण्यगर्भ से कालान्तर में लोकों (पिण्डों) की उत्पत्ति हुई। इस उत्पत्ति की अन्तिम कड़ी मूल रूप सूर्य आज भी हमारे लिए ऊषाओं और दिन–रात का सृजन इसी प्रकार कर रहा है।

4.5.2 बुध-

बुध शशिज ,चन्द्रज,सोमपुत्र,त्विषीपुत्र, ज्ञ इत्यादि नामों से पुराणों में कहा गया है | यूनानी लोगों ने बुध को *Mercury* कहा| उनकी कथाओं के अनुसार बुध तेजी से एक देवता का संदेश दुसरे देवता को देता है | भारत में बुध को वेद शास्त्र का ज्ञाता कहा ज्ञा है , यथा –"नारायण बुधं प्राहुर्वेदज्ञानविदोबुध:"|1ब्रह्माण्ड पुराण पृ.5|१२३,१२४,१३० यह बुधग्रह सूर्य का समीपवर्ती ग्रह है | अन्य ग्रहों की अपेक्षा यह सूर्य ताप से अधिक प्रभावित है | प्रात:या सायं अर्थात सूर्योदय से पहले पूर्व में तथा सूर्यास्त के पश्चात पश्चिम में इसे देखा जा सकता है | बुध ग्रह पर वायु मण्डल नहीं है | इसका धरातल प्राय: चन्द्र के धरातल के सामान ही दिखाई देता है | चन्द्रमा के ही सामान इस का धरातल भी उल्का पिण्डों के टकराने से बने क्रेटरों से भरा पडा है |कुछ वैज्ञानिकों का मानना यह भी है कि बुध कभी शुक्र का उपग्रह रहा होगा | इस ग्रह का अक्षीय भ्रमणकाल पृथिवी की अपेक्षा बहुत कम है इसलिए यहाँ दिन काफी बड़ा होता है | मेरिनर 10 ने हमें बताया कि बुध के चारों और एक चुम्बकीय क्षेत्र भी है परन्तु वह पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र की अपेक्षा 100 गुना निर्बल है | बुध ग्रह प्राय: पृथ्वी के 59 दिनों में अपने अक्ष पर एक चक्कर लगा लेता है | इसको इस प्रकार भी कह सकते हैं कि बुध एक दिन हमारे 59 दिनों के बराबर होता है | चन्द्र की तरह बुध भी हमें घटती – बढती कलाओं के रूप में दिखाई देता है |बुध की इन कलाओं को दूरबीन से देखा जा सकता है | अमेरिकी अंतरिक्षयान मेरिनर – 10 ने 1974 में यह बताया कि बुध पर खड़े हैं तथा हाइड्रोजन व हीलयम का स्वल्प वायुमंडल है जो णा के बराबर है | इस ग्रह पर जीवन के अस्तित्व की कोई संभावना नहीं है |

चित्र-4 बुध

4.5.3 बुध ग्रह का भौतिक स्वरूप

1.सूर्य से दूरी	*57909100* कि. मी.
2. व्यसमान*4878* कि. मी.	
3.अक्ष परिभ्रमण काल	*58.6* दिन
4.सूर्य के चारों तरफ भ्रमणकाल	*87.97* दिन
5.द्रव्यमान	*0.055*{पृथिवी के सापेक्ष }
6.कक्षीय उत्केन्द्रता	*0.206* अंश
7.कक्षीय झुकाव	*7*०.00अंश भुकक्षीय तल से
8.कक्षीय गति	47.8{कि.मी./प्रति सेकेण्ड }
9.पलायनगति	4.2 {कि.मी./प्रति सेकेण्ड }
10. गुरुत्वाकर्ष्ण	0.38 {पृथ्वी=1}
11. घनत्व	0.98 {पृथ्वी=1}
12 पृष्ठीय तापमान	400०सेंटीग्रेट
13 उपग्रह संख्या	0 शून्य

4.5.4 शुक्र -

शुक्र, दैत्यगुरु, सित, उशना,काव्य, भार्गव आदि नामों से शुक्र को जाना जता है | आकाश में यह ग्रह बहुत चमकीला दिखाई देता है | शुक्र की खोज आकाश में आसानी से की जा सकती है | पश्चिम में सूर्य के अस्त के वाद सर्वाधिक चमकने वाला ही शुक्र होता है | शुक्र के सन्दर्भ में ब्रह्माण्ड पुराण में एक मत मिलता है कि –

भार्गवस्यरथ: श्रीमान तेजसा सुर्यसनिभ:|

पृथिवीस्म्भवैर्युक्तोना वा वर्णे हयोत्तमै: ||

श्वेत: पिशंग: सारंगोनील: पीतो विलोहित: |

कृष्णश्च हरितश्चैव पृषत प्रिश्निरेव च ||*1* व्रह्मांडपुराणपू.23\81-83

अर्थात भार्गव का रथ तेज में सूर्य के सदृश है | इसमें जो अश्व युक्त हैं वे पृथ्वी से उत्पन्न हैं | ये दश वर्ण के हैं – श्वेत, पिशंग, सारंग, नील, पीट, विलोहित, कृष्ण,हरित, पृषत| इतने वर्ण शुक्र की रश्मियाँ के द्योतक हैं | शुक्र का तेज सूर्य के सदृश है | इस सन्दर्भ में आधुनिक वैज्ञानिकों का कहना है कि –*venus reflects about 60 percent of the sunlight that falls upon it . 2*लाइफ ओं अवर वर्ल्ड्स पृ.102

सूर्योदय के पूर्व आकाश में तथा सूर्यास्त के बाद पश्चिम आकाश में प्राय:एक अधिक चमकीला तारा दिखाई देता है यही तारा शुक्र कहा जाता है | देहातों में इसे लोक सुकवा , भोर का तारा , सायंकाल का तारा आदि भिन्न रूपों में कहते हैं परन्तु वास्तविक रूप में यह तारा नहीं , शुक्र ग्रह है | यह ग्रह बहुत प्राचीनकाल से ही पहचाना जाता है |

वैदिक साहित्य में इसे शुक्र वें आदि नामों से जाना जता है | यूनानी लोगिसे 'कुप्रिस' और रोमन लोग इसे वीनस नाम से पुकारते हैं

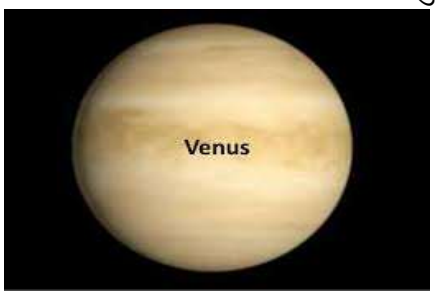

चित्र 5.-शुक्र

रोम में वीनस को सौन्दर्य की देवी कहते हैं | वें और वीनस शव्दों में अधिक साम्यता प्रतीत होती है | शुक्र ग्रह हमारी अपेक्षा सूर्य के अधिक पास है इसलिए उसे सूर्य से अधिक ऊष्मा मिलती है | शुक्र ग्रह को सूर्य की ऊर्जा हमसे ढाई गुना अधिक मिलती है | शुक्र का सतहीतापमान400०सेंटीग्रेटसे भी अधिक है| सोवियत संघ ने ' वेनेरा' और अमेरिका ने मेरिनर नामक विमान शुक्र की खोज के निमित्त शुक्र पर भेजे | इन्होनें शुक्र ग्रह का अन्वेषण किया तथापि शुक्र ग्रह के सन्दर्भ में अनेक बातें अज्ञात हैं क्यूंकि शुक्र ग्रह की सतह इसके वायुमंडल के घने बादलों से ढकी है | इसी कारण शुक्र ग्रह के अक्षीय वेग के सन्दर्भ में वैज्ञानिकों के विभिन्न मत हैं | कुछ विद्वानों का मत है कि शुक्र एक दिन में अपनी धुरी का परिभ्रमण पूरा करता है ;परन्तु कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि २४३ दिनों में पूराकरताहै| अगर २४३ दिनों की बात सही है तो चन्द्र , बुध एवं शुक्र का प्राय : एकगोलार्द्धअधिकत्तर सूर्य की और रहता होगा | शुक्र ग्रह में एक विशेष बात और है जो अन्य ग्रह में नहीं है | शुक्र अपनी धुरी पे पश्चिम से पूर्व की और नहीं बल्कि पूर्व से पश्चिम की और चक्कर लगाता है | इसी बात को लेकर हम इसे सौर – परिवार का एक अद्भुत ग्रह कह सकते हैं | शुक्र पर वायुमंडल का दाब पृथ्वी की अपेक्षा 90 गुणा अधिक है | वायुमंडलमें 96 प्रतिशत कार्बन –डाइआक्साइड,3.4 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा अल्प मात्रा में अन्य कुछ गैंसे हैं , परन्तु आक्सीजन की मात्रा नहीं हैं | अत: जीवन की सम्भावना नहीं बन सकती |
इस ग्रह के अपने चन्द्र भी नहीं है | पृथ्वी से कई गुणा अधिक शक्तिशाली विद्युत विसर्जन शुक्र ग्रह के वायु मंडल में उत्पन्न होती है |

चित्र 6.
शुक्र जो चन्द्रमा की तरह दिखाई दे रहा है |

4.5.5 शुक्र ग्रह का भौतिक स्वरूप

1. सूर्य से दूरी	*108208900* कि.मी
2. व्यासमान	*12100*कि.मी
3. अक्षपरिभ्रमण काल	*243*दिन
4. सूर्य के चारों तरफ भ्रमण काल	224.7दिन
5. द्रव्यमान	0.8 पृथ्वी के सापेक्ष
6. कक्षीय उत्केन्द्रता	0.007 अंश
7. कक्षीय झुकाव	7०24भूकक्षीय तल से
8. कक्षीयगति	35.0 कि . मी. /सेकेण्ड
9.पलायन गति	10.3 कि.मी.\सेकेण्ड
10. गुरुत्वाकर्षण	0.89 पृथ्वी =1
11.घनत्व	0.88 पृथ्वी=1
12.पृष्ठीय तापमान	450०सेंटी ग्रेट
13.उपग्रह संख्या	0शून्य

चित्र.7

शुक्र ग्रह

चित्र. 8 – शुक्र ग्रह

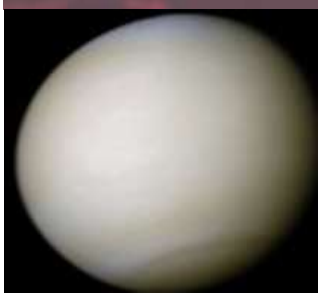

4.5.6 चंद्रमा –चन्द्र ही एक ऐसा ग्रह जिसने सर्वप्रथम मनुष्य को सर्वाधिक आकर्षित किया | भारतीय वैदिक एवं वैदिकेत्तर साहित्य में शशि , इन्दु, विधु, चन्द्र, कलाधर, हिमगु, शीतांशु,क्षपाकर, हिमांशु शीतरश्मि, प्रलेयांशु, सोम, शशांक, मृगांक हिमकर , सुधांशु रजनीकर आदि नामों से जाना जाता है | चन्द्र ही एक ऐसा पृथ्वी का उपग्रह है जिस पर मनुष्य के चरण पद चुके हैं |

प्रजापति ने सर्व प्रथम भूमि अथवा भुमितत्व कोउत्पन्न किया | इसके पश्चात मरूत गण आदि उत्पन्न हुए तदनन्तर प्रजापति ने आदित्य की सृष्टि की तथा आदित्य से चंद्रमा उत्पन्न हुआ | इससंदर्भ में माध्यान्दिन मुनि का प्रवचन है कि –सोकाम्यत | भूय एव

स्यात | प्रजायेतेति| स आदित्येन दिवं मिथुनम सम्भवत | तत अंडम समवर्तत | तद अभ्यभृशत| रेतो विवृहीति| तश्चन्द्रमासृज्यत| एष वे रेत| अथ यदश्रु संक्षरितमासीत, तानि नक्षत्रान्यभवन| अथ य कपाले रसो लिप्त आसीत् ता अवानतर दिशो अभवन |
अथ यत क्पामासीतता दिशो अभवन |1शतपथब्रहामन6| 1| 2| 4पुन:इसी सन्दर्भ में अन्य विचार भी उपलब्ध होते हैं| यथा –'आदित्याद्वै चन्द्रमा जायते"2ऐतरे ब्रहामण 40 | 5अर्थात आदित्य से चंद्रमा की उत्पत्ति हुई | पुन:चन्द्रमा मनसो जात:3 तैत्तरीय आरन्यक3|12| ऋग्वेद संहिता 10|90|10अर्थात चन्द्र का चन्द्रत्व आह्लादकारी गुण प्रजापति के मन से उत्पन्न हुआ|पुराणों में भी इसका वर्णन कुछ इस प्रकार आया | यथा – रिक्षचन्द्रग्रहा सर्वे विज्ञेया : सूर्य सम्भवा:'6वायुपुराण{1|24|१३०}
शीतरश्मि: समुत्पन:कृतिकासुनिशाकर:'7|{ब्रह्माण्ड पुराण 1|24| 130}

3.4 चन्द्रोत्पत्ति के सन्दर्भ में पाश्चात्य मत-

पाश्चात्यविद्वान मानते हैं कि चंद्रमा कीपृथ्वी से हुई है | चार्ल्स डार्विन महोदय के पुत्र जार्ज एच . डार्विन महोदय के मत को लिखते हुए गेमो कहते हैं –*The Problem Of the Origin of the moon can Be Regarded as disturbing to the tidal theory . Being Smaller than the erth the moon camleted earlier. Being Smaller Then The Earth the moon camleted earlier the process of cooling and shrinking and the lunar volcanoes had already ceased to be active. It is assumed that the moon Possesser a higier specific weight than the erth .*

It is assumed that the moon was produced from the superficial layers of the erth's body which are rich in light silicon.

But since the specific weight of the moon is greater than that of the erth it would sum to be movein accord with the theory that earth was born of the moon despite its smallness.

3.5 चन्द्रमा का भौतिक स्वरूप -

चन्द्रहीपृथ्वी का एकमात्र उपग्रह है | यह पृथ्वी की अपेक्षा बहुत छोटा है | इस ग्रह का कक्षीय भ्रमण एवं अक्षीय भ्रमण तुल्य है | इसको ऐसा भी कह सकते हैं कि जितने समय में चन्द्र अपनी कक्षा में एक चक्कर पूरा करता है उतने ही समय में वह अपने अक्ष पर भी घूमता है | चन्द्रमा लगभग एक किलो मीटर प्रति सेकेण्ड के वेग से 27 दिन 7 घंटे , 43 मिनट , 11 सेकेण्ड में पृथ्वी की एक परिक्रमा पूरी करता है | इतने ही समय में अपने अक्ष धुरी पर एक चक्कर काट लेता है | इसलिए चन्द्र का एक गोलार्द्ध सदा पृथ्वी की और रहता है |

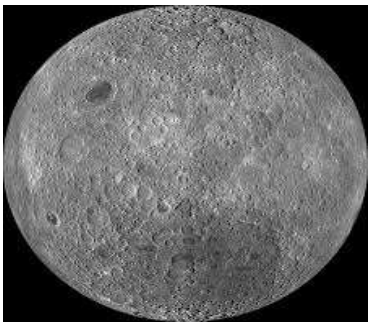

चित्र – 9 चन्द्र चित्र 10

चन्द्रमा और पृथ्वी

पृथ्वी से हमें चन्द्र का दुसरा गोलार्द्ध कभी नहीं दिखाई देता है | चन्द्रमा पर वायुमण्डल नहीं है | इसलिए वहाँ जीवन की सम्भावना नहीं है | वहाँपर जलविहीन मरुस्थल दिखाई देता है | चन्द्रमापर उल्का पिंडों की वृष्टि होती रहती है जिसके कारण वहाँ बहुत गहरे गड्डों { गर्तों} की संख्या अधिक है | उन गर्तों के आकार विभिन्न प्रकार के हैं | चन्द्रमा पर पृथ्वी की अपेक्षा अति उतंग पर्वत शिखर हैं | चन्द्रमा के दक्षिण ध्रूव प्रदेश में सबसे ऊँचा पर्वत शिखर १०६६० मीटर का है | यह पृथ्वी के एवरेस्ट से भी ऊँचा है | वायु मण्डल के अभाव में यहाँ ध्वनि का संचार नहीं होता | ध्वनि संचार के लिए किसी माध्यम की आवश्यकता होती है | वायुमंडल के अभाव के कारण चंद्रमंडल से आकाश का वर्ण काला दिखाई देता है | चंद्रमंडल में दिन के समय का तापमान 110 ० सेंटीग्रेट तक पहुंच जाता है जबकि रात का तापमान शून्य से नीचे 180 ० सेंटीग्रेट तक उतर आता है | पृथ्वी की अपेक्षा चन्द्रमा की गुरुत्वाकर्षण शक्ति 1\6 भाग है अर्थातजिस वास्तु का वजन पृथ्वी पर 60 कि.ग्रा.होगा उसका वजन चन्द्रमा पर केवल 10 कि.ग्रा. ही होगा | मनुष्य चन्द्र की मिट्टी व पाषाण खंडों को पृथ्वी पर लाया है और चन्द्रमा की सतह पर कई आधुनिक किस्म के यंत्र स्थापित के गए हैं जो नई नई जानकारियाँ हमें दे रहे हैं | चन्द्रकी भूमि पर लूनाखोद जैसी स्वचालित गाड़ियाँ भी उतारी गई हैं|

3.6 चन्द्रमा का भौतिक स्वरूप

1. पृथ्वी से दूरी	384400 कि.मी.
2. व्यस्मान	3476 कि.मी.
3. अक्षीय भ्रमण काल	27.6 दिन
4. कक्षीय भ्रमण काल	27.6 दिन
5. कक्षीय उत्केन्द्रता 0.055	
6. कक्षीय अवनतता {झुकाव}	5०से 9०
7. द्रव्यमान0.0123 {पृथ्वी=1}	
8.घनत्व3.34{ जल =1}	
9.गुरुत्वाकर्षण	0.165 {पृथ्वी =1}
10. पलायनगति2.38 {कि.मी.\सेकेण्ड}	
11. तापमान,अधिकतम	110०सेंटीग्रेट
न्यूनतम –	180०सेंटीग्रेट

चन्द्र ग्रहण की तरह पृथ्वी ग्रहण भी होता है | वास्तविक रूप में सूर्य ग्रहण ही पृथ्वी ग्रहण होता है क्योंकि चन्द्र की छाया पृथ्वी पर पड़ती है उसी का ग्रहण कहलाता है | प्रकाशमान वास्तु पर छाया तो पद ही नहीं सकती है | पृथ्वी ग्रहण लोक व्यवहार में ण होने के कारण हम उसे सूर्य ग्रहण के नाम से जानते हैं |

3.7 यदि चन्द्र ना होता तो –

1. पृथ्वी का अहोरात्र मान 11 से 12 घंटे तक का होता |
2. समुद्री ज्वार सदा एक रूप में ही आते | ज्वार की ऊँचाई भी कम होती |
3. गुरुत्वाकर्षण नियम का सत्यापन विलम्ब से होता है
4. चंद्रवार नहीं होता |
5. चन्द्रमा के बारह महीने नहीं होते |
6. भुमाधीयरेखीय भार की अपेक्षा ध्रुवीय भार अधिक होता |
7. सारी रातें अमावस्या की तरह अंधकारमय होती |

सूर्य,चन्द्र,पृथ्वी की गतियों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक समय ऐसा आयेगा जब ग्रहण नहीं होगा | ऐसा एसलिए होगा क्योंकि चन्द्र स्वकक्षा में पृथ्वी की परिक्रमा करते हुए कुछ दूर हट रहा है और पृथ्वी सर्पिलाकार कक्षा में सूर्य का चक्कर लगाते हुए सूर्य की तरफ जा रही है | यदि यह परिक्रिया आगे भी जारी रहती है तो एक ऐसा समय आएगा जब चन्द्र सूर्य का ग्रह होगा और पृथ्वी के उपग्रह के अभाव में ग्रहण का अभाव हो सकता है , परन्तु यह समय बहुत दूर है |

3.8 मंगल

ग्रह का वर्णन पुराणों में बहुत स्थानों पर दृष्टि गोचर होता है | और भौम , लोहितांग, अंगारक, सुरसेनापति, स्कन्ध, कुज, भूमिपुत्र कुमार आदि नामों से जाना जाता है | यथा-

सुरसेनापति: स्कन्ध: पठ्यतेअन्गारकोग्रह:|1

स्न्युद्वसुश्च यो रश्मि: सा योनिलोर्हितस्य तु ||2

अष्टाश्ववः कांचन: श्रीमान भौमस्यापि ग्रहों महान्|

पद्मरागारुनेरश्वे: संयुक्तो वह्निसम्भवै:||3

अष्टाश्व: कांचन: श्रीमान भौम्स्यापि रधोत्तम:||4

अर्थात अंगारक को सुरसेनापति अथवा स्कन्ध भी कहते हैं | संयुध वसु जो रश्मि है वह लोहित { मंगल} की योनि है |आठ अश्वों का सुवर्ण – तुल्य पद्मराग , अरुण और लोहित वर्ण अग्नि से उत्पन्न अश्वों वाला भौम का रथ है | मंगल{ कुमार} मंगल को भूमि पुत्र के नाम से भी जाना जाता है मंगल को सुर सेनापति अथवा युद्ध का देवता भी कहा जाता है | मंगल के लाल रंग के कारण प्राचीन भारतीय इसे अंगारक एवं लोहितांग कहा करते होंगे |

चित्र संख्या -11मंगल ग्रह

मेरिनर-9 और वाइकिंग टोहक यानों द्वारा भेजे गए चित्रों और आंकड़ों से ज्ञान हुआ कि मंगल का धरातल लाल मिट्टी का है जिसके कारण उसका वर्ण लाल दिखाई देता है | यह लाल मिट्टी सम्भवत: लिमोनाईट{ लोहे का एक आक्साइड } है| धरातल पर विभिन्न प्रकार के पत्थरोंके टुकड़े विखरे हुए हैं | मंगल पर धूल भरी आंधियाँ चलती हैं जिनके वायु मण्डल गुलाबी रंग का दिखाई देता है | मंगल आकार में पृथ्वी से छोटा है | जब यह पृथ्वी के पास होता है तो इसका परीक्षण आसानी से किया जा सकता है | ऐसी स्थिति प्रत्येक दो वर्ष बाद आती है जब मंगल और पृथ्वी सूर्य के एक ही और होते हैं | मंगल पर बालू के टीले उसी प्रकार दिखाई देते हैं जैसे पृथ्वी के रेगिस्तानों में | टोहक विमानों द्वारा ज्ञात हुआ कि मंगल की सतह पर सूखी नदी के विस्तृत मैदान , नहरें गहरे विशाल {गर्त } और घाटियाँ हैं | एक विशालत्तम गड्डा { गर्त }लगभग 500 कि.मी. लम्बा,120 कि.मी. चौड़ा तथा 6 कि.मी. गहराहै | मंगल के धरातल का आधा भाग क्रेटरों से भरा है जबकि दुसरे अर्द्ध भाग पर , सौर –परिवार के सर्वाधिक विशालकाय निष्क्रिय ज्वालामुखी पहाड़ दिखाई देते हैं | सबसे बड़ा ज्वालामुखी निक्स ओलम्पिका या ओलिम्पिस मान्सअपने आधार पर लगभग 600 कि.मी.चौड़ा है | मंगल की धुरी पृथ्वी की धुरी की भांति अपने कक्ष तल पर 24० कोण पर झुकी है , इसलिएवहाँ भी पृथ्वी की ही भांति मौसम होते हैं | वैज्ञानिकों की गणना के अनुसार , मंगल के अक्ष का झुकाव प्रति दश लाख वर्षों में अधिकतम 35 ० से न्यूनतम 15 ० के बीच परिवर्तित होता रहता है | मंगल अत्यंत निर्बल चुम्बकीय क्षेत्र है | मंगल पृथ्वी के दिनों के अनुसार 687 दिनों में सूर्य की एक परिक्रमा करता है | मंगल के दो उपग्रह हैं |

मंगल का भौतिक स्वरूप

सूर्य से दूरी	*225560000* कि.मी.
सूर्य से अधिकतम दूरी	*247040000* कि.मी.
सूर्य से न्यूनत्तम दूरी	*20700000* कि.मी.
विषुवत वृतीय व्यसमान	*6794* कि.मी.
धुर्वीयव्यासमान	*6752* कि.मी.

कक्षीय परिभ्रमण काल	*686.98* दिन
अक्षीय परिभ्रमण काल	*24*घंटा.27 मिनट .23 सेकेण्ड
कक्षीय उत्केन्द्रता	0०.092
कक्षीय झुकाव	1०51
द्रव्यमान	0.11 { पृथ्वी=1}
आयतन	0.15 { पृथ्वी=1}
अधिकतम तापमान	22 ० सेंटी ग्रेट
न्यूनतम तापमान	-70 सेंटीग्रेट
कक्षीय गति मान	24.00 कि.मी./सेकेण्ड
पलायन गति	5.0 कि.मी./सेकेण्ड
गुरुत्वाकर्षण	0.38 {पृथ्वी=1}
घनत्व	0.71 {पृथ्वी=1}
उप ग्रह	02

3.9 विशेष

मंगल के चन्द्र, हमारीपृथ्वी का एक चन्द्र है | पूर्व काल में लोगों को सौर – मण्डल के एक ही चन्द्र की जानकारी थी जो पृथ्वी का था | इसलिए चन्द्र शव्द से एक का ही ज्ञान होता था | इस समय हमारे सौर – मंडल में चन्द्रों की संख्या प्राय:65 से अधिक हो गई है | मंगल के फोबोस डिमास नाम के दो उपग्रह हैं | यूनानी भाषा में फोबास शब्द का अर्थ भय ,और डिमास शब्द का अर्थ 'संत्रास' होता है | फोबास उपग्रह एक अहोरात्र में मंगल की तीन परिक्रमा तथा डिमास एक अहोरात्र में पाँच परिक्रमा पूरी करता है |

फोबास उपग्रह को मंगल धीरे-धीरे अपनी और खींच रहा है | वैज्ञानिकों का मत है कि आज से 3-7 करोड़ वर्षों के अनन्तर फोबास मंगल के ऊपर गिरेगा |

मंगल के इन चन्द्रों की खोज आकाश में नहीं हुई,यह एक दिलचस्प बात है | अंग्रेजी के लेखक जोनाथन स्विप्ट ने 1726 में प्रकाशित अपनें कल्पित कथानक गुलिवर की यात्राएँ में जानकारी दी कि लापुत के खगोलविदों ने मंगल ग्रह के इन दो चंद्रों की खोज की है | स्विप्ट ने मंगल ग्रह के बारे में काफी हद्द तक ठीक कहा है | जोनानाथ स्विप्ट ने कैसे अनुमान लगया कि मंगल के दो चन्द्र हैं ? स्विप्ट से पूर्व 1610 में ही केपलर अनुमान लगा चुके थे कि मंगल के दो चन्द्र होने चाहिए थे क्योंकि इसी साल गैलीलियो ने वृहस्पति के चार चन्द्रों की खोज की थी | केपलर ने सोचा कि चन्द्रों की संख्या ज्यामितीय श्रेणी में बढ़नी चाहिए | पृथ्वी का एक चन्द्र , बृहस्पति के चार चन्द्र तो मंगल के इस आधार पर दो चन्द्र होने चाहिए | बहुत अधिक सम्भव है कि जोनाथन स्विप्ट को केपलर के इस अनुमान की जानकारी रही हो | जो भी हो,परन्तु स्विप्ट के समय तक तक इन दो चन्द्रों को आकाश में किसी ने नहीं देखा | सर्व प्रथम 1877 में इन दो चन्द्रों को आकाश में खोज पाना सम्भव हुआ | अमेरिकी खगोल विद ' आसफ हाल ' ने कई रातों तक निरन्तर प्रयाश करने पर एक शक्ति शाली दूरबीन से मंगल के इन दो चंद्रों को खोज निकाला |

फोबोस का भौतिक स्वरुप

1- भौम से दूरी	5955कि.मी.
2-व्यासमान	16 कि.मी.
3-कक्षीयपरिभ्रमण काल	7 घं . 39 मि . 14 से.
4- कक्षीय उत्केन्द्रता	0० 0 17
5- कक्षीय झुकाव	2०

िडमॉस का भौतिक स्वरूप

1. भौम से दूरी	23 4 90
2. व्यासमान	08कि.मी.
3. कक्षीय उत्केन्द्रता 0०.00 3	
4. कक्षीय परिभ्रमण काल	30 घं .18 मि.
5. कक्षीयझुकाव7०	

4.0 बृहस्पति –बृहस्पति हमारे सौर – परिवारका सबसे बड़ा ग्रह है | यह इतना बड़ा है कि हमारी पृथ्वी के आकार के 1300इसमें समासकते हैं | इसको हम ऐसा भीं कह सकते हैं कि बृहस्पति नामक थैले में हमारी जैसी 1300 पृथिवीयां आ सकती है | भारतीय वांग्मय में इसे सबसे बड़ा होने के कारण ही गुरु कहा गया है | भारतीय

आख्यानों के अनुसार गुरु को वृहस्पति, सुराचार्य, देवाचार्य, अंगिरस, वृहतेज, जीव आदि कहा गया है | यूनानियों ने इसे जुपिटर कहा | जुपिटर इनका प्रमुख देवता है | वेदों में वृहस्पति को अंगिरस कहा गया है | यथा –

वृहस्पति: प्रथमम जायमानो महो ज्योतिष: परमे व्योमन |

सप्तास्यस्तू विजातो रवेण विस्प्तरश्मिरधमत तमांसि||1 ऋग्वेद 4/50/4

अर्थात वृहस्पति पहले उत्पन्न होता हुआ , महान ज्योति से परम व्योम आकाश में सात मुख वाला , उच्च जन्म वाला , शव्द के साथ साथ रश्मियों से उसने दूर फेंक दिया अन्धकार को |

अन्य ग्रहों की तुलना में वृहस्पति ग्रह का गुरुत्वमानभौतिक स्वरुप अधिक है | इसीलिये यह गुरु हो गया | आधुनिक वैज्ञानिकोण के अनुसार गुरु का घनत्व सूर्य से किंचिद ही न्यून है | वृहस्पति की उत्पति तिष्य नक्षत्र से हुई ऐसा लोगों का मत है |-

वृहस्पति: प्रथमम जायमान: तिष्यम नक्षत्रम अभी सम्बभूव | 2 तैतरीय व्रहामन 3/1/1

वृहस्पति की उत्पत्ति पुष्य नक्षत्र से हुए यह मत समीचीन प्रतीत नहीं होता है | इसका प्रथम दर्शन पुष्य नक्षत्र में हुआ होगा , इसलिए ऐसा कहा गया होगा | पहले किसी ने कल्पना की थी कि वृहस्पति भी सूर्य के सदृश ही है परन्तु आज यह स्पष्ट हो चूका है कि सूर्य का पिण्ड ऊष्ण तथा वृहस्पति कि स्थिति भिन्न है | सर्व प्रथम तो यह कि सूर्य का पिण्ड उष्ण तथा वृहस्पति का पिण्ड शीतल है | इसके चारों तरफ का वायुमंडल हजारों किलोमीटर ऊँचा है | इसमें मुख्य रूप से हाइड्रोजन , मीथेन तथा एनोनिया जैसी विषैली गैसे है | ओक्सिजन का सर्वथा अभाव है | वृहस्पति का गुरुत्व बल पृथ्वी की अपेक्षा 2.64 गुना अधिक है | अत: पृथ्वी के किसी भी वस्तु का भार , गुरु पर 2.64 गुना अधिक होगा | वृहस्पतिप्राय: 78 करोड़ किमी की दूरी से सूर्य की परिक्रमा करता है | वृहस्पति कि कक्षा विशाल है , क्योंकि 13 कि.मी. प्रति सेकेण्ड के वेग से भी यह लगभग 12 साल में अपनी परिक्रमा पूरी करता है | कह सकते हैं कि पृथ्वी के 12 वर्षों के बराबर वृहस्पति का एक वर्ष होता है | अर्थात इसको हम ऐसा भी कह सकते हैं कि हमारी पृथ्वी के लगभग १०३६ दिनों का बृहस्पति का एक वर्ष होता है | जैसे कि हमने आप को कहा है कि गुरु पृथ्वी से १३०० गुना बड़ा है परन्तु यह यदि हम कहें कि पानी का घनत्व 1.0 है तो पृथ्वी का घनत्व इसी अनुपात में 5.5 होता है | जबकिवृहस्पति का घनत्व इसी अनुपात 1.3 ही है , फिर भी वृहस्पति पृथ्वी से ३१० गुना अधिक भारी है अगर वृहस्पति को छोड़कर सभी ग्रह – उपग्रहों का एक कल्पित पिण्ड भी बना लें तो भी ब्रिहस्प्ती इस पिण्ड से दुगुना बड़ा होगा | सूर्य वृहस्पति से १०४७ गुना बड़ा है | इससे अनुमान किया जा सकता है कि वृहस्पति वास्तव में कितना बड़ा है | इतना बड़ा होने पर भी यह ग्रह प्राय: 10 घंटे में अपनी धुरी पर एक चक्कर पूरा कर लेता है | कह सकते हैं कि इस ग्रह का दिन मात्र 10 घ.का होता है |

अभी तक के अनुसन्धान से ज्ञात हुआ है कि वृहस्पति के कुल 39 उपग्रह हैं | सर्वप्रथमदूरवीनके आविष्कारक गैलीलियों ने ही गुरु के 4 चन्द्रों {उपग्रह} को खोजा | इसी खोज के आधार पर मंगल को दो उपग्रह खोजे गये | वृहस्पति के चन्द्रों में से 4 चन्द्र ही बड़े हैं | शेष चन्द्र बहुत छोटे हैं | इन चार चंद्रों में भी दो चन्द्र तो चन्द्र तो बुध से बड़े हैं | इनके नाम हैं – गायनेमीड और कैलिस्टो | ईओ और यूरोपा नामक चन्द्र भी बड़े में से हैं परन्तु इनमे से भी ईओ बड़ा है | यह तो हमारे चन्द्र से भी बड़ा है | कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि वृहस्पति के चार चन्द्र उलटी दिशा में परिक्रमा करते हैं | निम्नलिखितभौतिक विवरण से ग्रह का प्राय: स्पष्ट स्वरुप ज्ञात होता है |

वृहस्पति का भौतिक स्वरूप –

1. सूर्य से दूरी *778333000* किलोमीटर
2. विषुवत वृतीय व्यस्मान *42880* किलोमीटर
3. धुर्वीय व्यस्मान *133540* किलोमीटर
4. अक्षीयपरिभ्रमण काल *9.9* घन्टे
5. कक्षीयपरिभ्रमण काल*11.9* वर्ष
6. द्रव्यमान {भार}*318.4{* पृथ्वी=1}
7. कक्षीय उत्केन्द्रता 0०.048
8. कक्षीय अवनतता 10अंश18कला
9. कक्षीय गति 13.0 0 कि.मी./प्रति सेकेण्ड
*10.*पलायन गति 60. 2 कि.मी./प्रति सेकेण्ड
*11.*गुरुत्वाकर्षण 02.64 { पृथ्वी=1}
*12.*घनत्व 0.23 { पृथ्वी=1}
*13.*पृष्ठीय तापमान - 140०सेंटी ग्रेट
*14.*उपग्रह 39

4.1 शनि – ‘‘शनैश्शनैचलतीतशनैश्चर:’’ अन्यग्रहों की अपेक्षा आकाश में जो ग्रह धीरे – धीरे चलता हुआ दिखाई दिया, उसे ही हमारे आचार्यों ने शनेश्चर अथवा शनि कहा | धीरे –धीरे चलने का पर्याय मन्द भी है | इसलिए इसको मन्द भी कहा गया| भारतीयपौराणिक साहित्य में इसे – सौरि, अर्क पुत्र , आर्कि, असित, क्रोड़, विरूप, यम,पिंगल , वभ्रू आदि नामों से भी जाना जाता है | जैसा कि पुराणों में भी मिलता है – कोणस्थ: पिंगलो बभ्रू:कृष्णो: रोद्रोऽन्तको यम:||१व्रह्मांड पुराण १/२४/४९-५०

पाश्चात्य ज्योतिषि इसे ‘सैटरन’ भी कहते हैं | यूनानी आख्यानों में सैटर्न जुपिटर शनि के पिता हैं , जबकि भारतीय आखायानों में इसे सूर्य पुत्र कहा गया है | रोमन लोग शनि को कृषि का देवता मानते हैं | हमारे सौर – परिवार में बृहस्पति

के पश्चात सबसे बड़ा ग्रह शनि आकाश में अत्यन्त सुन्दर एवं रमणीय दिखता है | यह हमारी पृथ्वी से *750* गुना बड़ा एवं सूर्य से *143*कि . मी . दूर है | शनि प्रति सेकेण्ड *9.6* कि . मी.की गति से सूर्य की परिक्रमा प्राय: *30* वर्षों में पूरी करता है | सूर्य से वृहस्पति जितना दूर है प्राय: उतना ही दूर वृहस्पति से से शनि है | जैसा कि आपको पूर्व मण बताया जा चुका है कि हमारी पृथ्वी से यह ग्रह *750* गुना बड़ा है अर्थात शनि के पिण्ड में हमारी *750* पृथ्वियां समा सकती हैं परन्तु यह इतनी पृथ्वियों के बराबर भारी नहीं है | यह केवल *95* पृथ्वियां के बराबर भार का ग्रह है | इस ग्रह का घनत्व जल के घनत्व से कम है जहाँ जल का घनत्व = *1* है वहीँ इस ग्रह का घनत्व =*0.7* घन से.मी . है |अगर शनि को किसी विशालकाय महासागर में डाल दिया जाय तो वह डूबेगा नहीं , बल्कि तैरने लग लग जाएगा | हमारे सौर-परिवार में सबसे कम घनत्व शनि का ही है | शनि ग्रह का दिन हमारे दिन से छोटा होता है क्यूंकि इस ग्रह का अक्ष – भ्रमण पृथ्वी के हिसाब से *10* घंटे , *14* मिनटों का ही है | अत: इसको ऐसा भी कह सकते हैं कि शनि क एक वर्ष में पृथ्वी के *25300* दिन होते हैं | सूर्य से अहिक दूर हों के कारण शनि के वायु मण्डल का तापमान - *1550* सेंटीग्रेट के आस-पास होता है | बृहस्पति की भांति शनि का वायु मण्डल भी हाइड्रोजन हीलयम , मीथेल, तथा एमोनिया गैंसों से बना है | शनि की सतह की अभी तक अधिक जानकारी नहीं हो पाई है , मात्र इसके चमकीले वायुमंडल को हम देख सकते हैं | नाभी तक की जानकारी के अनुसार चन्द्र मंगल एवं शुक्र की सतह की तरह शनि की सतह पर उतरना संभव नहीं है |

4.2 शनि का भौतिक स्वरुप

सूर्य से दूरी	*1426978000* किलोमीटर
विषुवत वृतीय व्यास	*120500* किलोमीटर
धुर्वीय व्यास्मान	*106900* किलोमीटर
अक्षीय परिभ्रमण काल	*10.3* घंटे
कक्षीय परिभ्रमण काल	*29. 5* वर्ष
द्रव्यमान	*95.2* पृथ्वी =*1*
कक्षीय उत्केन्द्रता	*0.०052 ,*
कक्षीय अवनतता	*2 ० 29'*
कक्षीय गति	*9.6 {* कि.मी./प्रति से *}*
पलायन गति	*36.2 {* कि.मी./प्रति से *}*
गुरुत्वा कर्षण	*01 .17* पृथ्वी =*1*
घनत्व	*0.13* पृथ्वी =*1*

पृष्ठीय तापमान	*-155* ० सेती ग्रेट
उपग्रह	*30*

4.3 **अरुण { यूरेनस } -** अरुण या यूरेनस हमारे सौर परिवार में सातवाँ ग्रह है | व्यास के आधार पर यह सौर मण्डल का तीसरा बड़ा और द्रव्यमान के आधार पर चौथा बड़ा ग्रह है | द्रव्यमान में यह पृथ्वी से *14.5* गुना अधिक भारी और आकार में पृथ्वी से *63* गुना अधिक बड़ा है औसत रूप से देखा जाय तो पृथ्वी से बहुत कम घना है – क्यूंकि पृथ्वी पर पत्थर और अन्य भारी पदार्थ अधिक प्रतिशत में विद्यमान हैं जबकि अरुण पर गैस अधिक है | ;इसलिए पृथ्वी से *63* गुना बड़ा आकार रखने के बाद भी यह पृथ्वी से केवल साढ़े चौदह गुना भारी है | यद्यपि अरुण को विना दूरबीन के आँखों से भी देखा जा सकता है , यह इतना दूर है और इतनी माध्यम रौशनी का प्रतीत होता है कि प्राचीन विद्वानों ने कभी भी इसे ग्रह का दर्जा नहीं दिया और इसे एक टिमटिमाता तारा ही समझा *13* मार्च *1781* में विलयम हर्शल ने इसकी खोज की घोषणा करी | अरुण दूरबीन द्वारा पाए जाने वाला पहला ग्रह था | इसके *15* उपग्रहों में से*17* की खोज *1986* में वायेजर *=1* यान द्वारा हुई है | अभी तक यूरेनस के *15* उपग्रहों की खोज हो चुकी है | इसका सबसे बड़ा चन्द्र 'टाइटेनिया ' है जिसका व्यास प्राय: *1600* कि.मी. के आसपास है | यूरेनस सर्वाधिक अक्षीय झुकाव के कारण इसके चन्द्र अन्य ग्रहों के सतह समकोण बनाए हुए परिक्रमा करते हैं |

***4.4* वरुण { नेपच्यून }** – यूरेनस की गति का सम्यक अध्ययन करते हुए सौरमंडल के इस आठवें ग्रह की खोज सन *-1846* में फ्रांस के खगोलविद ' लवेरिये' ने अपने कागज के पन्नों पर ही कर ली थी | गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत से यह ज्ञात होता है कि विश्व का हर पिण्ड एक दूसरे से आकर्षित होता है | व्यास के आधार पर यह सौर मण्डल का चौथा सबसे बड़ा ग्रह है | वरुण का द्रव्यमान पृथ्वी से *17* गुना अधिक है और अपने पडोसी ग्रह अरुण से थोड़ा अधिक है खगोलीय इकाई के हिसाब से वरुण की ग्रह पथ सूर्य से *301* ख.ई.की औसत दूरी पर है , यानी वरुण पृथ्वी के मुकाबले में सूरज से लगभग तीस गुना अधिक दूर है | वरुण को सूरज की एक पूरी परिक्रमा करने में *16479* वर्ष लगते हैं अर्थात वरुण का एक वर्ष *16479* पृथ्वी वर्षों के बराबर है |

4.5 यम { प्लेटो } – हमारे सौर मण्डल के इस नौवें ग्रह की खोज भी कुछ नेपच्यून की ही तरह *1930* में हुई | यूरेनस की कक्षा की गति एवं स्थिति की गडबडी ने ही पुन: वैज्ञानिकों को यह विचार करने को मजबूर किया कि नेपच्यून के परे भी कोई पिण्ड हो सकता है | प्रसिद्ध खगोल शास्त्री ; लोवेल *1905* ईसवीय वर्ष से ही इसकी खोज में जुट गये थे | लोवेल ने अफ्रिका के फ्लेगस्टाफ नामक स्थान एन इस कार्य के निमित

एक वेध शाला स्थापित की परन्तु सन *1916* में इनकी मृत्यु हो गई जिसके कारण ये इस ग्रह की खोज नहीं कर सके | इसके पश्चात अन्य वैज्ञानिकों ने खोज जारी रखी | *1929* में टाम्बो जो अमेरिकन थे , इन्होने इस ग्रह की खोज शुरू कर दी | इस समय तक आकाश के चित्र लेने की प्रक्रिया शुरू हो चुकी थी आर्थात तकनीकी विकाश काफी हो गया था इसी आधार पर कई रातों तक आकाश के ग्रह नक्षत्रों के चित्र लिए गये | अंततः टोम्बो ने इस ग्रह की खोज निकाला |जिसको प्लोटो नाम दिया गया | यूनान में प्लेटो को मृत्यु का देवता कहा जता है | इसलिए भारियों ने इसे यम कह दिया | कुछ लोगों ने इसे कुबेर कहा | *4.7* कि.मी. प्रति सेकेण्ड के वेग से चलते हुए यह *248* वर्षों में सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करता है | यह सूर्य से लगभग ६ अरब किलोमीटर दूरी पर स्थित है | खगोलज्ञों के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि प्लूटो ग्रह पृथ्वी से हल्का है |

इसका व्यास *1400* कि.मी. के आसपास है |

4.6 सारांश-

सौर मण्डल में सूर्य और वह खगोलीय पिण्ड सम्मलित है , जो इस मण्डल में एक दूसरे से गुरुत्वाकर्षण बल द्वारा बंधे हैं | किसी तारे के इर्द – गिर्द परिक्रमा करते हुई उन खगोलीय वस्तुओं के समूह को ग्रहीय मण्डल कहा जाता है जो अन्य तारे न हो , जैसे की ग्रह बौने ग्रह , प्राकृतिक उपग्रह , क्षुद्र ग्रह , उल्का , धूमकेतु और खगोलीय धूल | सूर्य और उसके ग्रह मण्डलीय को मिलाकर हमारा सौर मण्डल बनता है | इन पिण्डों में क्षुद्र ग्रह , बर्फीले पिण्ड , उल्कायें और ग्रहों के बीच की धूल शामिल है |

सौर मण्डल के चार छोटे आंतरिक ग्रह बुध , शुक्र , पृथ्वी और मंगल ग्रह जिन्हें स्थलीय ग्रह कहा जाता है , जो मुख्यतया पत्थर और धातु से बने हैं | और इसमें क्षुद्र ग्रह का घेरा , चार विशाल गैस से बने बाहरी गैस दानव ग्रह ; काइपर घेरा और विखरा चक्र शामिल है | काल्पनिक और्ट बादल भी सनदी क्षेत्रों से लगभग एक हजार गुना डोरी से प्रे मौजूद हो सकते हैं |

सूर्य से होने वाला प्लाज्मा का प्रवाह { सौर हवा }सौर मण्डल को भेदता है यह तारे के बीच के माध्यम में एक बुलबुला बनाता है जिसे हेलिओमंडल कहते हैं जो इससे बाहर फ़ैल कर विखरी हुई तश्तरी के बीच तक जाता है |

4.7 बोधात्मक प्रश्न –

1. सौर मण्डल को ..... भी कहा जाता है |

क . ग्रह ,

ख. राशि,

ग.नक्षत्र

घ. सौर – परिवार

*2.*चन्द्र ही एक ऐसा ग्रह जिसने सर्वप्रथम मनुष्य को सर्वाधिक.....किया |

क .आकर्षित

ख . अचम्भित

ग. विस्मित

घ. कोई नहीं

3. रोम में शुक्र { वीनस }को .....कहतें हैं

क . सौन्दर्य की देवी

ख. देवता

ग. शुक्राचार्य

घ.कोई नहीं

3. लोहितांग किसका पर्यायी है

क. सूर्य

ख. चन्द्र

ग. मंगल

घ. शनि

4. पृथ्वी से हमें चन्द्र का दुसरा गोलार्द्ध कभी नहीं दिखाई देता है |

क. सत्य

ख. असत्य

4.8 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

1. घ. सौर – परिवार

2. क .आकर्षित

3. क . सौन्दर्य की देवी

4. ग. मंगल

4.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. सौर – परिवार के बारे में विस्तृत रूप से बताएं |

2. चन्द्र के भौतिक स्वरूप के बारे में लिखिए |

3. सौर मण्डल में पृथ्वी के स्वरुप का क्या महत्व है स्पष्ट कीजिये |

4. यूरेनस का अस्तित्व क्या है विस्तार से बताएं |

4.10 संदर्भित पाठ्यग्रन्थ –

5. *सूर्यसिद्धान्त*
6. *ब्रह्माण्डऔरसौर–परिवार*
7. *भारतीय ज्योतिष*
8. *ऋग्वेदसायण भाष्य*

4.11 उपयोगीपुस्तक

ब्रह्माण्डऔरसौरपरिवार

इकाई –5 पृथ्वी

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 विषय – परिचय पृथ्वी

5.4. पृथ्वी का भौतिक स्वरूप

5.6 अभ्यास प्रश्न

5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

5.9 सहायक पाठ्य सामग्री

5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना–

सृष्टि विज्ञान से सम्बन्धित द्वितीय प्रश्नपत्र के ब्रह्माण्ड के स्थूल सदस्य नामक तृतीय खण्ड की*पृथ्वी नामक पांचवीं* इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकते हैं कि *सौर- परिवारमें पृथ्वी का क्या स्वरुप है*। *सौर-परिवार* में *पृथ्वी* का स्थान एवं भूमिका क्या है। *सौर-परिवार के अन्तर्गत पृथ्वी का स्वरूप तथा* ब्रह्मण्ड के स्थूल सदस्यों में *सौर परिवार*किसे कहते हैं। ये भी इस इकाई के अन्तर्गत हम जान पायेंगे।

5.2 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्
- आप वैदिक सृष्टि की संरचना एवं *सौर – परिवारके बारे में जान पाएंगे*
- *सौर-मण्डल*किसे कहते हैं ये बोध कर पायेंगे।
- *सौर-परिवार*का सृष्टि प्रक्रिया में क्या महत्व है, बता सकेंगे।
- ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत इसके स्वरूप को जान पायेंगे।

5.3 पृथ्वी *का स्वरुप*

एक समय आकाश में सर्वत्र वाष्प कण (गैस) व्यापक रूप से व्याप्त थे। वाष्प कणों के आकर्षण एवं विकर्षण से अणु–परमाणुओं की उत्पत्ति हुई। ये ही अणु परमाणु पृथ्वी की उत्पत्ति में कारणस्वरूप हैं। जैन दर्शन इसकी व्यापक चर्चा करता है, यथा–

अण्वादीनां संघाताद द्व्यणुकादय उत्पद्यन्ते।
तत्र स्वावस्विताकृष्टशक्ति रेवापसंयोगे कारणभावामापद्यते।।

इस सन्दर्भ में श्रुति कहती है– ''आकाशाद्वायुर्वायोरग्निरग्नेरापः अद्भयः पृथ्वी चोत्पद्यते'' अर्थात् आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथ्वी उत्पन्न हुई। इससे ज्ञात होता है कि आरम्भ में मात्र आकाश व वाष्प कण ही समस्त जगत्–मण्डल में व्यापक रूप से व्याप्त थे। इन्हीं के आकर्षण–विकर्षण से सृष्टि हुई। हमारी पृथ्वी का भूमध्यरेखीय व्यास मान 12756 किलोमीटर है तथा ध्रुवीय व्यास 12714 किलोमीटर है। इसके चारों तरफ वायुमण्डल का एक मोटा आवरण है जो अन्तरिक्ष से आने वाली घातक विकिरणों एवं उल्कापातों से हमारी रक्षा करता है। पृथ्वी के धरातल का 71 प्रतिशत भाग जल से ढका है तथा शेष भाग ही भूतल के रूप में जाना जाता है जिस पर दुनिया के सभी महाद्वीप हैं। पृथ्वी का एक चुम्बकीय क्षेत्र भी है और इसके चारों और आवेशित कणों की दो विकिरण पट्टियाँ हैं जिन्हें वान एलेन विकिरण पट्टियाँ कहते हैं। पृथ्वी अपनी धुरी पर झकोरा खाते हुए लट्टू के समान घूमती है। इस प्रकार अक्ष 26000

वर्षों में लट्टू के आकार में घूमते हुए एक चक्कर पूरा करती है। इसी के आधार पर तारों के सापेक्ष ध्रुव की स्थिति बदलती रहती है। वर्तमान में 'पोलरिस' तारा हमारा ध्रुव तारा है। परन्तु लगभग सन् 14000 तक 'लीरा' नक्षत्र मण्डल में स्थित 'वेगा' तारा ध्रुव तारा हो जाएगा। भारतीय ज्योतिष में कमलाकर भट्ट ने सर्वप्रथम ध्रुव तारे को चल–तारा कहा और यह स्पष्ट रूप में कहा कि ध्रुव स्थिर नहीं है, वह स्थान बदलता है। हमारी 'पृथ्वी सौरमण्डल का सबसे बड़ा ग्रह नहीं है। बुध, शुक्र, मंगल से हमारी पृथ्वी बड़ी है परन्तु शनि, बृहस्पति, यूरेनस तथा नेपच्यून से छोटी है। सौर–परिवार का सबसे बड़ा ग्रह बृहस्पति है। यह हमारी *पृथ्वी* से 1300 गुना बड़ा तथा 318 गुणा भारी है। कह सकते हैं कि बृहस्पति के अन्दर यदि हम पृथ्वी को डालें तो कम–से–कम 1500 पृथ्वियाँ बृहस्पति में समा सकती हैं। हमारी पृथ्वी का एक उपग्रह है जिसे हम चन्द्र कहते हैं। इसी के कारण पृथ्वी में ज्वारभाटा आता है तथा इसी के कारण सूर्य एवं चन्द्रग्रहण मुख्य रूप से होते हैं। पूरे सौर–परिवार में मात्र हमारी पृथ्वी ही ऐसी है जिस पर जीवन है।

5.4 *पृथ्वी का भौतिक स्वरूप*

1	पृथ्वी का व्यासमान– भूमध्यरेखी ध्रुवीय	 12756 किमी0 12714 किमी0
2	अक्ष परिभ्रमण काल	23 घण्टा, 56 मिनट, 04 सेकण्ड
3	कक्षीय परिभ्रमण काल	365.5 दिन
4	सूर्य से दूरी	149600000 किमी0
5	कक्षीय गति	29.8 किमी / सेकेण्ड
6	अक्षीय झुकाव	23.5 अंश
7	पलायन गति	11.2 किमी / सेकेण्ड
8	घनत्व	05.52 (जल की अपेक्षा)
9	पृष्ठीय तापमान	220 सेंटीग्रेड
10	वायुमण्डल के मुख्य अंग– नाइट्रोजन ऑक्सीजन	 78.5 प्रतिशत 21.0 प्रतिशत
11	भूपटल के मुख्य अंग– ऑक्सीजन सिलिकन एल्यूमिनियम	 47 प्रतिशत 28 प्रतिशत 08 प्रतिशत

	लोहक पदार्थ	05 प्रतिशत
12	भूतल का क्षेत्रफल	148326000 वर्ग किमी0
13	भूतल क्षेत्र	29 प्रतिशत
14	जलीय क्षेत्रफल	281740000 वर्ग किमी0
15	जलीय क्षेत्रफल	71 प्रतिशत
16	आयतन	1083208850000 घन किमी0
17	सर्वोच्च पर्वत (एवरेस्ट)	8848 मीटर
18	गहनतम गर्त (प्र.म. मैरीयान)	11033 मीटर
19	परिक्रमण मार्ग की दूरी	96 करोड़ किमी.
20	उपग्रह संख्या	01 (चन्द्र)

5.4.1 भूपटल

पृथ्वी की जिस ऊपरी सतह पर हम अपना व्यवहार करते हैं अर्थात् जिस पर हम मकान बना कर रहते हैं, खाद्य पदार्थ उपजाते हैं, वही भूपटल का ऊपरी भाग है। संक्षेप में कहें तो हम कह सकते हैं कि मिट्टी व शिलाओं से बने पृथ्वी के बाहरी आवरण कोही भूपटल कहते हैं। इसे ही पृथ्वी की पपड़ी भी कहते हैं। सन् 1928 में एफ. डब्ल्यू. क्लार्क और एच.एस. वाशिंगटन ने पृवी के विभिन्न भागों से बहुत से प्रतिदर्श (Samples) एकत्रित किए और उनका रासायनिक विश्लेषण किया। लगभग 5159 विश्लेषणों के आधार पर पृथ्वी की पपड़ी की जो रासायनिक संरचना बताई गई वह निम्नलिखित सारिणी में दिया गया है–

5.4.2 भूपटल में रासायनिक योग

	तत्व	तत्वों के प्रतीक	मात्रा प्रतिशत में
1	ऑक्सीजन	O	46.71
2	सिलिकॉन	Si	27.69
3	एल्युम्यूनियम	Al	08.07
4	लोहा	Fe	05.05
5	कैलसियम	Ca	03.65
6	सोडियम	Na	02.75
7	पोटिशयम	K	02.58
8	मैगनीशियम	Mg	02.08
9	टाइटेनियम	TI	00.62

10	हाइड्रोजन	H	00.14
11	फास्फोरस	P	00.13
12	कार्बन	C	00.094
13	मैगनीज	Mn	00.090
14	गन्धक	S	00.052
15	बेरियम	Ba	00.050
16	विरल तत्व		00.244
		;ksx	100.00

5.4.3 *भूपटल के अणुओं का योग*

	अणु	अणु सूत्र	मात्रा प्रतिशत में
1	सिलिका	SiO2	59.07
2	ऐल्यूमिना	Al2o3	15.22
3	लोहिक आक्साइड	FeO3	03.10
4	लोहस आक्साइड	FeO2	03.71
5	मैगनीशिया	MgO	03.45
6	कैलसियम आक्साइड	CaO	05.10
7	सोडियम आक्साइड	Na2O	03.71
8	पोटेशियम आक्साइड	K2O	03.11
9	हाईड्रोजन आक्साइड	H2O	01.30
10	कार्बन–डाईआक्साइड	CO2	00.35
11	टाइटेनियम आक्साइड	TiO2	01.03
12	फासफोरस आक्साइड	P2O2	00.30
13	मैगनीज डाईआक्साइड	MnO2	00.11
14	जिरकॉन आक्साइड	ZrO2	00.04
15	बोरियम आक्साइड	BaO	0.05
16	स्ट्राशियम आक्साइड	SrO	0.02
17	शेष		0.33
		योग	100.00

5.4.4 पृथ्वी का अन्तर्भाग

पृथ्वी के गर्भ में क्या है? वहाँ कैसी स्थिति है? इस विषय में बहुत मतमतान्तर हैं। प्रायः पृथ्वी के गर्भ में गर्म पिघला हुआ लावा अधिकतर लोग मानते हैं। वेदों में भी पृथ्वी को अग्निगर्भा कहकर उद्धृत किया

गया है। यथा– ''आग्नेयी पृथिवी'', ''आग्नेयोऽयं लोकः'', ''अग्निगर्भा पृथिवी''। इससे स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में भी यह धारणा थी कि पृथ्वी का गर्भ अग्निवत् है।

पृथ्वी की लगभग 70 किमी0 गहरी एक नरम परत है जिसको हम भूपृष्ठ कहते हैं। महाद्वीप एवं महासागर इसी पृष्ठभाग में स्थित है। भूकम्प जैसी घटनाएँ भी इसी क्षेत्र में होती हैं। इसके नीचे लगभग 700 किमी0 तक गहरी कठोर चट्टानी परत है यही ज्वालामुखी चट्टानें भी विद्यमान रहती हैं। इसके अन्दर 2000 किमी0 मोटी परत प्रायः अंगारे के समान गर्म परत है यह अधिक कठोर नहीं है। इसे भीतर का भाग खौलते हुए लौह आदि धातुओं से भरा है। इसके मध्य में एक ठोस गोलाकार पिण्ड भूकेन्द्र में विद्यमान है जिसे हम सौलिड कोर भी कह सकते हैं।

भूकम्प की लहरों, ज्वालामुखियों, खदानों तथा सछिद्रों के अध्ययनोपरान्त पृथ्वी के अन्तर्भाग के सन्दर्भ में दो मुख्य बातें स्पष्ट होती है। पहली यह कि पृथ्वी के अन्दर गहराई की वृद्धि के साथ ही तापमान की वृद्धि भी होती है तथा दूसरी यह कि गहराई के साथ–साथ घनत्व की बढ़ोतरी भी होती है। पृथ्वी के गर्भ की दशा कैसी है? अन्तर्भाग ठोस है, द्रव है या वायत्व (गैसीय) है–इस विषय में वैज्ञानिकों में मतभेद है। लार्ड कैलविन ने दो अंडे लेकर–जिसमें से एक उबला हुआ तथा दूसरा बिना उबला हुआ था–यह दिखाया कि उबला हुआ अंडा ही घूम सकता है। क्योंकि इसका भीतरी भाग ठोस है। पृथ्वी भी अपनी धुरी पर घूमती है। इसके विपरीत दूसरे वैज्ञानिकों ने यह माना कि पृथ्वी का तरल पदार्थ (लावा) इसका प्रमाण है। कुछ का कहना है कि गहराई में अत्यधिक दबाव विद्यमान है जिसके कारण स्थलीय पदार्थ उच्च तापमान पर होने पर भी ठोस वस्तुओं की तरह ही व्यवहार करते हैं। यदि किसी कारण से दबाव में कमी हो जाए तो ये वस्तुएँ तरल रूप में परिवर्तित हो जाएँगी तथा किसी भी दरार आदि के द्वारा बाहर निकल कर धरातल पर बहने लगेंगी। इसी प्रक्रिया को ज्वालामुखी कहते हैं। अतः कह सकते हैं कि ज्वालामुखी का लावा यह प्रमाणित नहीं करता कि भूगर्भ में तरल पदार्थ है। अभी कुछ वर्ष पूर्व तक भूविशेषज्ञों का कहना था कि *पृथ्वी* का अन्तःकेन्द्र निकलि और लोह का बना हुआ है परन्तु आधुनिकतम रूसी वैज्ञानिकों का कहना है कि यह केन्द्र भाग भी शैल पदार्थों से बना है, परन्तु यहाँ सर्वाधिक दबाव की स्थिति है जिसके कारण पृथ्वी का आन्तरिक घनत्व भी अधिक है। उत्तरोत्तर अनुसंधानों से नित्य–नूतन विचार भी आते रहते हैं।

बोधात्मक प्रश्न –

1. हमारी पृथ्वी का भूमध्यरेखीय व्यास मान

क. 12756 किलोमीटर है

ख.21000 किलोमीटर है

ग. 1200 किलोमीटर है

घ. 1700 किलोमीटर है

2. पृथ्वी भी अपनी धुरी पर घूमती है।

क.सत्य

ख.असत्य

3.*पृथ्वी का* ध्रुवीय व्यास है

क.12714 fdyksehVj gA

ख.1400 fdyksehVj gA

ग.1256 fdyksehVj gA

घ.17430 किलोमीटर है।

5.5 सारांश-

इस इकाई के अन्तर्गत आप ने पृथ्वी के स्वरुप के विषय में सार रूप से पढ़ा, साथ ही आप ने यह भी जाना कि पृथ्वी का स्वरूप कैसा है; सौर- परिवार में पृथ्वी का क्या महत्व है तथा इसके वैज्ञानिक तथ्यों के विषय में भी संक्षिप्त रूप से जाना है |

5. 6 *बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर*

1.क. 12756 किलोमीटर है

2. *क.सत्य*

3. क.12714 fdyksehVj gA

5.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. *पृथ्वी के आंतरिक संरचना को लिखिए*

2. *पृथ्वी के भौतिक स्वरूप को बताएं*

5.8 *संदर्भित पाठ्यग्रन्थ –*

9. सूर्यसिद्धान्त

10.ब्रह्माण्डऔरसौर–परिवार

11.भारतीय ज्योतिष

12.ऋग्वेदसायण भाष्य

5.9 उपयोगी पुस्तक

1. ब्रह्माण्डऔरसौरपरिवार